राष्ट्रीय अधिवेशन अंक

विचार दृष्टि

वर्ष : 5 अंक : 14 जनवरी-मार्च 2003 15 रुपये

- वैचारिक क्रांति के नए आयाम
- राजनीति में बढ़ती सत्ता एंव संपत्ति की लिप्सा
- सामाजिक समरसता एवं सांप्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीय एकता खतरे में
- वैश्वीकरण और आतंकवाद : आज की चुनौती
- बढ़ती आबादी पर अंकुश में युवाओं की भूमिका
- भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति और राष्ट्रीय नीति
- घुटन, ठहरे आँसू - कहानी

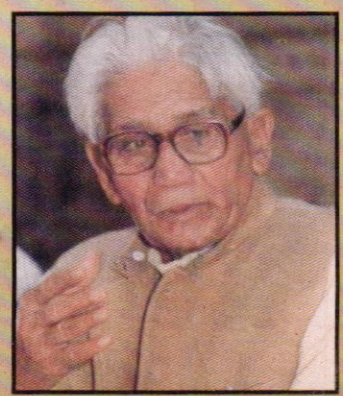

राष्ट्रीय अधिवेशन : बोलते चित्र

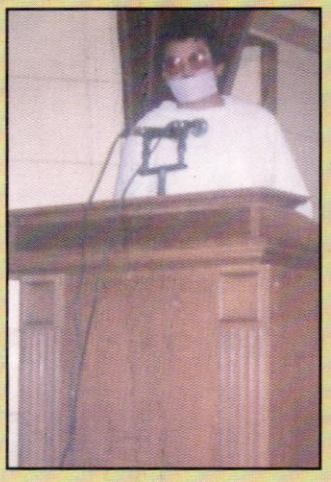

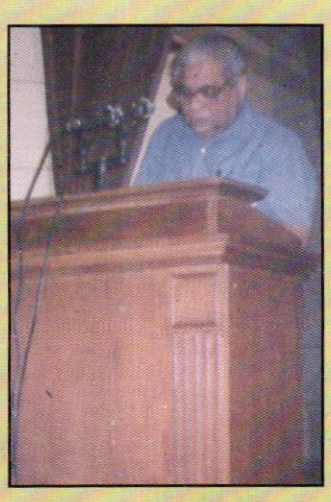

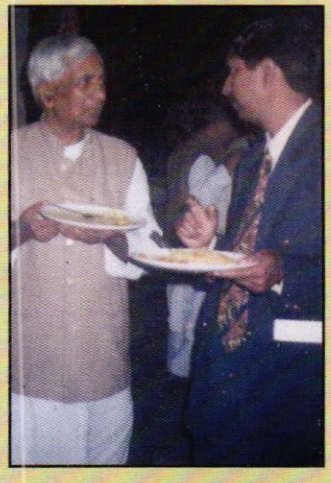

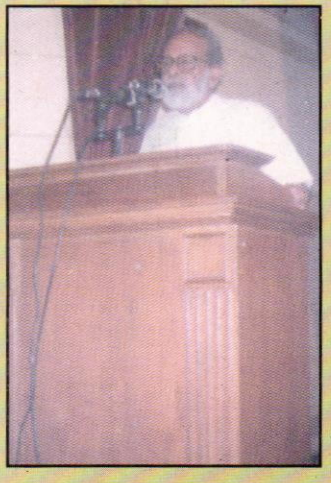

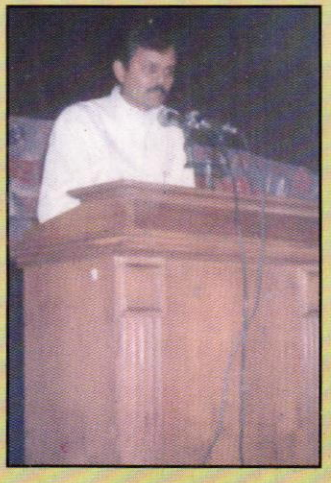

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी)

वर्ष-5 जनवरी-मार्च, 2003 अंक-14

संपादक व प्रकाशक:

सिद्धेश्वर

सहा.संपादक : **मनोज कुमार**

प्रबंध संपादक : **सुधीर रंजन**

संपादन सहायक : **अंजलि**

शब्द संयोजन : **सोलूसंस प्वायंट**

(शशि भूषण, दीपक कुमार)

सज्जा: सुधांशु कुमार

प्रकाशकीय कार्यालय:

'दृष्टि', 6 विचार विहार, यू०-207

शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92

दूरभाष: (011) 22530652

फैक्स: (011)22530652

E-mail vicharbharat@hotmail.com

पटना कार्यालय:

'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1

दूरभाष: 0612-2228519

ब्यूरो प्रमुख

मुम्बई: वीरेन्द्र याज्ञिक ☎ 28897962

कोलकाता: जितेन्द्रधीर ☎ 24692624

चेन्नई: डॉ० मधु धवन ☎26262778

तिरूवनंतपुरम:डॉ०रति सक्सेना ☎2446243

बैंगलूर:पी०एस०चन्द्रशेखर ☎26568867

हैदराबाद: डॉ० ऋषभदेव शर्मा

जयपुर: डॉ० सत्येंद्र चतुर्वेदी☎ 2225676

अहमदाबाद: वीरेंद्र सिंह ठाकुर☎22870167

मुद्रक: प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड

एक्स-47, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया,फेज-2, नई दिल्ली-20

मुख्य वितरक :

कुमार बुक सेन्टर, ए०-67, क्रिश्चन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, नई दिल्ली

दूरभाष: 27666084 (P.P.)

मूल्य: एक प्रति 15 रुपये

द्विवार्षिक: 100 रुपये

आजीवन सदस्य: 1000रुपये

विदेश में:

एक प्रति:US $3, द्विवार्षिक:US $20,

आजीवन: US $250

(पत्रिका-परिवार के सभी सदस्य अवैतनिक हैं।)

रचना और रचनाकार

पाठकीय पन्ना /2

संपादकीय /3

विचार-प्रवाह:

व्यवस्था के खिलाफ बगावत क्यों/5
जी.पी. सिंह आनन्द

साहित्य:

प्रतीकी कवि जी.शंकरकुरुप,रवीन्द्र, पंत/7

कहानी:

घुटन-डॉ. मधु धवन /10

ठहरे आँसू-नय्यर जावेद मलिक/12

व्यंग्य: चप्पल की प्रतिष्ठा/14
डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव

काव्य-कुंज: /15

लोकतंत्र की लाश पर नेताजी का?

सभ्य समाज बनाना है-डॉ.सर्वेश चंद्र

शाश्वत सूनो-कुमार रवीन्द्र

दृष्टि: /18

राजनीति में बढ़ती सत्ता
एवं संपति की लिप्सा

समीक्षा:

"बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ"/20

करुणा का मार्ग दिखलाती

लघुकथाएं/22

शख्सियत: /24

सरदार पटेल: जिनके लिए
देशहित सर्वोपरि- डॉ० पी० दयाल

शिक्षा: /25

शिक्षा पर बढ़ती संकीर्ण राजनीति
की काली छाया-सिद्धेश्वर

राष्ट्रीय अधिवेशन:

सामाजिक समरसता और साम्प्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीयता खतरे में/27

वैश्वीकरण और आतंकवाद: आज की चुनौती /31

बढ़ती आबादी पर अंकुश... /33

भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति...35

अधिवेशन में पारित प्रस्ताव /39

गतिविधियां:

वैचारिक क्रांति की अनुगूँज /40

सरदार पटेल की 127 वीं जयंती : एक रपट /45

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की 118वीं जयंती पर संगोष्ठी : एक रपट /46

आधी आबादी:

हक हासिल करने के लिए महिलाओं को स्वयं आगे आना होगा /47

समाचार-विश्लेषण:

पुलिस बर्बरता की पराकाष्ठा /49

सम्मान: /51

गांव-जवार:

और गरीब हुए बिहार के किसान/53

श्रद्धांजलि: /54

साभार-स्वीकार: /55

राष्ट्रीय अधिवेशन

बिहार बंद

सम्मान

श्रद्धांजलि

पत्रिका-परामर्शी

❑ पद्मश्री डॉ.श्यामसिंह'शशि' ❑प्रो .रामबुझावन सिंह❑श्री गिरीशचंद्र श्रीवास्तव, ❑श्री जियालाल आर्य ❑डॉ० बालशौरि रेड्डी ❑डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी' ❑श्री जे.एन.पी.सिन्हा ❑श्री बाँकेनन्दन प्रसाद सिन्हा ❑प्रो० धर्मेन्द्र नाथ 'अमन'

रचनाकारों के विचारों से पत्रिका-परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं।

पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी

अक्टूबर-दिसंबर 2002 की 'विचार दृष्टि' की प्रति मिली। प्रस्तुत अंक भी अपने परंपरागत प्रतिमान के सर्वथा अनुरूप ही है। आकर्षक नयनाभिराम मुख्य पृष्ठ और अपने कोख में विविध विषयक परम उपयोगी एवं सूचनाप्रद सामग्रियों को सहेज यह अंक पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी बन पड़ा है।

देश दुनिया के समक्ष मुँह बाए ज्वलंत समस्याओं के प्रति आपका मंच एवं आपकी पत्रिका दीवानगी की हद तक सजग है। मंच पर विचारणीय विषयों का चयन और उन पर बहस-मुबाहिसों के लिए उपयुक्त व्यक्तियों का चुनाव आपकी पारखी दृष्टि का परिचय देता है। आपने अपने मंच और उसके मुख-पत्र **विचार दृष्टि** की बड़ी ही विनम्र शुरूआत पटना से की थी और बड़ी ही स्वल्प अवधि में आपके दोनों उद्यम आसमानी सफलता की बुलन्दियों को छूने में आज समर्थ हो सके हैं। इसके पीछे आपकी संकल्पशीलता,दूरदर्शिता और योजनाप्रद रूप से की गई अनवरत मिहनत कार्यरत रही है। समर्पित भाव से कार्य करने की आपकी अकूट क्षमता नमनीय-वंदनीय-अभिनंदनीय है। अजस्र ऊर्जाधारा की सतत् सलिला स्रोतस्विनी आपके हृदय से निकलकर लोगों के विरान पड़े दिलो-दिमागों का जो सिंचित-अभिसिचित कर रही है-वह निरर्थक नहीं है।

परमानंद दोषी, बुद्ध मार्ग, पटना-1

एक दीया ही जलाओ

सरकारी कार्यों में व्यस्त रहने के कारण विचार दृष्टि के राष्ट्रीय अधिवेशन में अपनी भागीदारी नहीं देने का मुझे दु:ख है। आशा है अधिवेशन सफल रहा होगा और धर्म के नाम दिग्भ्रमित सांप्रदायिकता का पहाड़ा पढ़ानेवाले तथाकथित जनसेवी दलों का मुखौटा उघारने में कुछ पहल हुई होगी। नफरत और कट्टरपंथी मानसिकता के विषैले समुद्र में आकंठ डूबे समाज को आपके मंच तथा पत्रिका द्वारा यदि तिनके का भी सहारा मिल सके तो यह उसके उद्देश्यों की पूर्ति की ओर एक सार्थक प्रक्रिया होगी। फिराक ने कहा था, **रात बहुत अंधेरी और उदास है, एक दीया ही जलाओ।** आपकी **विचार दृष्टि** बहुत अंधेरे में डूबे अकेले इंसान के लिए प्रकाश स्तंभ का कार्य कर रही है। बधाई।

गिरीश चंद्र श्रीवास्तव, अहमदाबाद

काव्य-पत्र

सन् दो,मास दिसंबर की पत्रिका हाथ में आई
पढ़ी विचार दृष्टि',संपादक जी को बहुत बधाई
मुख पन्ने पर लौह पुरुष हैं वल्लभ भाई पटेल
ऊपर गाँधी, नीचे शास्त्री जी का है कैसा मेल!
राजनीति में नेताओं का हुआ आचरण भ्रष्ट,
जिसके चलते प्रजा भोगती हर प्रकार का कष्ट।
संपादक ने इस समाज का ध्यान इधर है खींचा
जनता बने जागरुक,भारत जाय स्नेह से सींचा
रिचर्ड कापुसिंस्की का प्रासंगिक लगा विचार
हम बर्बर बन कर भी अपना करते नहीं सुधार।
भारत को भारत रहने दो, त्यागो माल विदेशी
श्री चेतन 'राजेश',देश की संस्कृति के अंवेषी।
डॉ.रमाशंकर जी करते हैं जे. पी. की याद
क्रांति दूत आजाद देश को फिर करते आजाद
लौह पुरुष के लिए राष्ट्र ही था अपना सर्वस्व
के.के.सिंह की कलम दिखाती है अपना वर्चस्व
लाल बहादुर शास्त्री पले गरीबी के ही बीच
जन्मभूमि को अपनी बलि दे,दिया जिन्होंने सींच
डॉ. वैद्यनाथ शर्मा जी का है उत्प्रेरक यह लेख
कर्दम जी नारी उत्पीड़न का हैं करते उल्लेख।
अणुव्रत पर उद्बोधन करते हैं मुनिश्री 'लोकेश'
उनकी कविताओं से उद्वेलित हैं कवि 'योगेश'
पूर्ण देश की रही सूचनाओं की भी भरमार
सिद्धेश्वर जी को बधाइयाँ देता हूँ मैं सौ बार
जिन्होंने संपूर्ण देश को एक सूत्र में बाँधा
दिल्ली में जाकर हिंदी के परम लक्ष्य को साधा
मेरे पास 'विचार दृष्टि' की प्रति भी भेजें आप
रचनाएं भी दूँगा, देंगे पत्र काव्यमय छाप।

-डॉ. योगेश्वर प्र. सिंह 'योगेश'
ग्राम-नीरपुर,पो.-अथमलगोला, पटना

महत्वकांक्षा एवं स्वप्न जरूरी

अंक-13 में प्रकाशित प्राय: सभी रचनाओं में व्यक्त विचार हमारे मानस-पटल पर रेखांकित हो गए। सचमुच मानसिक दारिद्रय किसी व्यक्ति को हीनभावना की चट्टान तले दबाकर पस्त हिम्मत बना देता है। महत्वाकांक्षा और बिना कोई स्वप्न के व्यक्ति प्रगति की बात सोच ही नहीं सकता। संपादकीय बेजोड़ है,जो भारतीय लोकतंत्र के मतदाताओं को अपने प्रतिनिधियों के काले कारनामें और उनके मनसूबे पर एक नजर डालने के लिए मजबूर करता है। पत्रिका अपने सफर में कामयाबी हासिल करती रहे, इसी कामना के साथ मैं संपादक की धारदार कलम को हार्दिक बधाई देता हूँ।

गौतम राणे 'रत्नेश', घाटकोपर, मुंबई

जरा इनकी भी सुनें

जबतक संपन्न वर्गों से अधिक फीस नहीं वसूली जाएगी, तबतक गरीबों को गुणपरक और श्रेष्ठ शिक्षा कैसे मुहैया कराई जा सकेगी।

- अटल बिहारी वाजपेयी

जम्मू-कश्मीर में आतंकियों की आम रिहाई नहीं की जाएगी।

-लालकृष्ण आडवाणी

भारत एक इंच भी आगे बढ़ता तो परमाणु अस्त्र दागता।

-पाक राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ

प्रवासी भारतीय मीडिया हमारी समझ और संवेदना के अनुरूप चिचार शैली विकसित करे तथा भारतीयों के बारे में भ्रांतियां दूर करे।

-सूचना एवं प्रसारण मंत्री सुषमा स्वराज

गुजरात की हार से हम बिल्कुल भी परेशान नहीं हैं।

-कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी

सरकार घटना के दोषियों के खिलाफ कार्रवाई कर रही है तो आंदोलन का क्या मतलब।

-राजद अध्यक्ष लालू प्रसाद

पाकिस्तान द्वारा परमाणु हमला करने पर भारत की क्षति कम होगी लेकिन भारत पलटवार करेगा तो पाकिस्तान नक्शे पर नहीं रहेगा।

-रक्षा मंत्री जार्ज फर्नांडीस

प्रत्येक फिल्म एक कला होती है।इसलिए फिल्मों को कामर्शियल व आर्ट फिल्मों की श्रेणी में बांटना बेमानी है।

-सिने तारिका ऐश्वर्या राय

आजादी के बाद वैचारिक क्रांति के नए आयाम और हमारा दायित्व

आजादी के पूर्व प्रत्येक देशवासी के दिलोदिमाग में सिर्फ एक ही धुन सवार था कि देश को अंग्रेजों के चंगुल से कैसे छुटकारा दिलाया जाए। जिस प्रकार आजादी हासिल करने की अवधि में संचार माध्यमों, लेखकों, चिंतकों, विचारकों व दार्शनिकों ने अपने विचारों को लेखन के माध्यम से जन-जागरण अभियान में योगदान किया उसी प्रकार आजादी के पश्चात् आज वैचारिक क्रांति को नया आयाम देने की सर्वाधिक आवश्यकता महसूस की जा रही है और इसका दायित्व पुनः संचार माध्यमों, लेखकों व विचारकों के कंधों पर टिका है।

विश्व इतिहास गवाह है कि वैचारिक क्रांति अन्याय, शोषण, पूंजीवाद, सामंतवाद के विरुद्ध एक हवाई हमला है और क्रांति के लिए यह आवश्यक है। फ्रांस-क्रांति, रूसी-क्रांति एवं चीन की क्रांति इसके उदाहरण हैं। भारत में जहाँ पूंजीवाद अपने में सभी प्रकार के अत्याचार, अन्याय व शोषण समेटे है, देशी-विदेशी पूंजीपति देश की अधिकांश जनता को चिथड़ों में लाने को प्रतिबद्ध हैं, ऐसे में यदि लेखन के माध्यम से उनकी गतिविधियों में हस्तक्षेप नहीं किया गया और उनकी चाटूकारिता करनेवाले झूठ को सच बनाने की कोशिश करते रहे तो सच मानिए स्थिति इतनी भयावह हो जाएगी कि चाहकर भी आप संभाल नहीं पाएंगे। देश में लेखक, पत्रकार, दार्शनिक, विचारक एवं चिंतन ही क्रांति को अवश्यंभावी बना सकते हैं, इस देश की विशालता और परंपराएं यही दर्शाती है। वे ही जनमत के माध्यम से सच्चे मजदूर, किसान और नौजवान तैयार कर सकते हैं। जनमत बनानेवाले कुछ ही लोग होते हैं। बाकी जनता उनके पीछे चलती है। किन्तु तकलीफ का मामला यह है कि बौद्धिक वर्ग आज के हालात पर तटस्थ है और देश की ज्वलंत समस्याओं पर हस्तक्षेप को निरर्थक सा मान लिया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे जनमानस से कटकर इतने विकल्पहीन हो चुके हैं कि सब कुछ नियति और यथास्थिति पर छोड़ बैठे हैं।

इस देश में जातिवाद, संप्रदायवाद, क्षेत्रवाद तथा भाषावाद का चेहरा अधिक कुत्सित होता जा रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देश के हर गली-मोहल्ले, घर-दफ्तर व ग्राम पंचायतों से लेकर संसद तक अधिकतर राजनेताओं एवं भ्रष्ट अधिकारियों-कर्मचारियों में जाति के आधार पर दरारें उभरी हुई हैं, जिसे उनके मुंह से निकले जातिवाद के जहर को स्पष्ट देखा जा सकता है। आजादी के पचपन वर्षों बाद भी अंग्रेजों से विरासत में मिली भेद-भाव की कुसंस्कृति की दासता का चोला उतार फेंकने में हम अपने आपको सक्षम नहीं हो पा रहे हैं। साहित्य का सत्ता से जुड़ने के कारण जातिवाद, वर्ग-विभेद और सामाजिक आयामों के विरूद्ध खड़े न होकर बुद्धिजीवी वर्ग ने एक ऐसा नैराश्य उत्पन्न किया है जो मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था को डिगानेवाला है। संप्रदाय के ठेकेदारों ने संप्रदाय के मूल उद्येश्यों को धत्ता बताकर कुप्रवृतियों को जन्म दिया है। ऐसी विषम परिस्थिति में जरूरत है सत् की शक्तियों को संगठित करने की ताकि समाज व देश को एक नई दिशा दी जा सके। यह काम लेखकों, पत्रकारों व दार्शनिकों द्वारा ही किया जा सकता है।

सभी जानते हैं कि आज देश बेहद निकृष्ट आतंकवाद का निशाना बना हुआ है। इसके चलते न केवल हजारों मासूमों व निर्दोषों को जीवन से हाथ धोना पड़ रहा है, बल्कि भारी संपत्ति का नुकसान भी हो रहा है। इसी प्रकार वैश्वीकरण के दौर में नई आर्थिक नीतियों के कारण संपूर्ण देश में स्वाभाविक आर्थिक विकास का मार्ग अवरूद्ध होता जा रहा है। रोजगार सृजन पर ताला लग चुका है। जीविकोपार्जन के रास्ते बंद हो चुके हैं। कृषि और उद्योग क्षेत्रों में हाहाकार मचा हुआ है। वैचारिक क्रांति के इस नए आयाम को रचनाकारों द्वारा अपने लेखन में समेटने की आवश्यकता है।

जब देश में हर आदमी गलत काम कर रहा हो, प्रवृत्ति सुविधाभोगी हो गयी हो, लोकतंत्र की ओट में निरंकुश भीड़तंत्र की हुकूमत हो, ऊँची कुर्सियों पर बैठे लोगों के हाथ में कानून हो, प्रशासनिक अधिकारी अपना कर्तव्य भूल गए हों, पूरा प्रशासन सिर से पांव तक आकंठ भ्रष्टाचार में डूब गया हो तथा जनता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी हो तो खूनी क्रांति नहीं, वैचारिक क्रांति जरूरी हो जाती है। लोगों के सोचने का ढंग, विचार करने का ढंग, अन्याय के खिलाफ लड़ने की लचर प्रणाली को बदलने की क्षमता यदि किसी में है तो वह है प्रबुद्धवर्ग चाहे वे कॉलेज व विश्वविद्यालय के विचारवान छात्र-समुदाय हों या प्राध्यापक, मीडिया के प्रबुद्ध पत्रकार हों या लेखक, सच की लड़ाई लड़नेवाले वे ही हैं।

आज हमारे समाज व देश में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो स्थिति को भलिभांति समझते हैं और जिनके सक्रिय हस्तक्षेप से व्यापक फेरबदल की गुंजाइश भी है। जरूरत केवल इस बात की है कि वे नकली बौद्धिक कुहासेवाले खोल से बाहर आएं। खेद है कि जो 20वीं सदी समाज और देश को बदलने और बेहतर बनानेवाली विचारधाराओं को लेकर प्रकट हुई

थी, उसी ने विचारधारा की समाप्ति भी की। विचारधारा की समाप्ति के पश्चात् आज विचारणीय केवल यह रह गया है कि कैसे ज्यादा से ज्यादा लोगों को खुश और कम से कम लोगों को नाराज किया जाए। यानी वोट पाने का जुगाड़ करना अपनी विचारधारा को व्यावहारिक रूप देने से कहीं ज्यादा जरूरी है। विश्वास मानिए विकासशील भारत की स्थिति आज यह है कि सत्तारूढ़ हुकमरान उन नीतियों तक को लागू करने में असमर्थ हैं जिनका सिद्धांत के स्तर पर व्यापक अनुमोदन किया जा चुका है। उदाहरण के तौर पर हम बढ़ती जनसंख्या को लें। सभी राजनीतिक दल इस बात पर सहमत हैं कि बढ़ती आबादी हमारी भयंकरतम समस्या है। लेकिन बढ़ती आबादी पर रोक लगाने या कोई भी ठोस कदम उठा सकना भी किसी भी दल के बस की बात नहीं है क्योंकि सिद्धांत रूप में सभी के सहमत होते हुए भी व्यवहार में सभी विरोधी हो जाते हैं। कोई धर्म के नाम पर, कोई संप्रदाय के नाम पर, कोई मानवीयता के नाम पर तो कोई व्यक्ति-स्वतंत्रता के नाम पर।

कभी भाषा ने ही लोकतंत्र की डगर दिखाई थी। आज हमें भाषा ही भटका और संशय में डाल रही है। उत्तर और दक्षिण के बीच भाषा को लेकर आज भी खाई बनी हुई है, जिसकी भरपाई हर हाल में राष्ट्रीय एकता को बरकरार रखने के लिए हमें करनी है। लोकतंत्र में भले ही लोग लगातार धकियाए जाते रहें, आपसी घृणा और निंदा के बीच परस्पर उलझते रहें लेकिन, फिर उनमें एक दूसरे के प्रति कहीं अधिक सहिष्णुता और संवेदना बनी रहती है। विषम परिस्थिति तथा विचार-शुन्यता की ऐसी घड़ी में अन्याय, शोषण और भ्रष्टाचार के विरूद्ध वैचारिक क्रांति आवश्यक है क्योंकि यही लोगों को जाग्रत कर आचार क्रांति ला सकती है। कुछ इसी भाव से प्रेरित होकर 'विचार दृष्टि' और उसके वैचारिक मंच द्वारा राष्ट्रीय राजधानी नई दिल्ली में विगत 16 एवं 17 नवंबर, 2002 को 'आजादी के बाद वैचारिक क्रांति के नए आयाम और हमारा दायित्व' विषय को केंद्र में रखकर दो दिवसीय राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन किया गया जिसमें देश-विदेश से आमंत्रित चिंतकों एवं लेखकों द्वारा कई सत्रों में देश के निम्नलिखित ज्वलंत मुद्दों पर सार्थक विचार-विमर्श हुए।

1. सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीय एकता खतरे में 2. वैश्वीकरण और आतंकवाद: आज की चुनौती 3.बढ़ती आबादी पर अंकुश में युवाओं की भूमिका 4.भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति और राष्ट्रीय नीति।

इन मुद्दों पर प्रबुद्ध रचनाकारों द्वारा अधिवेशन के पटल पर व्यक्त विचारों और कई चिंतकों व विचारकों से प्राप्त सारगर्भित एवं तथ्य परक आलेखों के सारांश का समावेश इस अंक में किया गया है। अधिवेशन के पटल पर देश के तीन विचारवान हस्ताक्षरों को **विचाररत्न**, **विचारभूषण** एवं **विचारश्री** पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अधिवेशन के पटल पर व्यक्त विचारों को एक जनांदोलन में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाएगा, जिससे कि राष्ट्रीय चेतना का निर्माण हो सके।

'विचार दृष्टि' अब पाँचवें वर्ष में

राष्ट्रीय चेतना की इस वैचारिक त्रैमासिकी 'विचार दृष्टि' ने अपनी यात्रा के चार वर्ष पूरी कर पाँचवें वर्ष में प्रवेश किया है। इस चार वर्ष के सफर में इसने कई उतार-चढ़ाव देखे किंतु आप पाठकों-लेखकों के सहयोग से इसने यह सफर सफलतापूर्वक तय की। क्योंकि व्यवसायिकता के इस दौर में भी इस पत्रिका ने अपने पाठकों के समक्ष स्तरहीन एवं मशालेदार सामग्रियों को न परोसकर रचनाओं के चयन में भी उसकी गुणवत्ता एवं निष्पक्षता का ख्याल रखते हुए संतुलन बनाए रखा। साथ ही शोषण और संघर्ष, दु:ख-दर्द और दमन, बढ़ती आबादी, महिलाओं पर अत्याचार, आतंकवाद, जातिवाद, संप्रदायवाद और जीवन-मूल्य-मर्यादाओं के अवमूल्यन के खिलाफ आम आदमी को वाणी देने की अपनी प्रतिबद्धता पर यह अडिग रही। पिछले दिनों दिल्ली में आयोजित राष्ट्रीय अधिवेशन इसका साक्षी है।

वैचारिक अकाल बेला में 'विचार दृष्टि' जैसी साधनहीन-पत्रिका का अनवरत प्रकाशन इस बात का परिचायक है कि परिवर्तन और वैचारिक एकनिष्ठा के प्रति इसके संचालक आस्थावान हैं। यही नहीं बल्कि वैयक्तिक-पारिवारिक जीवन से लेकर आज के सामाजिक-राजनीतिक परिवेश तक में नैतिक अध:पतन तथा राष्ट्रीयता की भावना में हो रहे ह्रास की घड़ी में यह पत्रिका अपनी धारदार रचनाओं द्वारा नैतिक एवं राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करने में निरंतर प्रयासरत है। यही कारण है कि लेखकों-पाठकों का विश्वास हम प्राप्त कर सके हैं। विश्वसनीयता ही इसकी पहचान है और यही विश्वास हमारी सफलता की असली पूंजी। अपने उद्येश्यों के प्रति प्रतिबद्धता के इन चार वर्षों में हमें संपादक-मंडल के सदस्यों, लेखकों, विज्ञापनदाताओं, राष्ट्रीय विचार मंच के पदाधिकारियों एवं परिवार के सभी सदस्यों का जो सराहणीय सहयोग मिला हम उन सभी के प्रति आभार व्यक्त करते हुए यह अपेक्षा रखते हैं कि भविष्य में भी उनका यह सहयोग हर परिस्थिति में बरकरार रहेगा। अपने सभी शुभेच्छुओं को कोटिश: धन्यवाद और नववर्ष पर हार्दिक बधाई।

व्यवस्था के खिलाफ बगावत क्यों ?

❑ जी०पी०सिंह आनन्द

व्यवस्था के खिलाफ बगावत की कहानी मनुष्य की सृष्टि के साथ ही प्रारंभ हो चुकी थी। पर्वतों को तोड़कर सड़कों पर बिछानेवाला तथा वृक्षों को काटकर महलों को सजानेवाला मानव अपने वर्चस्व को कायम करने हेतु प्राचीन काल में ही मनुवादी सोच का आश्रय लेकर प्राकृतिक व्यवस्था के खिलाफ बगावत की कहानी का सूत्रपात कर डाला था। बाद के दिनों में नैतिक मूल्यों की रक्षा, कमजोर शासन-व्यवस्था के परिवर्त्तन, शोषण के विरूद्ध पीड़ित वर्ग को एकजुट करने तथा सामाजिक विषमता को दूर कर उसके उत्थान हेतु तत्कालीन व्यवस्था के खिलाफ इंकलाब किए गए।

हिन्दुस्तान में अंग्रेजी शासन- व्यवस्था काबिज होने के बाद बहुत मजबूत दमनात्मक शासन-व्यवस्था अस्तित्व में आई जिसके खिलाफ बगावत की बुलंद आवाज जब-जब सुनाई पड़ती रही, मजबूत शिकंजे में दबकर इंकलाबी मजबूत और शिथिल होते चले गए। परन्तु, एक समय ऐसा आया कि इस शासन-व्यवस्था से तंग आकर शबनम शोले बन गए, नारी चिनगारी बन गई तथा वीर क्रांति के लिए अधीर हो उठे। दुनियाँ जानती है कि बगावत की बुनियाद पर दमन एवं साम्राज्यवाद के अंत का भारत में ऐसा इतिहास रचा गया जो बाद के दिनों में समग्र विश्व के लिए अनुकरणीय सिद्ध हुआ।

बेशुमार विभूतियाँ खोने की कीमत पर स्वाधीन हुए भारत ने विश्व-बिरादरी के समक्ष एक प्रभुत्वसम्पन्न प्रजातंत्रात्मक गणराज्य के रूप में अपनी पहचान रखी। देश के समूचित संचालन के लिए एक संविधान बना, बड़े-बड़े वायदे किए गए किन्तु बड़े-बड़े भ्रष्टाचार भी पनपे। यहीं से शुरू हुई एकबार फिर नए सिरे से व्यवस्था के खिलाफ बगावत की कहानी।

अब तक इस गणराज्य में कितनी सरकारें बनती रहीं, मिटती रहीं, किन्तु व्यवस्था के खिलाफ बगावत की कहानी ने कहीं विराम नहीं लिया। अब स्थिति यह है कि उच्च एवं जिम्मेदार पदों पर भ्रष्टाचार एवं दमनात्मक प्रवृत्ति में लिप्त सरकारी मुलाजिम देश के भविष्य को गुमराह कर रहे हैं, शर्मसार कर रहे हैं। देश के सुन्दर भविष्य की योजना बनानेवाले इन सरकारी तानाशाहों के लिए रिश्वत लेना भ्रष्टाचार नहीं, शिष्टाचार बन गया है।

जहाँ देश के विकास हेतु बनाई गई योजनाओं को आवाम् तक पहुँचाने के लिए जिम्मेवार भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी भ्रष्टाचार एवं अन्य अवांछित आरोपों में बर्खास्त किए जाते हों; भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारी, जिनपर देशवासियों की सुरक्षा की जिम्मेवारी हो, कत्ल के इल्जाम में बर्खास्त होकर जेल की सलाखों की पीछे नजर आते हों, ऐसी स्थिति में भ्रष्टाचारियों एवं कातिलों की पंक्ति में खड़े इन अधिकारियों से क्या उम्मीद की जा सकती है?

नई नई योजनाओं को कागज पर प्रारंभ कर कागज पर ही समाप्त कर देने तक का सफर तय करने वाले इस देश में चारों ओर अराजकता व्याप्त है। जो जहाँ है, वहीं लूट रहा है। पूरे देश के अन्दर सड़क-मार्ग के रख रखाव पर अरबों रुपये खर्च किए जाते हैं, किन्तु ये सब महज कागजी हैं। सच तो यह है कि सड़क के कंकड़ अब अलकतरे को मुहताज बैठे हैं और राहगीर पक्की सड़कों पर पगडंडी तलाश कर चलते हैं। इसी तरह रेल मार्ग की पटरियों की सलामती पर अरबों रुपये खर्च दिखाए जाते हैं, किन्तु सच यह है कि राजधानी की दुघर्टना ने इसका भी पोल खोल दिया है।

प्राण-दान देनेवाले निरोगधाम यानि भारत के अस्पतालों की स्थिति यह है कि वहाँ मुफ्त मिलनेवाली प्राणरक्षक दवाइयाँ बाजार की दुकानों में बिक रही होती हैं। चिकित्सक महोदय विभागीय उच्चाधिकारियों के गले में चाँदी के जूतों की माला पहनाकर अपने निजी क्लिनिक में जिन्दगी और मौत से जूझते मरीजों के रक्त चूसते नजर आते हैं। पैसे की भूख ने इन्हें इतना अंधा बना डाला है कि शल्य-क्रिया के दौरान कभी पेट के अन्दर कैंची छोड़ आते हैं तो कभी दाँत के बदले जबड़ा ही उखाड़ डालते हैं।

कहा जाता है कि देश यदि पुष्प है तो वहाँ के निवासियों का शिक्षित होना उसकी खुशबू है, किन्तु देश के अन्दर बड़े पैमाने पर शिक्षा मंत्रालय और विभागों में भ्रष्टाचार व्याप्त है जिसके सुधार के लिए किए गए प्रयास कागज पर अवश्य हुए, स्थल पर किसी ने नहीं देखा। हैरान कर देनेवाली बात यह है कि सर्व शिक्षा अभियान के निमित्त बिहार राज्य पाठ्य पुस्तक निगम द्वारा बच्चों के ज्ञान हेतु जिस पुस्तक का प्रकाशन किया गया है उसमें भारत के मानचित्र से नागालैंड, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा, पांडीचेरी, गोवा, झारखंड, उत्तरांचल, छत्तीसगढ़ आदि राज्य गायब हैं। इससे इतर, बेहतर शिक्षा के लिए आयोग के गठन होते रहे तथा पाठ्यक्रम को न्यायालय में घसीटे जाते रहे किन्तु नतीजा ढाक के तीन पात। कई प्रांतों की स्थिति तो इतनी शर्मनाक है कि विभागीय मंत्री एवं उच्चाधिकारी स्थानान्तरण और निलंबन-उद्योग चलाने में मस्त हैं तो वहीं प्रमंडल एवं जिला स्तर के अधिकारी प्रतिनियोजन-उद्योग से ही काम चला रहे हैं। इन अधिकारियों ने शैक्षिक विकास की चिंता छोड़ अपनी सारी बुद्धि पैसे कमाने में लगा दी है। सभी संचिकाओं में छिद्र खोजना और फिर तानाशाह की तरह अपने मातहत कर्मचारियों का भयादोहन कर उस छिद्र में पैसे ढूँढ़ना इनका एक मात्र लक्ष्य रह गया है। आज स्थिति यह है कि भ्रष्टाचार और विभिन्न अनियमितताओं के आरोप में मंत्री को हटाए जाने से लेकर निदेशक, उपनिदेशक एवं अन्य अधिकारी तक निलम्बित और बर्खास्त होकर जेल भी जाते रहे हैं।

न्यायालयों की स्थिति इतनी दयनीय है कि न्यायिक मामलों में ऊपरी हस्तक्षेप एवं दबाव के आगे न्यायाधीश महोदय बेचारे बन चुके हैं। देश के उच्च पदस्थ अधिकारी न्यायालय के आदेश को "हवा में आदेश देना" कहकर अवमानना करने से हिचकते नहीं।

सामाजिक मूल्यों एवं विभिन्न स्तर पर व्यवस्था में गिरावट के लिए मीडिया भी कलंक से अछूता नहीं है। कहना न होगा कि किसी देश की दशा एवं दिशा तय करने में मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, किन्तु अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं में हत्या, बलात्कार, लूटपाट आदि समाज के कमजोर पक्ष तथा अन्य अनेक शर्मनाक घटनाओं को अधिक ऊँचाई पर उछालकर अल्पवयस्क नई पीढ़ी को कोमल तंतुओं में कालकूट भरे जा रहे हैं जबकि मीडिया से जुड़े लोगों को अपनी गुरूता का बोध होना चाहिए तथा वतन को शर्मसार कर देनेवाले क्रियाकलापों पर पर्दा डालकर संस्कृति की रक्षा करनी चाहिए एवं रचनात्मक समाचार-प्रेषण की ओर अधिक ध्यान देकर देश के बेहतर भविष्य के लिए प्रयास करना चाहिए। परन्तु, पत्रकारों की बाढ़ एवं व्यावसायिकता की अंधी दौड़ ने वतन के अस्मत को लूटा है।

पिछले कुछ दशक से देश घोटाले-दर-घोटाले से आक्रांत होता जा रहा है। देश के दामन को दागदार करता बोफोर्स तोप घोटाला, चारा घोटाला, अलकतरा घोटला, डिग्री घोटाला, मेधा घोटाला, चीनी घोटाला, पेट्रोल पम्प घोटाला आदि से तंग आकर व्यवस्था से बगावत करने के लिए मजबूरन निजी सेनाओं को जन्म लेना पड़ा है। आज की तारीख में पूरे देश के अन्दर निजी सेनाओं की बढ़ती सक्रियता के सामने कानून-व्यवस्था चरमरा गई है। एक प्रांत विशेष की स्थिति तो इतनी नाजुक है कि अड़तीस में से अट्ठाईस जिलों में निजी सेनाएँ समानान्तर सरकार चला रही हैं। व्यवस्था की काली कोख से जन्म लेनेवाली भूमि सेना, ब्रह्मर्षि सेना, कुंवर सेना, लोरिक सेना, सनलाइट सेना, रणवीर सेना, लाल सेना आदि आज विस्फोटक स्थिति में हैं। देश के अन्दर व्यवस्था के खिलाफ तरह तरह के नारों की अनुगूँज सुनाई पड़ रही है। "मेरा भारत महान, सौ में से निन्यानबे बेईमान"; जो जितना भ्रष्ट, वो उतना काबिल,"; सच कहना यदि बगावत है तो समझो हम भी बागी हैं," "बन्द करो ये भ्रष्टाचार, नहीं तो देगें गर्दा झाड़," आदि ज्वालामुखी उद्वेग को विस्फोट से पहले समझना होगा।

देश की अधिसंख्य जनता की मेरूदण्ड मरोड़ता यह भ्रष्टाचार स्वभावत: ऊपर से नीचे की ओर आता है, किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि इसे जड़ से समाप्त करने की योजना को नीचे के स्तर से प्रारंभ की जाती है। कुछ उपवादों को छोड़कर एक तरफ राजनेताओं के ऐश-ओ-आराम, अफसरशाही और लूट मची है, वहीं दूसरी ओर भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, चिकित्सा एवं सुरक्षा के लिए हाहाकार मचा हुआ है। जहाँ कामचोर कर्त्तव्य का बोध कराए, भ्रष्ट ईमानदारी का पाठ पढ़ाए तथा पुलिस सरकारी डाकू बन जाए, वहाँ व्यवस्था के खिलाफ बगावत तो होगा ही।

आज पूरे देश में व्याप्त पात्रता संकट के इस संक्रमण काल में दृष्टिकोण एवं आचरण में पर्याप्त सुधार करने, मुँह में कालिख पुतने के पहले सत्य से साक्षात्कार करने का साहस जुटाने तथा किश्तों में नहीं, बल्कि व्यवस्था एवं व्यवस्थापक में एकमुश्त बदलाव की जरूरत है।

संपर्क: द्वारा ज्ञानेन्द्र नारायण सिंह
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

हिंदी में डिक्टेशन लेनेवाला पहला सॉफ्टवेयर

हरियाणा के एक छोटे से शहर सोनीपत के एक युवा इंजीनियर अनिल अग्रवाल ने भारत में पहली बार एक ऐसा सॉफ्टवेयर विकसित किया है जो हिंदी में बोले गए वाक्यों को कम्प्यूटर में लिखित रूप से रिकार्ड कर सकता है तथा सॉफ्टवेयर के जरिए कम्प्यूटर को हिंदी में कमांड भी दिए जा सकते हैं।

'हिंदी डिक्टेशन पीसी कंट्रोल' नाम का यह सॉफ्टवेयर कीबोर्ड से टाइप किए बिना माइक्रोफोन के जरिए बोले गए वाक्यों का सॉफ्टवेयर में दर्ज कर सकता है। जिन लोगों को घंटों तक कम्प्यूटर पर टाइपिंग का काम करना पड़ता है उनके लिए यह बेहद उपयोगी है। इसमें करीब 3 लाख हिंदी शब्दों और नामों का डेटाबेस मौजूद है तथा आवश्यकतानुसार दस हजार शब्द और डाले जा सकते हैं।

प्रस्तुति: शशि भूषण, दिल्ली

स्पष्टीकरण

नटराज प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित मॉरीशस के डॉ० हेमराज सुन्दर के काव्य-संग्रह 'अस्वीकृति में उठे हाथ' की 'विचार दृष्टि' के कम्प्यूटर में कैद सभी कविताओं में से दो क्रांतिकारी कविताएं उसकी श्रेष्ठता के मद्दे नजर 'विचार दृष्टि' के जुलाई-सितंबर 2002 अंक-12 के पृष्ठ 21 पर अपने सुधी पाठकों को एक स्वस्थ मानसिक खुराक प्रदान करने के ख्याल से प्रकाशित की गई। इस अंक की प्रति पत्रिका के विद्वान परामर्शी पदम्श्री डॉ० श्याम सिंह शशि को भेजने के पश्चात् यह प्रकाश में आया कि डॉ० शशि की पाँच कविताओं को डॉ० हेमराज सुन्दर ने गलती से अपने उपर्यक्त काव्य-संग्रह में सम्मिलित कर लिया है जिसके लिए उन्होंने डॉ० शशि से क्षमा मांगी है। डॉ० शशि से इस आशय का एक पत्र प्राप्त होने के पश्चात् पाठकों की जानकारी के लिए यह स्पष्टीकरण यहाँ प्रस्तुत है।

संपादक

प्रतीकी कवि जी० शंकर कुरूपः कवीन्द्र रवीन्द्रः पंतः

❑डॉ०एन०चन्द्रशेखरन नायर

जी० शंकर कुरूप और सुमित्रानन्दन पंत के दार्शनिक भावों की अभिव्यक्ति में रवीन्द्र नाथ टैगोर, शेली और कीट्स के प्रभाव लक्षित होंगे। अभिव्यक्ति एवं सौन्दर्य-दृष्टि की दिशा में अंग्रेजी कवियों का प्रभाव इन पर पड़ा है। दर्शन का प्रभाव अधिक मात्रा में टैगोर और उपनिषदों से पड़ा है। स्वयं टैगोर उननिषदों से प्रभावित दीख पड़ते हैं। "औपनिषदिक संस्कार से रवीन्द्र नाथ टैगोर का तादात्म्य हो गया है। उनके लिए प्रकृति मानव जीवन का जड़ वातावरण नहीं है। उन्होंने प्रकृति के ऐक्स से प्राप्त अपूर्व हर्ष को 'गीतांजलि' के अनेक गीतों द्वारा प्रस्तुत किया है और उन्होंने अपना यह अनुभव भी प्रकट किया है कि प्रकृति और उनमें एक ही चेतना का प्रवाह होता है। संसार का प्रत्येक स्पंदन सार्थक है; हर एक वर्ण और शब्द भाव्यंजन है; सनातन जीवन-सत्य का आहवान है। वे सत्यप्रज्ञ चाहते हैं कि प्रकृति को उनके समग्र भावों के साथ ही अपने भीतर समाहित कर लूं और अपने हृदय के स्पन्दन से प्रकृति की शिराओं को नवोन्मेष प्रदान कर दूं।" (शंकर कुरूप - मुत्तु चिप्पियुं - पृ-70) कवीन्द्र के संबंध में कुरुप का कथन है यह। भारत के पराधीन वातावरण में पले हुए कवि की आत्मा हमेशा स्वातंत्र्य की कामना में तल्लीन रही थी। उनके सम्मुख प्रकृति अत्यंत तेजोदीप्त रही थी। "वर्तमान युग में जिन दो महापुरुषों ने अपनी विराट् प्रतिभा एवं साधना द्वारा भारत को संसार के देशों के साथ ग्रथित किया है, पृथ्वी का नूतन प्रकाश प्रदान किया है, इसके वह प्रमाण थे। भारत की चिम्मयी सत्ता की, अखण्डता की, वह वाणी-मूर्ति थे। भारतीय जाति की प्राणशक्ति, उनके समान, महामानव की मूर्ति में प्रकाशमान हुई थी और अपनी समुज्ज्वल प्रभा द्वारा जातीय जीवन भास्वर एवं समुल्लसित कर गई थी।" (रवीन्द्र नाथ ठाकुर-व्यक्तित्व और कृतित्व - प्रो० जगन्नाथ प्रसाद मिश्र पृ० 38)

रवीन्द्र का सौन्दर्य-बोध प्रार्थिव से जुड़ा रहता है और साथ ही वह अपार्थिव की ओर इंगित करता है, वह भी गहरे में। एक जीवन देवता ने उनके जीवन को गतिनिरत कर दिया है। वह रहस्यमय बनकर कवि के भीतर रहता है। कवि के लिए उसकी लीलाएं रहस्यमय नहीं है। वह उसे हर कहीं स्पंदित दीखता है और उसकी स्मृति में कवि प्रबुद्ध हो जाता है। सब कहीं उससे कवि मिल जाता है।

आज मने हय सकलेरि माझे
तोमारेइ भालो बसेछि।
जनता बहिया चिर दिन धरे,
शुधु तुमि आमि एसेछि।
चेये चारिदिक पाने
कि ये जेगे उठे प्राण,
तोमार आमार असीम मिलन
येन जो सकल थाने।" - रवीन्द्र काव्येर भूमिका - रवीन्द्र नाथ ठाकुर : व्यक्तित्व और कृतित्व से उद्धृत जी० शंकर कुरूप की कविता अन्वेषण (अन्वेषणं-जी सूर्यकांति 38 43) में इसी अनुभूति की व्यंजना है। पवन को अपनी प्रेयसी का सान्निध्य सब कहीं होता हुआ प्रतीत होता है। प्रभात कालीन नक्षत्रों की उसकी वेणी से गिरे हुए मन्दार पुष्प मानता है। पक्षियों का कलकल नाद उसके नूपुर से ध्वनित मालूम होता है। प्रभात की लालिमा उसे उसके पद कलमों का आलक्तक चिन्ह लगती है। सूर्यबिंब को कनकांगुलीय और बादलों को रेशमी रूमाल। इस प्रकार सब कहीं वह अपनी प्रिया के होने का भाव सुस्थिर कर लेता है। अगर कोई यह कहे, कि यह सब भ्रम है, वह है ही नहीं तो वह उसे नहीं सानने का। उसे वह कथन ही असत्य लगता है। यदि वह नहीं है, तो उसे उसके कपोल की शीतलता झरने के पानी की ओर अधर बढ़ाते समय कैसे मिल पाती? उसे विश्वास है कि किसी दिन वह उसके समीप पहूँच पावेगा। इन काव्यों के अभिव्यक्ति कौशल में अन्तर है, पर उसके प्राण एक हैं। रवीन्द्र नाथ की कविता 'अन्तर्विकास' में जीवन देवता से प्रार्थना की जाती है कि 'मेरा अन्तर विकसित

करो, निर्मल, उज्ज्वल, सुन्दर, जाग्रत और निर्भय करो। निरालस, उद्यत, शंकारहित करो। अखिल विश्व के समान मेरा अन्त:करण उन्नत करो। मुझे आनन्दित करो। (अन्तर्विकास-टैगोर-गीतांजलि से-पृ०। सत्यकाम विद्यालंकार का अनुवाद) पंत जी की 'मम जीवन की प्रमुदित प्रात' (वीणा-ग्रंथि-पंत-पृ० 8) वाली कविता का स्वर और अनुभूति वही है। -सुन्दरी, मेरे जीवन की प्रमुदित प्रात नव आलोकित कर दे। प्रेम का नव जलजात खिलाकर विकसित कर, नवसुरभित, गुंजित, कलकूंजिन कर! निर्मल और अति उज्ज्वल कर। अवदात जीवन ज्योति जलाकर उर-अंबर में ज्वालामय कर। हे माँ, मेरे चंचल मानस पर सुन्दर पादपद्म विकसाकर अपनी मधुर वीणा बजा। (वीणा-पृ० 8) इस प्रकार की प्रारंभकालीन कविताओं में ही नहीं, अपितु बाद की प्रौढ़ कविताओं में भी भावैक्य और अभिव्यक्ति साधर्म्य प्राप्त होता है। प्रार्थना रूप के ओपनिषदीय गानों के बराबर अनेक कविताएँ रवीन्द्र से प्रभावित होकर पंत जी ने प्रारंभ में की हैं। उदाहरणार्थ वीणा में 'अब न अगोचर रहो सुजान

अब न आगोचर रहो सृजन

* * * * *

अपने काले पट में मेरा
प्रिय! लपेटकर मत्सर मान
रंग रहित होकर छिप रहना
मुझको भी बतला दो प्राण!
प्रभो यदि अब इस जीवन में तुझे न देख पाया

* * * * *

तू मुझे भूल न जाए- यह शंका सोते -जागते दिन-रात मुझे सताती रहती है। गीतांजलि-22 "निठुर! यह भी कैसा अभिमान:

मिले तुम राकापति में आज
पहन मेरे दृगजल का हार;
बना हूँ चकोर इस बार
बहाता हूँ अविरल जलधार
नहीं फिर भी तो आती लाज.....
निठुर ! यह भी कैसा अभियान?"
-"प्रभु तेरी प्रतीक्षा में जागते आँखे थक गई-तुम से भेंट हुई, तब भी मैं तेरी राह देख रहा हूँ,

* * * * *

द्वार के बाहर, धुल में बैठा, मेरा भिखारी मन तेरी करुणा की याचना कर रहा है - गीतांजलि-24

'धनिक! तुम्हारे यहाँ भिखारी' 'द्वारा भिखारी आया है' - इन कविताओं के साथ निम्न सूचित टैगोर की कविताएँ मिलाकर देखना-'यदि देख न पाया', 'प्रिय व्यथा', 'प्रभु। मैं तुमसे इतनी ही भिक्षा माँगता हूँ' और 'आह्वान'।

कुरुप जी का विचार " अनश्वरता को प्राप्त करने की अभिलाषा मानव मात्र के लिए जन्मज है। मार्ग तो कई हो सकते हैं- कृच्छ भी और सरल भी। अपनी-अपनी प्रतिभा और व्यक्तित्व के अनुसार मनुष्य इनमें से कोई एक चुन लेता है। किन्तु कवि तो सौन्दर्य एवं नादलय के सुन्दर, किन्तु आयारहित मार्ग से आगे बढ़ता है और शब्दों में अपनी अन्तश्चेतना को प्राप्त कर लेता है।" - (जी- सृजन को मनोभूमि-रणवीर रांग्रा-पृ० 67)। उनके काव्य-जीवन की ओर दिशा-दर्शन कर सकता है। वे अपनी अंतश्चेतना के हमेशा कायल रहे थे। व्यक्ति निष्ठ आत्म-दर्शन के अनेक सोपानों को उन्होंने पार किया और धीरे-धीरे उनका दर्शन सर्वात्म भाव की ओर विकसित होता गया। इसकी, काव्य चित्रण द्वारा अभिव्यक्ति हुई। प्रकृति-उपादनों के द्वारा जो आत्म-भाव अध्यात्म प्रतीकों से होकर प्रकट हुए उनका समग्र एकत्व संपूर्ण विश्वरूप -दर्शन में परिणत हो गया। 'शिवतांडव' विश्व दर्शन अनेक कविताओं में सर्वानुभूति की भावना दर्शित हो सकती है। 'जी' की इन कविताओं में दर्शित विश्वात्म भाव पंत के रजत काव्यों में आभ्यंतर होकर प्रकट हुए। दोनों कवि व्यष्टि से समष्टि में विकास पा गये। इसमें भी रवीन्द्र का प्रभाव अवश्य लक्षित होता है। रवीन्द्रनाथ ने अपने कवि-जीवन में प्रभाव में ही असीम एवं अनंत के प्रति अतृप्त क्षुधा का अनुभव किया था। सर्वानुभूति की भावना क्रमश: कवि के चित्त को अभिभूत करती गई और वह विश्व अपने प्राणों का संयोग स्थापित करने लगा। सीमा के समस्त बन्धनों का, तुच्छताओं का अतिक्रमण करके असीम के कवि ने आनन्द-रूप को अपने अन्तर में प्रतिष्ठित किया। उसकी दृष्टि में अब अखिल विश्व एक अपूर्व सौंदर्य, एक अपूर्व महिमा लेकर दिखाई पड़ने लगा और सब कुछ वह केवल नेत्रेन्द्रिय से ही नहीं, मन, प्राण, आत्मा से भी देखने लगा।

मेरा भय नष्ट करो प्रभु! नष्ट करो!
मुझसे मुख मत मोड़ करो!
तू पास ही था, मैं पहचान न सका
मैं कहीं और ही देख रहा था, न जाने कहाँ
तू मेरे अंतकरण में विहार कर!
मेरे हृदय में हंसी का प्रकाश कर! -गीतांजलि पृ० 28

उपर्युक्त विचार के ही अनुसार जी की और पंत जी की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन और भी संभव है। पंत जी के स्वर्ण काव्य में चेतन-महत्वपूर्ण रूप से प्रकट हुआ है। आत्मा के आलोक को और नवमानव के दिव्य भाव को अभिव्यक्ति किया है। कवि व्यक्तिगत परिवेश से ऊपर उठकर बाहर-भीतर एक ही आलोक का दर्शन करता है। कवि 'स्वर्णधूलि' की एक कविता में गगन में, तृणों में, कणों में सर्वत्र एक ही इंद्रधनुष का आभास देखता है। वह विराट् पुरुष का दर्शन है।

गगन में इंद्रधनुष,
अवनि में इंद्रधनुष!
नयन में दृष्टि किरण
श्रवण में शब्द गगन,
हृदय के स्तर स्तर में
उदित वह दिव्य वपुष!

जगत की पीड़ा विषमता में उसकी ज्योति कम नहीं होती। उचित् के जगत में भी वह उज्ज्वल रहता है। मरण के बन्धन में भी वह नहीं पड़ता और सदा अकलुष रहता है। इस प्रकार अग-जग के कण तृण में सर्वत्र वह ज्योतित रहता है। शंकर कुरुप का विश्वरूप दर्शन, सन्ध्या को केन्द्रित करके है। प्रकृति की सूक्ष्म-भूतात्मक सभी वस्तुओं में वह सोन्दर्य चेतन का दर्शन करते हैं। नाद-लय, वर्ण-गन्ध, स्पर्श-रूप तक उसकी
व्याप्ति है। विश्वात्मा शिव की भाव-भंगिमा की लय का एक लघु स्पन्दन भी भंजक नहीं। मृत्यु के मस्तक पर चरण टिकाकर विश्वात्मा उन्मुक्त अट्टहास-नृत्य करती है। आक्रान्तित जैसे ब्रह्माण्ड विकसित होता है। लयपूर्ण पदाघात से भूमि सिकुड़कर पहाड़ रूप धारण करती है। ताल मन्द्र-गम्भीर रूप से स्पन्दित होता है। वह अनादि ताल शंकरभरक राग के रूप में सुनाई पड़ता यदि श्रवण उस योग्य होता। तब श्रुतियों के भी पार, दूर उस तेजोदीप्त नयन की चित्-प्रकाश-कणिका में हम युक्ति की छोटी-छोटी बत्तियाँ जला लेते हैं। कर्म की वीथी में उसी बत्ती को प्रोज्ज्वलित कर धर्म और अधर्म के चेहरे पहचान लेते हैं। (शिवतांडव-'जी' 'एक और नचिकेता' संग्रह के उद्धत -पृ० 5 - 62) " इन कविताओं में व्यंजित विराट का रूपों में जो बंधन है, दृश्य-भावना का बन्धन है। वस्तुत- यह सीमा में असीम का रूप-बंधन है। जैसे धूप अपने को गन्ध में मिलाकर सुर छन्द में, भाव रूप में असीम सीमा में और मुक्ति बन्धन में अपने को पाना चाहती है।" (आवर्तन-रवीन्द्र नाथ ठाकुर) :

धूप आपनारे मिलाइते चाहे गन्धे
गन्ध से चाहे धूपेरे रहिते जुड़े।
सुर आपनारे धरा दिने चाहे छन्द,
छन्द फिरिया छुटे येते चाय सुरे।
भाव पैने चाय रूपेर माझारे अरे,
रूप पेते चाय भावेर माझारे साड़ा।
असीम से चाहे सीमार निविड़ संग, सीमा चाय हते असीमरे माझे हारा।

बन्ध फिरिछे खूंजिया आपन मुक्ति,
मुक्ति मागिछेह बाँधनेर माझे वासा।"

इस संबन्ध में रवीन्द्र नाथ लिखते हैं "संसार एक अपरूप महिमा से समाच्छत्र दिखाई पड़ा। वह सर्वत्र आनन्द एवं सौन्दर्य से तरंगित हो रहा है। शैशव काल से केवल चक्षुओं द्वारा देखने का अभ्यास था, अब मानो समस्त चैतन्य द्वारा देखना आरम्भ किया। उसी क्षण पृथ्वी पर सर्वत्र नाना लोकों में नाना प्रकार के कार्यों एवं प्रयोजनों को लेकर कोटि-कोटि मनुष्य चंचल

दिखाई पड़े। इस पृथ्वी व्यापी समग्र मानव देहचंचलता को अखण्ड रूप में देखते हुए मुझे एक महा-सौंदर्य नृत्य का आभास मिलने लगा। (जीवन स्मृति - रवीन्द्र नाथ ठाकुर) पंत जी और 'जी' को यह महा-सौन्दर्य-नृत्य भूतात्मक प्रकृति के हर रूप में, जगत-जीवन के हर स्पन्दन में और भाव-जगत के हर उन्मेष में अनुभूत हो जाता है। पंत जी की 'चित्रकारी(2 से 6 तक-स्वर्ण धूलि की कविताएं-पंत), 'निर्झर', 'अन्तर्वाणी', ज्योतिझर, मुक्तबंधन, मंगल स्तवन (7 से 20 तक - स्वर्ण किरण की कविताएं-पंत) सम्मोहन, रजतातप, इंद्रधनुष, अरुण ज्वाल, स्वर्ण-निझर, स्वर्णिम पराग, उषा, व्यक्ति और विश्व, हरीतिमा, छाया पट, आवाहन, निवेदन, नील-धार, आदि असंख्य कविताएं उनकी प्रौढ़ दशा में रचित हैं और ये सब उपयुक्त श्रेणी में आती है। शंकर कुरूप की अन्वेषण (21 सूर्यकान्ति में संकलित-जी), विश्वदर्शन (22 से 21तक- जीवन संगीत में संकलित-जी)पाणनार, शिवताण्डव, निषलुकळ् नीळुवु, जीवन संगीत, पंचवर्णक्किळि पषयवाच्चु तिरुमुम्मित, नामरूप वन (30 और 32 - मधुर -सौम्य -दीप्त में संकलित -जी, विश्व सुन्दरी, सामगान, चिरकुं आकाशवुं (33 से 34 तक - सान्ध्यरागं में संकलित - जी), दर्शन, आदि कविताएं चेतन एक बंधन-मुक्ति की कविताएं हैं। इन कविताओं को एक साथ पढ़ने पर तीन महान भारतीय कवियों -रवीन्द्र नाथ ठाकुर, सुमित्रा नंदन पंत्र और जी० शंकर कुरूप - की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक भावों की सुन्दर त्रिवेणी में निमज्जन कर सकते हैं।

प्रतीक क्रिया

पंत जी और जी की कविताओं में प्रतीकसाधर्म्य भी खूब मिलता है। काल विषयक कविताएँ दोनों ने अश्व और सर्प के प्रतीकों में लिखी है। इनकी तुलना करके देखना उचित है। पंत जी ने अश्व प्रतीक में काल (कालअश्व -पंत - स्वर्णधूलि में संकलित -) का वर्णन इस प्रकार किया है -"यह कालाश्व, जो तपोशक्ति का चिर -अजर रूप है, अति दिव्य वेग भरकर दिशा पृष्ठ पर धावमान है। यह महावीर्य सप्त रश्मियों से शोभित सहत्र धर भव को प्राण से श्वसित चला रहा है। यह महा अश्व विश्वरथ को आश्रांत खींच रहा है। भुवन चक्रों से अविरत घूम रहे हैं। अंतर्द्रष्टा ऋषि, और त्रिकाल दर्शी कविगण इनपर विपश्वित हो धीरता से आरोहण करते हैं। जग के शेष चराचर निष्ठुर विधि से पीड़ित होकर परिवर्तित चक्रों में पिसकर जर्जर हो जाते हैं। जिनका मन नाम-रूपों में ही मोहित एवं सीमित है, वे नित प्रबल पदाघातों से मर्दित होते हैं। काल मन को विस्तृत बोध और बल देता है। जगत में निखिल वस्तुएँ केवल क्षण घटनाएँ हैं। जो निज बहिरंतर को संयोचित कर सकते हैं, उनको काल अश्व-गति नहीं व्याप्ती। अथवा जो निर्द्वंद्व, शुद्ध, निर्लिप्त, ऊर्ध्वचित हैं वे आत्मजित् दिव्य तुरग पर चढ़कर पार जाते हैं।

'जी' का कालाश्व वर्णन इस प्रकार है- "बिना जीन और लगाम कैसे तेज दोड़ता है काल रूी जवनाश्व। उसके खुरों के चिन्ह ही चन्द्र और सूर्य हैं; मुँह से निकलने वाला झाग ही दिन है। पदाघातों से उड़नेवाली धूल ही अन्धकार है और सन्ध्यायें सिरपर की चामर शिखाएं हैं। समुद्र उस धुलि से भर जाता है और पहाड़ उन पदाघातों से गायब हो जाता है। यह घोड़ा कभी पीछे नही हटता। कोई जाननेवाला नहीं कि यह कहाँ से आता है और कहाँ को जाता है। यह घूमकर ही दौड़ता है। काल की लीलाएँ मनुष्य में भय, विस्मय, शोक आदि भावों को जगा देती हैं। (साहित्य कौतुकं जी- पृ - 100) इस प्रकार की भीषणता आदि का चित्रण है। पंत जी ने परिवर्तन को संबोधन कर लिया है। वस्तुत: परिवर्तन ही काल है। अहे, वासुकि सहस्त्र फन। (पल्लव पृ०) तुम्हारे अलक्षित लक्ष चरण अपने चिन्ह जग के वक्षं : स्थल पर छोड़ रहे हैं। शत शत फेनोच्छ्वसित स्फीत और भयंकर फूत्कार घनाकार जगती का अम्बर घूमा रहे हैं। मृत्यु है तुम्हारा गरल दंत, और कंचुक है कल्पांतर। अखिल विश्व ही विवर है; दिडमण्डल वक्र कुण्डल है। इस भयानक परिवर्तन अथवा काल भुजंगम से कम भयंकर नहीं है 'जी' का कालाहि। (काल-जी- ओटक्कुषल से उद्धत पृ० ।) वह अखिल जग-मण्डल को अपनी कुण्डली में घेर कर रेंग रहा है। आकाश में दीप्त नीहारिका पटल इसकी केंचुल हैं। आकाश रूपी खगी अंड़ों से बच्चे की प्रतीक्षा में है। पर नहीं जानती कि ये गोलाकार अण्डे कालाहि से चूसे खोचाले मात्र हैं। इसकी जीभ की दो नोकें हैं- दिन-रैन, जिन्हें यह अनन्त द्विजिह्व जब लपलपाता है तब पर्वत स्तब्ध हो जाता है और विशाल सागर संकुचित हो जाताहै। इस प्रकार उग्र कालाहि का चित्रण भी दोनों कवियों की भावना से समान धर्मी है। काल की अनंतता, और उसकी अजेय प्रभाव क्षमता को दोनों कवितयों ने प्रतीकों द्वारा सुन्दर रूप से चित्रित किया है।

सुमित्रा नंदन पंत प्रतीकी कला के पारखी हैं। उन्होंने जितने प्रतीकों की प्रयोग किया है उतना किसी भी हिन्दी कवि ने नहीं किया। यह भी देखने को मिलता है कि उनके प्रतीक कभी-कभी दुरूह भी लगते हैं। शंकर कुरूप के प्रतीक कभी दुरूह नहीं बने हैं। 'जी' के प्रतीक अपार बोध-गम्यता प्रदान करते हैं। एक प्रतीक को स्पष्ट करते हुए साथ-साथ उनके प्रतीकों का आविर्भाव आशत को मूर्त, व्यंजित, प्रभावित कर देता हैं। पंत जी के प्रतीक अधिकतर शाब्दिक प्रतीक हैं, जिन्हें सन्दर्भ का उचित महत्व प्राप्त है। भावों की सीमा को व्यापक कर देने में वे सक्षम तो हैं ही। फिर भी कभी-कभी दुरूहता का भान होता है। नवीन युग का निर्माण करना चाहते हैं पंत जी। वह नव युग जहाँ तम और प्रकाश में परस्पर सुगम एवं हितकारी संबन्ध हो, सुख-दुख का स्वस्थ समन्वय हो। तब वह युग मानव जीवन का मंगलमय काल होगा। तब मानव का शरीर धारण करेगा अमरता। भूमि का आवास-स्थल होगी। वहीं भूमि और स्वर्ग का समन्वय सार्थक होगा। इस आशय का सफल प्रतीक-प्रयोग पंत ने किया हैं-

एक अंतर पंत और 'जी' में है। वह यह कि पंत नवीनतम होते-होते मनुष्य को देव बनाने की चेष्टा में रत हैं और 'जी' स्वयं मुक्त होकर उस मुक्ति की अभिव्यक्ति से पाठकों को भी उस ओर आकृष्ट कर रहे हैं। दोनों में दर्शन के आलोक की अधिकता है। भविष्य वाणी के अनुसार 1971 से आगे कई दशक मनुष्य के भीतर के ईश्वर को अधिकाधिक दीप्त कर देने में बीतेंगे। 'जी' और पंत दोनों अपने लक्ष्य को चरितार्थ कर सके।

संपर्क:श्रीनिकेतन, लक्ष्मीनगर,
पट्टम पालस पोस्ट, तिरूवंनतपुरम-4

घुटन

❑ डॉ० मधु धवन

नक्षत्र रहित बुझा-बुझा-सा आकाश जिसमें एकटक आँखें गड़ाए कुछ तलाशती-सी चेतना, रिसती पीड़ा आँखों से टप-टप टपक रही है, रोज-रोज की पीड़ाओं वाली निरर्थक-सी जिन्दगी .... उसके कानों में गूँजती पति की कठोर आवाजें ..... सुबह से शाम तक का दृश्य विडियो टेप-सा चलने लगा-- "अब निकलेगी भी कि देर करवाएगी ?"

"निकलती हूँ ..... गोपू ने कपड़े गीले कर दिये हैं .....। "निकल भी ..... तेरी उम्र की औरतों में क्या चुस्ती फुर्ती होती है ..... पलक झपकते ही सारे घर का काम कर .....प्रफुल्लित चेहरे लिए दफतर संभालती हैं ..... कामकाज .. .. पर तरोताजा रहती हैं ..... और तुम ..... वाक्य हवा में तिरने लगता है और वातावरण में कैसेलापन भरने लगता है .....। चेतना छ: माह के पुत्र को गोद में उठाए जल्दी-जल्दी बाहर आ जाती है। स्कूटर के पीछे बैठते ही पति एक्सेलेटर दबाते हैं, चेतना इस समय ही तो अपने पुत्र को ढेर-सारा प्यार करती है पूरे रास्ते चुम्बनों की बौछार करने लगती है। गोपू शायद इस प्यार का अर्थ समझ जाता और कस कर आँचल पकड़ लेता है, उसकी पकड़ जोरदार होती है, इसी प्यार-ममता में रास्ता खत्म हो जाता है, शिशुभवन आ जाता है, शिशु भवन की मुख्य आया गोपू को बढ़कर लेती है, गोपू चीख-चीख कर अपनी बात कहता है किन्तु चेतना उसे पुचकारती -सहलाती आया को सौंप, उसे रोता छोड़ स्कूटर की ओर लपकती है, पति के चेहरे पर नजर पड़ते ही उनके भावों के साथ शब्द सुनती है-

चलो भी, दफतर देर हो रही है, समय की पाबंदी को लेकर दफतर में कितनी बार कठोर अनुशासनिक करवाई की जाती है,"।

गोपू की चीखें उसके दिल पर

वार करती रहती है, दफतर में आकर अपनी कुर्सी पर बैठी किन्तु ध्यान गोपू की ओर था उसका मन रोज की भाँति आज भी अपने पुत्र की चीखें सुन पा रहा था, उसकी बेचैनी बढ़ने लगती है, उसे लगता है गोपू अभी भी रो रहा होगा, उसकी बेचैनी में उदासी घुलने लगती है। पति का क्रुद्ध चेहरा तथा कड़कती धारदार आवाज कलेजा चीरती जाती है। वह पलभर सोचने लगती है। यही है वह जिसके साथ जिन्दगी के सात वर्ष गुजारे .....? गृहस्थी की एक-एक ईंट सजायी। रात-दिन काम करते सास-ससुर, देवर ननदों की सेवा की ..... उनको ब्याहा . ..... इस दिन के लिए .....? वैवाहिक जीवन को ताक पर रख केवल कमाने और काम करने की मशीन बनी रही ... . सात साल कितना कमा कर दिया था ..... दफ्तर के बाद अतिरिक्त काम लेकर खूब कमाया था .... अब यदि वह काम न भी करे तो क्या है .....?..... कितनी बार तेज बुखार में भी गृहस्थी का काम करती रही ..... कितने दुख उठाए थे ..... अब..... कितनी बार समझाया था कि गोपू शिशुभवन में छोड़ कर काम पर जाने का दिल नहीं चाहता है ..... फिर छोड़ने जाना ..... लेने जाना कितनी दिक्कतें होती हैं ..... मेरा मन भी काम पर नहीं लगता। गोपू में अटका रहता है ..... आँखें घड़ी पर ..... कब छुट्टी हो और मैं अपने गोपू को गोद में उठाऊँ ..... मैं अब नौकरी करना नहीं चाहती , जब जरूरत थी तो नौकरी के अलावा भी कम्प्यूटर पर काम करते हुए कमाया था - सब अपने-अपने घर बसा चुके हैं, आपकी कमाई भी पर्याप्त है ..... मैं घर चला लूँगी .....।

जितनी बार मन की बात उनको कही थी उतनी बार उन्होंने समझाया या सुना नहीं था ..... केवल फटकारा था . ..... गोपू .....गोपू..... गोपू ..... यह क्या रट लगायी है ..... दो सालों में गोपू स्कूल जाने लगेगा फिर घर पर बैठी क्या करोगी .....? इतनी अच्छी नौकरी वह भी इसी शहर में ..... परोसी हुई थाली है .....। मैं सुबह चार बजे से उठकर घर का काम करती हुई थक जाती हूँ ..... मेरी पीठ दर्द करने लगती है ..... सुबह से शाम देर तक दफ्तर में खपते रहो ..... घर आते वक्त बसों की भीड़भाड़ में खडे रहो, शिशुभवन तक बसों में धक्के खाते हुए पहुँचो, गोपू को लेकर घर पहुँचते-पहुँचे कितनी शक्ति खत्म हो चुकी होती है ..... अब मैं घर-गृहस्थी और गोपू की देखभाल करना चाहती हूँ .....। "नहीं ..... शिशुभवन ठीक है, वहाँ भी समस्त सुविधाएँ हैं, वहाँ की आया बेहद

भली है, पति का निर्णय सुन मेरा मन दर्द से कहर उठा ..... कहाँ है प्यार-ममता.. ..... इतनी निष्ठुरता .....? अपनी वैवाहिक जिन्दगी का हिसाब लगाती वह उलझी थी, अपनी समझौतावादी वाली नीति के चलते ही तो वह सदा सहती चलती गयी थी किन्तु जीवन के इस मोड़ पर समझौता कहाँ तक उचित था .....? गोपू की उचित परवरिश नहीं कर पाने में मन अन्दर ही अन्दर अपराध भाव से दब रहा था, दफ्तर में बढ़ते कार्यभार से कहीं न कहीं त्रुटि रह जाती और ऊँची-नीची बात उठ खड़ी होती तो सारा दिन क्या सारा महीना मन को कचोटती रहती, न ठीक तरह खा सकती, न सो सकती ... . सारा दिन कम्प्यूटर सामने बैठे-बैठे सिरदर्द होने लगता ..... पर किसने समझा उसके इस दाह को .....? पति ही तो सबसे करीब होता है ..... यदि वह नहीं समझ सकता तो किसे कहे .....? "क्या बात है ..... हर दिन की तरह आज भी खिन्न बैठी हो ..... पति ने कुछ कहा . .....? गीतिका चौधरी ने पूछा। " नहीं ..... पति बेचारे क्या कहेंगे .....? इस कम्प्यूटर से सिरदर्द होने लगता है।" "अन्दर जा, बॉस बुला रहे हैं" "उसने राइटिंग पैड लिया और बॉस के कक्ष की ओर बढ़ गयी गुड मार्निंग सर ....." बास ने गुड मार्निंग का उत्तर सिर हिला दिया और सीधे काम की बात पर उतर आया। मिसेज मोहतो। यह फाइल देख लीजिए। सारा काम आज ही खत्म हो जाना जरूरी है क्योंकि सुबह की फ्लाइट से मुझे कलकत्ते बिजनेस डील पर जाना है। शाम तक फाइल मेरे घर पहुँच जाए। समस्त डाक्यूमेंटों की पांच-पांच प्रतिलिपियाँ हों ....। फाइल लेकर चेतना अपने कक्ष में आ गयी। टाइप में सामग्री बहुत ज्यादा थी, ... उसका जी घबराने लगा .... गोपू की याद और तीव्र हो उठी। घड़ी पर नजर डाली तीन बज चुके थे। आधे से ज्यादा सामग्री टाइप हो चुकी थी। भूख से अंतड़ियों में बल पड़ रहा था किन्तु खाना खाने में वक्त लग जाएगा अत: खाने का ध्यान छोड़ दिया था। "चेतना जी आपका फोन ..... " चपरासी ने सूचना दी। उफ अब कौन समय बर्बाद करवाना चाहता है .....? अनमनी-सी उठकर फोन के पास आ गयी । हैलो,। हैलो चेतना मैडम। .....दूसरी ओर से शिशुभवन की आया की आवाज थी। "क्यों ....." घबराहट से वह कांप उठी। "गोपू को तेज बुखार हो आया है . ...." "सुबह तो वह ठीक था।" "आपके जाने के बाद वह काफी देर तक रोता रहा। बुखार ग्यारह बजे के आसपास हुआ था। "आज जरा ज्यादा अच्छी तरह देखभाल कर दो" "मैं आज कहीं जरूरी काम से जा रही हूँ, आप इसी वक्त आ जाइए"। "नहीं, तुम मेरे बच्चे को छोड़कर नहीं जा सकती।" "मैं आज मजबूर हूँ,। मैं भी आज मजबूर हूँ। कुछ जरूरी काम है"। मैं ठीक पाँच बजे चली जाऊँगी, आपको सूचित कर दिया है," इतना कह उसने फोन बंद कर दिया था। चेतना ने घड़ी पर नजर डाली। सवा चार बज रहे थे उसके हाथ विद्युतगति को भी मात करने लगे। उसका ध्यान गोपू में था, पाँच बजे तक काम खत्म होने की कोई संभावना नहीं थी ..... पाँच बजे के बाद गोपू किसके पास छोड़ेगी .....? पति के दफ्तर में फोन लगवाया किन्तु वह वहाँ नहीं थे। शहर के किसी मिल मालिक के साथ उनकी मीटिंग थी इसलिए वे सुबह से वहीं कहीं गए हुए हैं, सात से पहले आने की संभावना नहीं थी। एकाएक उसे ख्याल हो आया कि बच्चा ऑफिस ही ले आऊँ। पांच बजे के बाद ऑफिस खाली भी होगा। इसके अलावा कोई चारा भी न था। वह पौने पांच बजे चपरासी को सारी स्थिति समझा बाहर निकल ऑटो ले शिशुभवन की ओर चल पड़ी। ट्रैफिक जाम के चलते उसे पूरा घंटा लग गया। शिशुभवन के बरामदे में फूलमालन की गोद में पड़ा गोपू जोर-जोर से रो रहा था। उसका दिल पसीज उठा भिखारी के बच्चे की तरह मालन की गोद में उसका बेटा .....!!! उसने गोपू को उठाकर छाती से चिपका लिया। मालन की ओर दस का नोट बढ़ाते हुए उसे धन्यवाद दिया और ऑटो में गोपू को ले बैठ गयी। गोपू बुखार के कारण निढाल-सा था। उसकी आँखें अपने बेटे के चेहरे पर टिकी रहीं। दफ्तर के चपरासी ने दरवाजा खोल दिया। चेतना कम्प्यूटर-कक्ष में आ गयी। उसने गोपू को सोफे पर लिटाना चाहा किन्तु वह बेकाबू-सा छटपटा उठा। घड़ी ने सात बजाए तो उसने दिल कड़ा कर गोपू को सोफे पर लिटा दिया। चपरासी उसे चुप कराने लगा। टाइप करते-करते नौ बज गए। गोपू रो-रोकर सो चुका था। साढ़े नौ बजे पूरी फाइल चपरासी के हाथ सौंप कर उसने गोपू को उठाया और दफ्तर से बाहर आ गयी। दफ्तर की गाड़ी नहीं थी। उसने ऑटो किया और घर आ गयी। साढ़े दस बज रहे थे। घर का दरवाजा खुला था। पति पैग लिये टी०वी०के सामने बैठे थे। उन्होंने उसकी ओर लापरवाही से देखा। उसने भी बिना कुछ कहे गोपू को सुलाया और बाथरूम चली गयी। पन्द्रह मिनट के बाद वह थकावट धोकर आ गयी और रसोई घर में जा कर जल्दी-जल्दी सब्जी काटने लगी। पति के आगे खाना परोस उसने गर्मागर्म रोटी बेल कर तवे पर डाली ही थी कि गैस खत्म हो गयी, उसने जल्दी से ब्रेड आगे रखी और हीटर ढूँढ़ने लगी। अपने सामने थाली में ब्रेड। देखते ही चिल्लाये . .....। यह खाना है .....?

ब्रेड कोई खाना होता है .....?

हम कब से अंग्रेज हो गए .....?

हीटर ने समय पर पूरी मदद की। गर्मागर्म रोटियाँ बनने लगी। खाना खाते वक्त तथा बाद में भी उन्होंने एक बार नहीं पूछा कि तुमने कुछ खाया या नहीं। खाना खाकर आराम से कोई फिल्म देखने लगे। रसोई समेट कर जब वह अन्दर आयी तो एक बज रहा था। पति गहरी नींद में थे। चेतना गोपू को दूध पिलाने की कोशिश करने लगी .....उसे कक्ष में घुटन महसूस होने लगी। गोपू का बुखार थोड़ा कम था, उसने उसे दवा पिलाई। गोपू को सीने से चिपकाए वह बाहर बरामदे में बिस्तर बिछा कर लेट गयी। बाहर भी उसे घुटन महसूस होने लगी.....।

संपर्क : 3के, अन्नानगर (ईस्ट)चेन्नई

ठहरे आँसू

❑ नय्यर जावेद मलिक

ट्रेन अपनी तेज रफ्तार से आगे बढ़ती जा रही थी, खिड़की के पास बैठा हुआ बाहर हरे लहलहाते खेत को मैं देख रहा था, पर ध्यान कहीं और था। दो वर्षों के बाद घर जा रहा था, वह पता नहीं कैसी होगी? उसी के बारे में सोचे जा रहा था, ट्रेन सरपट भागी जा रही थी और मैं अपने सोंच में मग्न था, ट्रेन के रुकते ही यादों का सिलसिला टूट गया, मेंने घबराकर अगल-बगल देखा, जैसे निंद से कोई अचानक जागने पर करता हो। खिड़की से बाहर झांका "गया जंक्शन" बड़े शब्दों में लिखा था। मैंने अपना सामान उतारकर कुली के लिए इधर-उधर देखने लगा, आज प्लेटफार्म मुझे पहले से काफी छोटा लग रहा था।

रिक्शे पर बैठते ही पुरानी यादों ने मुझे घेर लिए। माँ से उसके बारे में बात करूँगा यह सोचकर मैं घर आया था। इंजीनियरींग करने के बाद बाबा ने कुछ पैसा-वैसा देकर मेरी सरकारी नौकरी करवा दी थी। कई राजनीतिक लोगों से उनकी जान-पहचान थी। पहली पोस्टींग लखनऊ में हुई थी। दो साल से वहीं था। रिक्शेवाले ने रोड से अब मोहल्ले की गलियों की ओर रुख किया। रास्ता काफी खराब था। 'परेशानी हो रही है तो उतर जाता हूँ,' मैने रिक्शेवाले से कहा।

'नहीं बाबू जी,' उसने कहा- 'हमें तो आदत है।' रोड भी काफी खराब है मैं कुछ बोलना नहीं चाहता था पर मुँह से निकल गया।

'का किजीएगा बाबू जी, सरकार ही चोर है' उसने जोर लगाते हुए कहा। जाड़े का दिन' पर मैने देखा उसके गर्दन से पसीना बहकर उसकी कमीज को गीला कर रहा था। घर आ गया था। मैंने रिक्शेवाले को पैसे देकर कॉल बेल बजाई। माँ ने दरवाजा खोला।

मैं उसे सलाम करता हुआ अंदर घुस गया। 'अब फुरसत मिली है तुम्हें,' माँ ने गुस्से

में कहा, 'कितनी बार कहा कुछ दिनों के लिए आ जा,' माँ गुस्से में थी। कई बार उसने खत लिखकर, कभी फोन करके मुझे बुलाया था।

मैंने सामान रख कर कुर्सी बीच बढ़ गयां।

"कैसा दुबला गया है तु बिलकुल सुख गया है" माँ ने ममता से देखते हुए कहा। तुरन्त उसका गुस्सा शान्त हो गया।

"रेहाना कहाँ है" मैंने छोटी बहन के बारे में दरयाफत किया।

"यहीं पड़ोस में गई है", "कितने दिनों की छुट्टी है" उसने बात बदल दी।

मैं चुप रहा।

"खैर, आया तो कुछ दिन रह कर जाना" रसोई की तरफ जाते हुए उसने कहा। मैं नहाने चला गया। जब आया तो माँ नाशता लगा रही थी।

"काफी देर से गई है क्या?" "मैंने रेहानों के बारे में पुछा। माँ उससे कुछ चाहता था। "बेटा अब तू शादी कर ले" बहू लाने की तमन्ना में कहीं मर न जाऊँ" उसने पुरानी बात छेड़ दी। मैं चुपचाप नाशता करता रहा।

"तेरी बाला जेबा के बारे में कह रही थी। अच्छी भली लड़की है। तूने भी तो देखी है। माँ ने जैसे कसम खाई हो आज मनवा के रहेगी। मैनें बात पलट दी।

"पहले रेहाना की कर दे" वह भड़क उठी। पागल हो गया है क्या तू ? अभी उसकी उम्र ही क्या हुई है। "बच्ची है वह" बड़बड़ाते हुए वह अंदर चली गई। खाने के बाद सिगरेट पीने की तलब हुई। नीचे पीना अच्छा न था इसलिए छत पर चला गया, ठंड भी थी, मैं सिगरेट जला कर कुर्सी पर बैठ गया। सामने वाले मकान के दो घरों बाद उसका घर था। उस घर में आज कुछ ज्यादा ही चहल-पहल थी। वह घर मेरे लिए हमेशा अहम रहा। काबा भी कलेसा भी वही। मैंने आँखें बंद कर ली। मस्तिक उसी के बारे में सोचने लगा।

किसी ने मेरी आँखों पर हाथ रख दिया। "छीती" मैंने अन्दाजा लगाया कि वह रेहाना ही होगी "भैया" वह मेरे सामने आकर चिल्लाई, "कब आए आप?"

"बस थोड़ी देर पहले आया हूँ" मैंने कहा। मैंने देखा वह काफी बड़ी हो गई है, पर माँ के लिए हमेशा बच्ची ही रहेगी।

शाम हो गई थी। अंधेरा बढ़ने लगा था।

"भैया नीचे चली जा, मेरे लिए क्या लाए हो" उसने उत्साह से कहा।

मैं उड़कर नीचे आ गया। वह मेरे सामानों की ओर लपकी।

"कहां थी तू इतने देर से?" मैंने पूछा।

"तब्बस्सुम आपा के यहां गई थी," उसने कहा "उनकी हो रही है ना"

क्या? अचानक तभी बिजली चली गई। मेरी तो जैसे सांस ही रूक गई। दिमाग ने काम करना बंद कर दिया। मेरे मुंह से निकल गया।

"रेहाना, लैम्प जला कर ला बेटी" माँ ने हॉक लगाई।

"चनाक" शीशा टूटने की आवाज आई।

"तोड़ दिया" माँ ने कहा, देख संभल कर दूसरा लैम्प जला।"

लैम्प जला कर उसने टेबुल पर रखा ही था कि बिजली आ गई।

" चलो बला टली" माँ ने कहा। उसका इशारा शीशा टूटने से था।

अंधेरे के कारण, कोई मेरे चेहरे पर आव-भाव न पढ़ पाया।

माँ ने टोक ही दिया "क्या हुआ? तबियत ठीक तो है?"

"सफर की वजह से थक गया हूँ।" मैंने सामान्य बनते हुए कहा।

तभी बाबा आ गए। सलाम-कलाम के बाद थोड़ी बहुत बातचीत हुई और वे अपने कमरे में चले गए। उनके कमरे से रेडियों की आवाज आने लगी। रेडियो भी क्या खूब चीज है। जब खबरें सुनना चाहो, रेडियों हाजिर। रिटायर होने के बाद उनके पांव घर में टिकते ही न थे। कभी रोड के लिए चंदा करने गए हुए हैं, कभी केसों का झगड़ा सुलझाने गए हुए हैं। समाज सेवा तो जैसा उनका धर्म था। कम्यूनिज्म के पक्के समर्थक थे। माँ शुरू-शुरू में बहुत लड़ती थी। पर बाद में छोड़ दिया जैसे हार मान ली हो।

रेहाना मेरे बैग से अपने मतलब की चीज निकाल चुकी थी।

मैंने रेहाना से पूछा, "कब है शादी?"

"ऊँ.... कल बारात आएगी" उसने कहा, जैसे नींद से जागी हो। वह मेरे लाल कपड़ों में खोई थी।

माँ खाना लगा चुकी थी। खाने का मन न था, पर आ के बैठ गया।

"तुम भी खा लो ना" बाबा ने माँ से कहा। वह चुप ही रही। मुझे याद है वह हमेशा सबके खाने के बाद ही खाती थी। खाना के बाद सभी अपने-अपने कमरे में चले गए। मैंने सिगरेट सुलगाया ही था कि माँ आ गई। सिगरेट बुझानी पड़ी।

"बेटा, तूने ने कुछ जबाब नहीं दिया" माँ ने बिस्तर पर बैठते हुए कहा।

'कैसा जवाब?' मैंने अनजान बनते हुए कहा।

"जेबा के बारे में" उसने कहा।

"माँ मुझे अभी शादी नहीं करनी" मैंने बुझे मन से कहा।

"बेटा अच्छी तरह सोच लो। जेबा अच्छी लड़की है" वह तो यही चाहती थी कि मैं जेबा से शादी कर लूं। वह उठ कर जाने लगी। माँ मेरे कहने पर वह रूक गई।

"क्या बात है बेटा" वह परेशान हो गई।

"तबस्सुम की शादी बहुत जल्दी हो रही है, है न"? मेरे कहने पर वह चौकी।

हाँ, उसके बाबा तो न चाहते थे, पर नानी ही जल्दी चाहती थी। घर जमाई की भी कोई बात सुनता है" उसने फिर से बैठते हुए कहा।

"माँ, ये शादी रूक नही सकती? मैने डरते हुए कहा।

"क्यों? उसने मेरे चेहरे पर गहरी नजर डालते हुए कहा ।

"मैं उसे पसन्द करता हूँ," मैनें कह ही दिया। गुस्से से उसका चहरा लाल हो गया।

"दिवाना हो गया, क्या? उसने तुझे कैसे देख लिया? वह उठ कर कमरे से चली गई। मैंने बत्ती बुझा दी, बिस्तर पर लेट गया, निंद आँखों से कोसों दूर थी। माँ कह रही थी वैसे उसमें कोई खास बात न थी। सिधी-साधी लड़की थी। सादगी सादगी सी रहती थी। जैसे अपने वजूद से शर्मिन्दा हो। कभी कभी मुझे उस पर गुस्सा आता था।

"भैया उठ जाओ" रेहाना ने मुझे जगाया। मां नाशता लगा रही थी। बोली अब तो नौकरी पेशा हो गया। पर देर से उठने की आदत न गई। जब मैं फ्रेश हो कर आया, रेहाना और बाबा नाशते के टेबूल पर मौजूद थे, मैं भी बैठ गया। कितने दिनों की छुट्टी है। बाबा ने पूछा।

"कल जाने की सोच रहा हूँ" मैने पहले ही सोच रखा था। सो कह दिया। सभी लोग मुझे देखने लगे, जैसे मैने कोई गलत बात कह दी हो।

इतनी जल्दी? बाबा ने कहा। मैं चुप ही रहा।

"परसो जाना बेटा, बुधवार को सफर करना अच्छा नहीं" माँ जानती थी मैं न रुकूँगा।

मैं बाहर जाने की तैयारी कर रहा था ही माँ आ गई। पहले कहा ही था। अब चाह कर भी कुछ नहीं हो सकता, उसने उदासी से कहा। वैसे भी वह लोग सय्यद घर के हैं" मैने शुक्रवार का टिकट बनवा लिया।

शाम की बारात में सभी ने चलने के लिए कहा। पर मैं ना कर दिया। घर में मैं अकेला रह गया। घर सिकुडता हुआ मालुम हो रहा थाा। ऐसा लग रहा था जैसे सारी दीवारें एक दूसरे से मिलना चाहती हों, मुझे दबा देना चाहती हो, उदासी जब काली पड़ गई तो बाहर आ गया। बाहर चहल-पहल थी। न चाह कर भी कदम उसके घर की ओर बढ़ गये। आज कोई रस्म न थी, कोई बंधन न था। सभी आ-जा रहे थे। मैं भी अंदर चला गया। वह बैठक में सजी बैठी थी। लड़के-लड़कियाँ नाँचे जा रही थी। मैने उसकी तरफ देखा। उसने भी चेहरा उठाया। नजरें मिलीं। मैने देखा आँखें नम हैं, जैसे आँसू ढहर जाए हों, उन आँसूओं ने, जो बह भी न पा रहे थे, कितना दर्द था, कितनी पीड़ा थी। हमारे समाज में लड़कियाँ इतना मजबूर क्यों होती हैं? मैं तेज कदमों से लौट आया। रात भर होश न रहा। पता नहीं रात कैसे गुजरी।

"बेटा, जरा आराम से सोचना। सुबह जब मैं सामान पैक कर रहा था तो माँ आ गई खुब समझायी। जब तैयार होकर बाहर आया तो बाबा खड़े थे।

"बेटा, माँ की बात अब मान ले", उन्होंने कहा, "अब शादी कर लें"।

"जी, सोचूँगा"। मैंने कहा

मैंने रेहाना का माथा चूमा। वह रोने लगी। सबको सलाम करके मैं रिक्सा-स्टैंड की ओर बढ़ गया। मैं जानता था माँ ने मेरे बैग में जेबा की तस्वीर रख दी है। मैने पीछे मुड़कर उसका घर देखा। मेरे लिए अब उस घर में, उस शहर में कुछ न रखा था, कुछ भी नहीं।

लघुकथा

चेकिंग

❑ डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम'

नन्दू को ज्यों ही यह मालूम हुआ कि उसके मेहमान को ही पुलिसवालों ने वाहन चेकिंग के नाम पर रोक रखा है और मोटरसाइकिल नहीं छोड़ रहे हैं उसने तुरंत आटा चक्की बंद किया और एक बढ़ई की दुकान पर सोफे पर पसरे थानेदार से जाकर पूछ बैठा, " हुजूर। क्या बात है मेरे मेहमान हैं यह। इनकी गाड़ी क्यों रोक दी? सुना है आप छोड़ने का नाम नहीं ले रहे?"

उसे अच्छी तरह जानते- पहचानते हुए भी उन्होंने उसे गौर से घूरा, फिर बोले," नन्दू तेरे मेहमान के पास न तो लाइसेंस है और न ही गाड़ी के कागज-पत्तर। ऐसे में कैसे छोड़ दूँ।"

एक पल तो वह चुप रहा फिर नन्दू कहने लगा, मगर हुजूर यह तो आप भी देख रहे हैं कि आपके साथ आये सिपाही आपकी आंखों के सामने ही पच्चीस-पचास लेकर वाहन छोड़ रहे हैं? क्या यह सब जायज है? अब आप ही बताईये कि वाहन चेकिंग हो रहा है कि कमाई की जा रही है।

देख नन्दू। अब तू बकबक कम कर। नहीं तो तेरा भी चालान कर दूंगा। साला बेल भी नहीं होगा ..... जमानत के लिए तरस जाएगा तू। थानेदार ने अपने आसपास भीड़ जुटती देखकर रौब जमाने की कोशिश की।

हुजूर। आप इतने ही अपने महकमे के प्रति वफादार हैं तो फिर वाहन चेकिंग थाने के मोड़ पर बीच बाजार वाली सड़क पर क्यों नहीं लगाते? इसीलिए न कि वहां न जाने कितने लोग सिपाहियों को माल झटकते देखेंगे। इस विराने में कोई तो कुछ देखने-बोलने वाला है नहीं? उसने सीना तानकर करीब-करीब चिल्लाकर अपनी बात कह दी।

थानेदार ने सिपाहियों की ओर ताका। अगले ही पल उसके मेहमान की गाड़ी छोड़ दी गयी।

संपर्क : भारतीय साहित्य सृजन संस्थान, 62/2, हारून नगर कॉलोनी, फुलवारीशरीफ, पटना-801505

चप्पल की प्रतिष्ठा

❑ डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव

संसद में स्वदेशी आंदोलन पर बहस चल रही थी। कुछ लोग सुन रहे थे, कुछ ऊंघ रहे थे। सीट के नीचे दो चप्पलें आपस में बात कर रही थीं। एक चप्पल ने दूसरी सीट वाली को टोका- 'क्यों बहन, तुम भी सो गई क्या? दूसरी ने जवाब दिया- 'सोऊं नहीं तो क्या करूँ। तीन दिनों से एक ही बहस सुनते-सुनते कान पक गए हैं? ये सांसद लोग मन की भड़ास निकालने में आगे रहते हैं और अमल करने में पीछे। मेरे साहब पिछले साल मुझे लंदन की एक दुकान से खरीदकर लाए थे। हंसते हुए सेल्स गर्ल से कहा था-मैं भारत का एम०पी० हूँ। लंदन से कुछ अच्छी चप्पलें खरीदकर ले जाना चाहता हूँ।

चंचल सेल्स गर्ल ने मेरे जवान एम०पी० का दिल जीतते हुए कहा- 'सर आप लोग अपनी पार्लियामेंट में स्वदेशी माल अपनाने के लिए जोर देते हैं और लंदन से चप्पल ले जा रहे हैं। एम०पी०जी बोले 'हम इतने स्वदेशी नहीं हैं कि विदेश की ओर देखें ही नहीं। मेरे दो बेटे लंदन में पढ़ रहे हैं और अब तो ग्लोबलाइजेशन का जमाना है। हम कूपमंडूक जैसे कब तक बने रहेंगे।' दूसरी चप्पल ने जिज्ञासा की- 'तू लंदन से आई है तो तेरी बड़ी इज्जत होती होगी। "इज्जत क्या खाक होगी। मेरे साहब पार्लियामेंट में बहस करते रहते हैं और जब हंगामा मचता है तो अपने पांव से मुझे निकाल हवा में उछाल देते हैं। तब तो मेरे प्राण ही सूख जाते हैं। एक बार उन्होंने मुझे घुमाकर ऐसा फेंका कि मैं एक बूढ़े एम०पी० के सिर से जा टकराई। बेचारे के माथे पर खून निकल आया।' तुम तो देशी हो पता नहीं तुम्हारे साथ कैसा सलूक होता होगा।

दूसरी चप्पल ने रुआसा होकर जवाब दिया- 'सलूक की मत पूछो। मैं देशी हूँ इसलिए उनका नौकर भी मेरी तरफ ठीक से नहीं देखता। बरसात में जब सड़कों पर कीचड़-कादो होता है उसी समय मुझे पहना जाता है। मेरी भी तमन्ना थी पार्लियामेंट में जाकर बहस सुनने की। उस दिन जल्दी-जल्दी में सांसद जी ने मुझे ही पहन लिया। मैं संसद भवन में आ गई। रास्ते में एक कील गड़ी तो उन्होंने भद्दे भद्दे शब्दों में हिन्दुस्तानी माल को कोसा और जब संसद में मतदान हुआ तो उन्होंने देशी वस्तुओं के समर्थन में मतदान किया। घर लौटकर उन्होंने मूझे उतार फेंका और बोले- इस देश में बना हर माल घटिया होता है। आधे घंटे तक वे विदेशी वस्तुओं की प्रशंसा करते रहे। दूसरी चप्पल ने उसे समझाया-आजकल के नेता होते ही ऐसे हैं। तुम आश्यर्च मत करो। अब हर दशरथ के घर में भगवान राम ही जन्म लेते हैं। माल-मवेशी चरानेवाली औरत नूरजहां बन गद्दी पर बैठ जाती है। मेरे साहब अपने पिता की मृत्यु के बाद उनकी जगह एम०पी० बन गए। उसके पहले जब वे राज्य विधानसभा के सदस्य थे तब बहस और लड़ाई झगड़ों में विरोधी दल पर तीन जोड़ी चप्पलें फेंक चुके थे।

इनके इस शौर्य से प्रभावित होकर पार्टी हाईकमान ने उन्हें दिल्ली बुलाकर एम० पी० का टिकट दे दिया। कैसी विडंबना है बहन, कुछ लोग चप्पलें घिस-घिस कर नेता बनते हैं और कुछ चप्पलें फेंककर। हमारी दुर्गति बड़े लोग ही करते हैं। जब मैं उनके पांव में नई-नई आई थी तो उनके घर के लोग मेरी हील की बड़ी तारीफ करते थे कि मैं एक ही बार में किसी के भी सिर के दो टुकड़े कर दूंगी। मुझे देखकर विरोधी दल को छठी का दूध याद आ जाएगा। हे भगवान, आदमी भी क्या जीव है। जनसेवा का प्रमाण-पत्र पाकर वह जानवर बन जाता है। रंग बदलने में वह गिरगिट से भी आगे है। सत्ता के लिए लड़ते जरूर हैं पर भीतर-भीतर इनकी मिलीभगत होती है। पिछली बार अपनी तनख्वाह बढ़ाने के लिए किस तरह एकजुट हो गए थे। सच पूछो तो आज की राजनीति सुविधाओं का चिंतक और भोग का पर्याय है। पार्लियामेंट में गरीबी रेखा का सवाल उठाया जाता है और बाहर गरीबों को लूटा जाता है।

सब जगह गड़बड़ है पर अखबार में खबर आती है कि जनजीवन सामान्य है। पहली चप्पल बोली-'मेरे एम०पी० साहब ने देश की सुरक्षा पर बोलते-बोलते कह दिया था कि इस पार्लियामेंट में किसी की चप्पल तक सुरक्षित नहीं है। दूसरे दल के सांसदों ने संशोधन किया- संसद के प्रत्येक सत्र में चप्पल-जुते फेंकने के लिए कोई दिन निर्धारित किया जाए। जिनका सिर या शरीर कमजोर हो वे उस दिन पार्लियामेंट में न आवें। इस प्रस्ताव पर अध्यक्ष जी ने कहा-भविष्य में सदस्यों की इस भावना का सम्मान किया जाएगा। सदन में किसी भी नेता की चप्पल को समुचित प्रतिष्ठा मिलेगी। सदन करतल ध्वनि से गूँज उठा!

संपर्क : 7 आर, उत्तम नगर, नई दिल्ली

लोकतंत्र की लाश पर नेताजी का.....?

❑ उपेन्द्र सिंह रावल 'उपेन्द्र'

आहते में रखी लाश पर,
करते हुए झाड़ पोंछ
ढूंढते हुए नए मुद्दे,
चुनावी जंग के
पढ़ते हुए मंत्र असफलता,
झूठ और छलावे के,
जनता को बहलाने
निज हाव-भाव और
बनावटी वाक् चतुरता से
इन्हें मारा है विदेशी ताकतों ने
या आतंकियों के कहर ने,
इन्हें मारा है रंजिशी शत्रु ने,
कर के एक्सीडेंट सड़क पर।
सी बी आई इन्क्वायरी होगी इसकी
पूरे वैधानिक रूप से,
और 'कमीशन' गठित होगा,
जो करेगा जांच पूरी एक वर्ष में,
भागी होगा कड़े से कड़े दंड का वह
नहीं वख्शा जाएगा उसे कहीं भी
किसी भी रूप में।
पर कुछ कार्य, कुछ सपने एवं
कुछ संकल्प,
जो हैं अधूरे हैं 'इनके' असमय
चले जाने से।
उन्हें पूरा करना हमारा धर्म है।
अहसान नहीं होगा 'इन' पर
एक ट्रस्ट बनाएंगे 'इन्हीं'
के नाम से
ध्येय जिसका भी होगा यही,
और जनमें सहस्त्र सेवा भक्त
ऐसे ही इस देश में।
इस सड़क को जानेंगे लोग
इन्हीं के नाम से,
सामने चौक पर खड़े होंगे 'ये'
अपने संगमरमरी रूप में
देते हुए भाषण शहीदी रूप में,
संस्थान भी होगा इनके विषद
साहित्य,
शोध कर, लोग जानेंगे इनके,
दर्शन से विचारों से इन्हें
नाम होगा इनका सारे देश में
आदर सहित,
आत्म शांति भी मिलेगी तभी
इन्हें स्वर्ग में,
और मुझको यहाँ
सेवा समर्पण (मुद्दा) से
चूंकि काम आया देशहित
इनका 'अमर' बलिदान है।

संपर्क: 1711/3, न्यू माता रोड
राजीव नगर,
गुड़गाँव 122001

सभ्य समाज बनाना है

❑ डॉ.सर्वेश चन्द्र प्रभाकर

कर में अगर कृपाण गहा तो
उठते सर को कलम करो।
तेरे आगे जो सर झुकता,
उसको तो तुम नमन करो।
सर झुकाने वालों के
हाथ कभी नहीं उठते हैं।
क्षमा का भी हकदार वही,
जिसका सर झुक जाता है।
सूरमा वे ही कहलातें,
रग में जो कौशल दिखलाते हैं।
निहत्थे शत्रु को वे
प्राण दान ही देते हैं।
युद्ध नीति का करते पालन
सत्य न्याय पर चलते हैं।
खेत आयें या विजय पायें
परवाह न इसकी करते हैं।
वे अपने पथ के हैं प्रहरी,
संहारक नहीं, सुधारक हैं।
कट मर कर भी संदेश बाँटते,
वे ही सच्चे नायक हैं।
सभ्य समाज के हैं जो सृजक,
सभ्यता के सबल समर्थक हैं,
पथ से भटके पथिकों को भी,
राह सही दिखलाते हैं।
तलवार की धार पर चलते हैं वे,
तलवा नहीं सहलाते हैं।
ऐसे सूर-वीर ही जग में,
पौरुषवान कहलाते हैं।
उन्हें न चाहिए तख्त-ताज,
औार न चाहिए गले-हार।
उन्हें चाहिए रणभूमि में,
कृपाण और तलवार।
युद्धभूमि में लड़कर वे,
कौशल अपना दिखलाते हैं।
पीठ दिखाकर पलायन कर वे
कायर नहीं कहलाते हैं।

संपर्क : न्यू कुंज आवासीय कॉलोनी
नालन्दा मेडिकल कॉलेज
के सामने, पटना -20

पाँच हाइकु कविताएं

❑ नलिनीकान्त

भोर के प्रार्थी
हम तो सूर्योदयी
प्रसन्न पाखी।

कसम तुम्हें
जागो और बंधालो
देश की राखी।

तू तो अरे
बलिदानों के चिर
हठीले साथी।

डाल डाल पै
फक्कड़ कबीर की
गाते हैं साखी।

बुला रही है
सीमा पर तुम को
अपनी माटी।

संपर्क:-अंडाल, प० बंगाल- 713321

ग़ज़ल

❑ मुसाफिर देहलवी

तेवर फिजॉ के बदले हैं, कुछ इस अंदाज से।
घायल परिन्दा लड़ रहा हो, जैसे बाज से।।

मुमकिन नहीं है दोस्त, जमाने को बदलना।
कब तक लड़े आखिर कोई, अंधे समाज से।।

बकरी बनी है आज सियारों की सरगना।
शेर खुद हैरान है, जंगल के राज से।।

ऐटम की जंग कहने को आसान बहुत है।
वाकिफ बहुत जापान है इसके मिजाज से।।

चेहरे से बदलती नहीं इंसान की फितरत।
आईना कह रहा था, ये आईना साज से।।

गुजरात के दंगे क्या जाने गुल खिलाएंगे।
सत्ता बदल गई, यहां आलू पियाज से।।

मस्जिद से आ रही थी, ये मुल्ला की सदाएं।
भरता नहीं है पेट अब खाली नमाज से।।

द्रौपदी की लाज रखने को घनश्याम आए थे।
मजलूम की इज्जत लुटी, मुठ्ठी अनाज से।।

पश्चिम के रंग में रंग गया, इंसान आज का।
हैरान है खुद अपने ही रीति रिवाज से।।

अयोध्या में कैसे बोलिए, श्री राम आएंगे।
अभिषेक क्या करोगे तुम कांटों के ताज से।।

मजहब के नाम पर जहां दंगे हों 'मुसाफिर'।
बाज आए खुदा ऐसे तेरे राम राज से।

संपर्क: 34-एफ, आराम बाग,
नई दिल्ली

नव वर्ष मंगलमय हो।

शाश्वत, सुनो

❑ कुमार रवीन्द्र

शाश्वत, सुनो
नए मौसम में पेड़ नहीं होंगे

तुम होगे
ये 'इंटरनेट' के जंगल होंगे
नदी-ताल-सागर होंगे
वे निर्जल होंगे

चुस्त-दुरूरत
तुम्हारे सपने, सुनो, वहीं होंगे

आसमान तक
अमरबेल ही फैली होगी
सबके हाथों में
सोने की थैली होगी

चमगादड़-उल्लू ही
केवल कहीं-कहीं होंगे

पोथी में तितली-भौंरे का
जिक्र मिलेगा
पूजाघर में
'कम्प्यूटर' का चित्र मिलेगा

घर है यह
दादी-बाबा के चित्र यहीं होंगे।

रोज नए फैशन के चेहरे

क्या बतलाएं
इस घर के बच्चे उदास हैं

घर में सब कुछ हैं-
फ्रिज, टी.वी. और कम्प्यूटर
सूना कब से
नदी-किनारे का पूजाघर

'वेबसाइट' भी
हर बच्चे के लिए खास है

जुड़े हुए हैं सारे कमरे
'डॉट. कॉम' से
सपने 'बुक' हैं
हर बच्चे के अलग नाम से

मम्मी-पापा के
कमरे बस पास-पास हैं

धरती-पेड़-हवाएं
घर से बहुत दूर हैं
आसमान की बातें
इस घर में जरूर हैं

रोज
नए फैशन के चेहरे और लिबास हैं।

संपर्क: क्षितिज 310 अर्बन एस्टेट-2
हिसार-125005, हरियाणा

जब से देखी तेरी बिंदिया

❑ कुमारी आरती

जब से देखी तेरी बिंदिया, तब से
मुझको आई ना निंदिया।
जब फूल खिले किसी पहाड़ पे
तो भौंरा बोला, मैं तुम्हारे रस
को चूसना चाहता हूं,
तो फूल ने कहा, क्या मैं तुम्हें पसंद हूँ?

संपर्क:-7.5, आर.सी.पी.डब्लू.डी. कॉम्प्लेक्स
बसंत विहार कॉलोनी, नई दिल्ली

MAHESH HOMOEPATHIC LABORATORY

&

GERMAN HOMOEO STORES

Saket plaza, Jamal Road,

Patna-800001

Ph:(0612) 2238292(O) 2674041 (R)

Offers a wide range of mother Tinchers, Dillutin Biochemic Tablet patents, Globels

Dr. Mahesh Prasad
D.M.S. (patna)

Dr. Arun kumar
D.H.M.S (patna)

Spcialist in chronic Diseases

रचनाकारों से

(1) रचना भेजने के लिए कोई शर्त नहीं है, सभी रचनाकारों का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। उदीयमान रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किए जाने का प्रयास रहेगा।

(2) राष्ट्रीय भावनाओं पर आधारित तथा वैचारिक रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।

(3) रचना एक तरफ/कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड अथवा सुवाच्य स्पष्ट लिखी होनी चाहिए।

(4) रचना के अंत में उसके मौलिक अप्रकाशित व अप्रसारित होने के प्रमाण पत्र के साथ रचनाकार का नाम व पूरा पता अवश्य लिखा होना चाहिए।

(5) रचना के साथ पासपोर्ट/स्टाम्प आकार की श्वेत एवं श्याम तस्वीर की दो प्रतियाँ अवश्य संलग्न करें।

(6) प्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं की जाती, कृपया उसकी प्रति अवश्य रख लें।

(7) प्रकाशित रचनाओं पर फिलहाल पारिश्रमिक देने की कोई व्यवस्था नहीं है, हाँ, रचना प्रकाशित होने पर अंक की प्रति अवश्य भेजी जाऐगी।

(8) किसी भी विधा की गद्य रचनाएं 1500 शब्दों अथवा दो पृष्ठों की मर्यादा में ही स्वीकार्य होंगी।

(9) समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियां भेजना आवश्यक है।

(10) रचनाएं कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड कराकर उसे इन्टरनेट पर भेजें जिसका E-mail - vicharbharat@hotmail.com

सिद्धेश्वर
सम्पादक, विचार दृष्टि
दृष्टि 6, विचार बिहार, यू 207, शकरपुर, विकास मार्ग
दिल्ली-92, दूरभाष: (011) 22530652

भारतीय राजनीति में बढ़ती सत्ता एवं संपत्ति की लिप्सा और देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

विगत 3 दिसंबर 2002 को राष्ट्रीय विचार मंच की बिहार इकाई द्वारा पटना के सिन्हा लाइब्रेरी सभागार में आयोजित देशरत्न डॉ राजेन्द्र प्रसाद की 118 वीं जयंती के अवसर पर मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर ने इस विषय पर एक आलेख का पाठ किया, जिसे पाठकों के लिए यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

यों तो जीवन के हर क्षेत्र में पद और पैसे की लालसा बढ़ी है पर भारतीय राजनीति में जिस प्रकार आगे की कई पीढ़ी तक के लिए संपत्ति अर्जित कर लेने की लिप्सा बढ़ी है वह भारतीय लोकतंत्र के लिए खतरे के संकेत हैं। क्योंकि न केवल इससे यहाँ की राजनीति की साख घटती जा रही है बल्कि सत्ता और संपत्ति की लालसा ने पूरे सामाजिक जीवन को भी छिन्न-भिन्न कर रखा है। कहीं भी यह चिंता दिखाई नहीं देती कि देश का आम आदमी किस बदहाली की जिंदगी जी रहा है।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि एक ओर जहाँ राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, केंद्रिय एवं राज्य के मंत्रियों, सांसदों, न्यायधीशों, विधायकों और अधिकारियों-कर्मचारियों के वेतन एवं भत्ते में वृद्धि हो रही है तो दूसरी ओर नगरों एवं कस्बों के कुछ खास वर्गों की चमक-दमक बढ़ रही है। इसका सीधा असर आम लोगों की मानसिकता पर पड़ता है और इसके परिणामस्वरूप ईर्ष्या की उत्तेजना उत्पन्न हो रही है। दिन-ब-दिन दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों पर किए जा रहे विज्ञापनों से विलास और शोभा की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है जो गरीबों की हताशा को उकसाते हैं। पहले संत-महात्मा और मुनि-ऋषि संतोष एवं मितव्ययिता का संदेश देते थे, अब वे स्वयं भोग-विलासी बन गए हैं तथा सांप्रदायिक राजनीति में लिप्त हैं।

एक जमाना वह था जब राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की सादगी, बुद्धिमत्ता, निष्ठा और इमानदारी की आम लोगों के बीच चर्चा होती थी और आज समाज में आम धारणा यह है कि जो जितना धन जैसे भी कमा सके, जितनी शान शौकत से रह सके वह वस्तुतः उतना ही सफल है। राजनेता भी इसी पर गुमान करते हैं और

प्रशासन में पनपता भ्रष्टाचार भी इसी का प्रतिफल है। इस पूरे खेल में जनता मूकदर्शक बनी है। उसके बीच से मुखिया सरपंच के पद पर जो लोग बैठ रहे हैं वे भी बहती गंगा में हाथ धोने से बाज नहीं आ रहे हैं। जनता ठगी-ठगी सी चौराहे पर खड़ी अपनी साध नेताओं की बढ़ती हुई चकाचौंध से पूरी कर ले रही है।

समाज का वातावरण यदि आज विषाक्त हो रहा है और उनके बीच अनेक बुराईयाँ जो पनप रही हैं तो उसकी जड़ में भी पद और पैसे की प्रवृति काम कर रही है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि सामाजिक एवं सार्वजनिक जीवन में धन के महत्व को कम किया जाए और सत्ता को अनावश्यक सम्मान नहीं दिया जाए। सत्ता और संपत्ति की लालसा जबतक कम नहीं होगी, तबतक सामाजिक समरसता कायम नहीं हो सकती और सामाजिक समरसता के बिना स्वस्थ एवं समतामूलक समाज की स्थापना नहीं की जा सकती। एक स्वस्थ एवं सबल राष्ट्र भी बिना स्वस्थ समाज के संभव नहीं। इसलिए सत्ता और संपत्ति के प्रति लोभ की वृति को बदलने का सूत्र ढूँढ़ना होगा।

आज यह देश लक्ष्यहीनता से ग्रस्त है। आदमी लिप्त है हिंसा और सांप्रदायिक कट्टरता में। उसने सह-अस्तित्व और वसुधैव कुटुंबकम के आदर्श, मैत्री, करुणा व सहिष्णुता को भुला दिया है और केवल कुर्सी, सत्ता और धन लिप्सा ही उनका लक्ष्य बन गया है। यही कारण है कि मानवीय संबंधों में कटुता और बिखराव आने लगे हैं।

देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की 118वीं जयंती पर जब उन्हें आज याद करते हैं तो पाते हैं कि उन्होंने त्याग, सेवा, शील, सादगी और संयम के आधार पर अपना नेतृत्व शक्तिशाली बनाया जो अतत: अपराजेय रहा और जिसका आज की राजनीति तथा राजनेताओं में नितांत अभाव दिखता है। साधना, नैतिक राजनीति, अनाशक्त, कर्मयोग, शीलव्रत तथा परोपकारवृतिपोषक लोक संग्रह जो गाँधीवादी चिंतन के मूल तत्व राजेन्द्र

बाबू के व्यक्तित्व में परिलक्षित होते थे, वे आज के नेताओं में रत्ती भर भी देखने को नहीं मिलते। आज की राजनीति का सच कहा जाए तो व्यवसायीकरण हो चुका है। उसमें अपराधियों का बोलबाला हो गया है। जो भी उसमें प्रवेश करता है उसका प्रथम और अंतिम लक्ष्य गद्दी और धन बटोरना ही होता है। संसद और विधान सभाएं अपने कर्तव्य निर्वहन में असमर्थ रही हैं। सांसद और विधायक सभी मूल्य-मर्यादाओं को ताख पर रख अपनी भूमिका अदा कर रहे हैं। घोटाले पर घोटाले होते चले जा रहे हैं पर किसी राजनेता के कान पर जूँ तक नहीं रेंगता। यह संसद का ही काम था कि वह घोटालों पर नजर रखती, दोषियों को सजा देती, लेकिन वह मूक बधिर बनी रही। यहाँ तक कि कई काले कारनामों पर संयुक्त संसदीय-समिति की रपटें भी ठंढे बस्ते में डाल दी गयीं।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि लोकतांत्रिक व्यवस्था को सर्वाधिक क्षति विधायिका के आचरण ने पहुँचाई है। विधायिका के सदस्यों की स्वार्थपरता और संकीर्णता के कारण ही देश में भ्रष्टाचार, जातीयता, सांप्रदायिकता एवं अपराधीकरण को बढ़ावा मिला है। उनके द्वारा सार्वजनिक कोष का दुरुपयोग बेमिसाल है। देश के प्रधानमंत्री पर चारसौबीसी के मामले एक असाधारण घटना है।

आज राजनीतिक दल और उनके नेता जनता और सरकार के बीच सत्ता के दलालों की तरह आचरण करते हैं। ये सत्ता के दलाल सत्ता पर हर कीमत पर बने रहते हैं और सारी सत्ता कुछ मुट्ठी भर हाथों में केंद्रित होकर रह जाती है। प्राय: अधिकतर राजनीतिक दलों में लोकतांत्रिक व्यवस्था न होकर एक व्यक्ति में सारी शक्तियाँ सिमट कर रह गयी हैं।

ऐसा भी नहीं कि राजनीतिक दलों में चरित्रवान, त्यागी, निष्ठावान तथा समर्पित नेता तथा कार्यकर्ता का अभाव है किन्तु वे राजनीतिक अपराधीकरण के चलते नेपथ्य में चले गए हैं। उनकी कोई पुछ नहीं है क्योंकि उनके स्थान पर बाहुबलियों, धनपशुओं, जातिबलियों तथा आपराधिक तत्वों का एकाधिकार है जो शासन-प्रशासन को ही नहीं वरन संपूर्ण समाज को कठपुतली की तरह नचा रहे हैं। सारा लोकतंत्र उनके विनाशकारी खेल से बेचैन तथा बेहाल है। आज भारतीय राजनीति आपराधिक प्रदूषणों से घिरा है और भारतीय लोकतंत्र अपनी अंतिम सांस गिन रहा है। इस राजनीतिक प्रदूषणों के संक्रामक कीड़े हमारे सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक आदि अंगों-प्रत्यंगों में लग गए हैं जिससे छुटकारा पाने की छटपटाहट तो है पर नेतृत्व के अभाव में जनता आंदोलित नहीं हो पा रही है। प्रबुद्धजन भी तटस्थ हैं, मूकदर्शक हैं। आज जब चारों ओर मूल्य-मर्यादाओं का विघटन हो रहा है, सेवा, समर्पण आदर्श, त्याग जैसे शब्द या तो अपना अर्थ बदल बैठे हैं या अपनी संगति खोते जा रहे हैं, देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद के आदर्शों से प्रेरणा लेनी होगी तथा संवेदनशील लोगों को आगे आकर जन-चेतना जाग्रत करने का प्रयास करना होगा।

राजधानी की राजनीति भी मेट्रो रेल की तरह खूबसूरत हो

– उपराष्ट्रपति

भारत के उपराष्ट्रपति भैरो सिंह शेखावत ने कहा कि राजधानी की राजनीति कश्मीरी गेट से शहादरा मेट्रो रेल की तरह खूबसूरत होनी चाहिए। डीएमआरसी द्वारा राष्ट्रीय राजधानी को एक सुरक्षित व तीव्रगामी यातायात की दी गई सुविधा को उन्होंने राजधानी के लिए एक नए मेट्रो कल्चर का तोहफा बताया। मेट्रो ट्रेन में उपराष्ट्रपति के साथ शहरी विकास मंत्री अनंत कुमार, डीएमआरसी के अध्यक्ष मदनलाल खुराना, दिल्ली के परिवहन मंत्री अजय माकन तथा मेट्रो

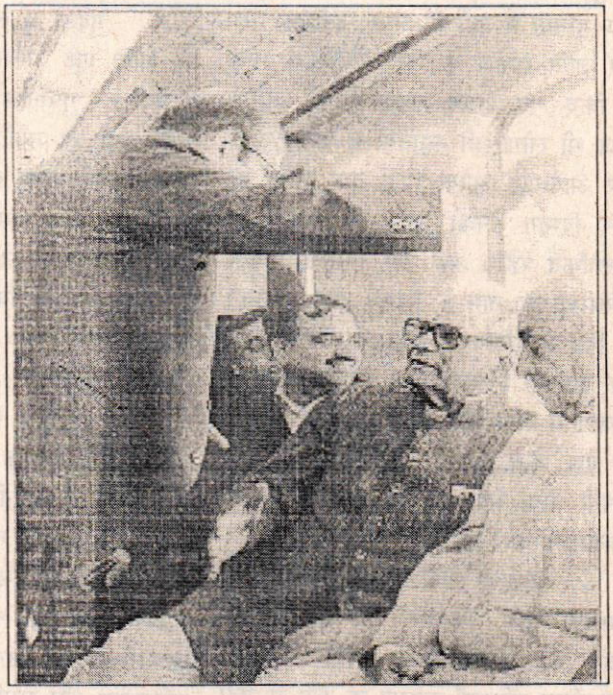

के प्रबंध निदेशक श्रीधरन भी थे। सफर के पूर्व उपराष्ट्रपति ने स्वयं खिड़की के पास जाकर कार्ड खरीदा। उपराष्ट्रपति के इस सफर की वजह से दिल्ली के यात्रियों को शाहदरा तथा अन्य मेट्रो स्टेशनों पर लगभग 40 मिनट तक इंतजार करना पड़ा। इसके बाद 24 राज्यपालों ने भी इस मेट्रो रेल से सफर कर लूफ्त लिया।

–अनुज कुमार, दिल्ली से

गीतकार त्रिपाठी की 77वीं जयंती का आयोजन

राजेन्द्र साहित्य परिषद् द्वारा पिछले दिनों पटना के आईआईबीएम सभागार में आयोजित गीतकार विन्ध्यवासिनी दत्त त्रिपाठी के 77वें जयंती - समारोह के अवसर पर परिषद् के अध्यक्ष डॉ० शिववंश पांडेय सहित डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी', डॉ० मिथिलेश कुमारी मिश्र, गोवर्धन प्रसाद 'सदय', विचार दृष्टि के संपादक सिद्धेश्वर तथा कैलाश प्रसाद स्वछंद आदि वक्ताओं ने कहा कि त्रिपाठीजी ने अपनी कविताओं में सामाजिक -राष्ट्रीय चेतना को अभिव्यक्ति दी है। वे किसी विचारधारा के प्रति प्रतिबद्ध नहीं थे लेकिन संवेदना के स्तर पर जन पक्षधरता ही उनकी विशिष्टता थी। -दीपक कुमार,पटना से

"बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ" और "छत्रपति शिवाजी"

बाबू गुप्तनाथ सिंह, यह उस महापुरुष का नाम है, जो जिस्मानी तौर पर आज दुनिया में नहीं हैं, मगर मानवता, देश और जाति-समाज के लिए निःस्वार्थ भाव से किए गए अपने सद्कार्यों के कारण आज भी लोगों की स्मृतियों में बने हुए हैं और आनेवाले अनेक दिनों तक लोगों के दिलो-दिमाग उनकी यादों की रोशनी से आलोकित रहेंगे। यह उस निराली नायाब शख्सियत का नाम है, जिसने होश संभालने के दिन से दुनिया से रूखसत होने के दिन तक लगातार निरंतर अनेक कारगुजारियों के अंजाम में लगा रहा। प्रतापी पुत्र के रूप में ही ऐसे जन्म लेते हैं, और बड़ा होने पर अपनी सेवा-सदाकत से जन-समाज को मालामाल कर देते हैं।

ऐसे ही लोगों को देखकर राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' को वह कविता रचने की प्रेरणा मिली होगी, जिसकी निम्नांकित पंक्तियाँ उद्धरण के रूप में यहाँ प्रस्तुत हैं-

"मरणोपरांत जीने की है यदि चाह, तुझे,
तो सुन बतलाता हूँ सीधी राह तुझ लिख
ऐसी कोई चीज, कि दुनिया डोल उठे या
कर कुछ ऐसा काम, जमाना बोल उठे।"

हमारे चरितनायक गुप्तनाथ बाबू पर इस कविता में अन्तर्निहित दोनों भाव पूर्णतः भलिभांति चरितार्थ होते दीख पड़ते हैं। उन्होंने चीजें भी कुछ ऐसी लिखी हैं, जो दुनिया को डोला देने की सामर्थ्य रखती हैं और काम भी ऐसा कुछ किया है- जिसके गुणगान में जमाना बोल उठता रहा है। ऐसे महान पुरुष को पाकर धरती धन्य हो जाती है, जिस माँ की कोंख से ऐसे नररत्न उत्पन्न होते हैं, उसकी कोंख पवित्र हो जाती है और जिन पिता के आत्मज बन ऐसे पुत्र अस्तित्व में आते हैं, उनका पौरुष पराक्रम सार्थक हो जाता है।

गुदड़ी में लाल और धूल में हीरे की भाँति एक अत्यंत ही सामान्य परिवार में पैदा हुए गुप्तनाथ बाबू ने जिस क्षेत्र में कदम रखा वह ज्योतित आलोकित हो गया। जिस अनगढ़ पत्थर को अपना पारसी स्पर्श नसीब होने दिया, वह स्वर्ण में परिवर्तित हो गया, जिस कार्य को अपने हाथ में लिया, उसे सफलमंडित किया, जिस मिशन का सूत्र संभाला, उसे परिपूर्णता के आखिरी छोर पर पहुँचाया।

गुप्तनाथ बाबू का कार्यक्षेत्र तो जैसे बड़ा ही व्यापक, सुविस्तृत और विशाल था, फिर भी राजनीति, समाज सेवा और अपने क्षेत्र विशेष की उन्नति, मूलतः इन तीन दिशाओं में उन्होंने सर्वाधिक सक्रियता दिखलाई थी और ये सारी दिशाएं प्रचुरत; लाभान्वित हुई उनकी निराली सूझबूझ, प्रतिबद्धता और समर्पित भाव से कार्य करने की उनकी निराली शैली और पद्धति से।

जबतक गुप्तनाथ बाबू जीवित रहे, अपनी आश्चर्यजनक, अविश्वसनीय कारगुजारियों करतबों की वजह से एक जीतित किंवदंती सरीखे बने रहे और जब दुनिया से गुजर भी गए, तो इंसानी खिदमत और सदाकत की रोशनी भरी ऐसी चकमीली लकीरें छोड गए, जिन्हें देख-परख कर आदमी उनकी दिवंगत आत्मा के प्रति अव्यक्त, अनबोले श्रद्धापूर्ण उद्गार प्रकट किए बगैर रह नहीं सका। अपने निधनोपरांत, सशरीर लोगों को नहीं दिखने वाले गुप्तनाथ बाबू का अस्तित्व तो नहीं रहा, मगर जिन पगडंडियों पर वह चलते रहे थे, उनपर उभर आये उनके कदमों के निशान कायम रहे।

गुप्तनाथ बाबू के पार्थिव शरीर को अश्रुपूरित नेत्रों से विदायी देकर अथवा उनके जन्म-मरण वाली तिथियों को उन्हें सम्मानपूर्ण श्रद्धाजलियाँ अर्पित करने का सलिसिला तो जारी है और आगे भी जारी रहेगा, मगर उनके द्वारा सम्पन्न कार्यकलापों का सुविस्तृत विवरण, उनके दिल दिमाग की खूबियाँ, उनके आचरण व्यवहार की अद्भूत विशेषताएँ आने वाली पीढ़ी तक अक्षुण्ण रहे, इस उद्येश्य से उनके क्षेत्र से संबंधित लोगों ने उनकी स्मृति समिति बनाकर उनके कार्यों को सम्पन्न करने की योजनाएँ बनाई है- जिन्हें प्राथमिकताओं के आधार पर अमली जामा पहनाया जा रहा है।

इस संदर्भ में उनके संबंध में किए जा रहे दो प्रमुख कार्य संपन्न हुए हैं पहला उनके संबंध में स्मृति ग्रंथ का प्रकाशन और दूसरा अपने जीवन काल में श्रमसाध्य एवं कठोर परिश्रम द्वारा अनुसंधान छत्रपति शिवाजी नामक उनके उल्लेखनीय आर्ष ग्रंथ, पांडुलिपि का प्रकाशन।

ये दोनों कार्य श्रमसाध्य के साथ कठिन मिहनत और अटूट निष्ठा की अपेक्षा रखने वाले थे और सौभाग्य से इन्हें हाथ में लेनेवाले ऐसे सज्जनों की एक टीम भभुआ जैसे साधनहीन स्थान में निर्मित हो गयी, जिसने न केवल येन-केन प्रकारेण रस्मी तौर पर इन कामों को अंजाम दिया, बल्कि इसे ऐसे अभिनव रूप से सम्पन्न किया, जिससे और बेहतर की कोई गुंजाइश ही शेष नहीं थी।

बाबू गुप्त नाथ सिंह - स्मृति ग्रंथ में उनके व्यक्तित्व-कृतित्व संबंधी न केवल परम उपयोगी सूचनाप्रद निबंध संगृहीत हैं, बल्कि उसमें अन्य दुर्लभ ज्ञातव्य जानकारियाँ भी दर्ज हैं। इस श्रमसाध्य कार्य को सम्पन्न

करने के उपलक्ष्य में उसके संपादक की सराहना की जानी चाहिए।

इस कार्य के प्रबंधन पक्ष से जुड़े सामान्य रूप से सभी और विशेष रूप से सर्वश्री लक्ष्मी सिंह और बिहार वित्त सेवा के तेजस्वी पदाधिकारी संजय कुमार राव शतशः धन्यवाद के अधिकारी हैं। राव साहब ने तो इस कृति के प्रकाशन को उदारतापूर्वक ऋण शोध की संज्ञा दी है। जीवंत रूप में तो गुप्तनाथ बाबू का दर्शन संभव नहीं है, मगर इस कृति के दर्पण में उनके बहुआयामी व्यक्तित्व और उनके जन-हितकारी स्वरूप के विविधवर्णी चित्र सदैव प्रतिबिम्बित होते रहेंगे।

इस पुस्तक के प्रकाशन से अंग्रेजी कवि H. W. Longfellow की उक्ति अक्षरशः चरितार्थ होती है। आंग्ल भाषा में व्यक्त उद्‌गार का निम्नांकित रूपान्तरण अनुवर्ती पक्तियों में प्रस्तुत है:-

"जीवन गाथा महापुरुष की
हमको यही सिखलाती है,
हम भी ऊँचे उठ सकते हैं,
जीवन उदान्त की थाती है,
जब ये महापुरुष जाते हैं,
हमे छोड़कर धरती पर,
रह जाते हैं सिर्फ चिन्ह उभरकर,
सदा समय की रेती पर।।"

गुप्तनाथ बाबू द्वारा मराठों के मसीहा छत्रपति शिवाजी नामक ग्रंथ का प्रकाशन भी उतना ही उत्कर्षकारी और स्वागत योग्य सत्‌कार्य है। शिवाजी पर बहुत सारी इतिहास पुस्तकें अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य देशी-विदेशी भाषाओं में लिखी गई हैं। कवियों, उपन्यासकारों, नाटककारों इत्यादि ने भी अपनी अपनी विधाओं में उनकी यशोगाथाएँ लिख कर प्रकाशित करवायी हैं। इतना होने पर भी उनके संबंध में फैलाई गई पूर्वाग्रहपूर्ण बहुतेरी का पूर्णतः निराकरण नहीं हो पाया था। कुछ लोगों ने शिवाजी, जैसे नरपुंगव उदात्त, महानायक, देशोंद्धारक, सभ्यता-संस्कृति के महान रक्षक को पहाड़ी चूहा जैसे अपशब्द भरे विशेषणों से अपमानित करने की दुष्चेष्टाएं की है। गुप्तनाथ बाबू अपने धीरोदात्त चरितनायक शिवाजी के व्यक्तित्व,उनके अवदान से प्रभावित थे और उनकी पूर्वग्रहविहीन वस्तुपरक जीवन ग्रंथ लिखकर प्रकाशित करना चाहते थे। भारी खोज और अनथक अनुसंधान करके वह अपने जीवन-काल में उस महाग्रंथ की पाण्डुलिपि तो तैयार कर लेने में सक्षम हो सके, मगर उसे प्रकाशित करने के पुण्य कार्य वाली अपनी चिरअभिलाषित आकांक्षा और पावन साध का अपने जीवन काल में अमली जामा पहनाने से असमर्थ रहे। गुप्तनाथ बाबू को उक्त पुस्तक को तैयार कर लेने के कारण अपार खुशी थी और अपने जीवन काल में जितने अच्छे कार्य उन्होंने किए थे, उनमें शीर्ष स्थान वह उक्त पुस्तक के प्रणयन की कामयाबी को देते थे। उनकी अधुरी साध, अपूर्ण स्वप्न को साकार करने का बीड़ा उनकी स्मृति से संबंधित समिति ने उठाया और उनकी जीवनी के साथ साथ उसे भी प्रकाशित कर सोने में सुहागे की उक्ति को चरितार्थ किया है।

संदर्भित दोनों ग्रंथ की छपाई सफाई, शुद्धता प्रस्तुति आदि का क्या कहना? लगता है कि क्षीर सागर में स्वर्ण कमल विकसित हो आये हों।

समिति ऐसी उपलब्धियों के लिए अतिशय प्रशंसा की अधिकारी है। एक सौ पच्चीस रुपये के अलग अलग मुनासिब मूल्य पर उपलब्ध इन दोनों पुस्तकों की प्रतियां सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत पुस्तकालयों की अमूल्य धरोहर साबित होंगी। सुप्रसिद्ध लेखक रामवृक्ष बेनीपुरी के शब्दों में **"महापुरुष सिर्फ एक बड़ा आदमी नहीं होता, एक प्रतीक होता है। ऐसे महान पुरुषों का वंदन-अभिनंदन व्यक्ति पूजा नहीं, आदर्श पूजा है और उसके कार्यों में हाथ बटाने की चेष्टा पुनीत यज्ञ।"**

अतएव, यदि इन दोनों सदग्रंथों के प्रणयन-प्रकाशन से संबंधित महापुरुषों के उच्च भावना से प्रेरित अति महत्वपूर्ण कार्यों को पूजा और यज्ञ की संज्ञा दी जाय, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

पुस्तक : बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ
संपादक : डॉ० गनौरी महतो
" डॉ० योगेन्द्र पाठक
समीक्षक : परमानंद दोषी
प्रकाशक : बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ समिति, भभुआ 11, जिला-कैमूर (बिहार)
पृष्ठ संख्या 285
सहयोग राशि 125 रु०

न्यायमूर्ति खरे भारत के 33वें मुख्य न्यायाधीश

न्यायमूर्ति विश्वेश्वर नाथ खरे ने उच्चत्तम न्यायालय में भारत के 33वें मुख्य न्यायाधीश का पद ग्रहण किया। 2 मई 1939 को जन्में न्यायमूर्ति खरे 25 जून 1983 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय में स्थाई न्यायाधीश नियुक्त होने के बाद 2 फरवरी 1996 को कोलकाता उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश हुए। फिर 21 मार्च 1997 को वे उच्चत्तम न्यायालय के नयायाधीश बनाए गए। उच्चतम न्यायालय में मुख्य न्यायाधीश के पद पर न्यायमूर्ति खरे 2 मई 2004 तक रहेंगे। शपथ लेने के बाद उन्होंने कहा कि उन्हें अपने न्यायधीशों पर पूरा विश्वास व भरोसा है। कमियां सभी जगह होती हैं। यदि कमी होगी तो उसे तार्किक और सही तरीके से निपटा जाएगा।

सात का संयोग

❑ रजनीश कुमार

1. सात समंदर
2. सात महादेश
3. शादी के सात फेरे
4. सात जनम
5. इन्द्रधनुष के सात रंग
6. सात अजुबा
7. सात सुर
8. सप्ताह के सात दिन
9. कबड्डी में सात खिलाड़ी होते हैं
10. मैं सातवें क्लास में पढ़ता हूँ

संत जेवियर्स स्कूल, पटना

करुणा का मार्ग दिखलाती लघुकथाएँ: 'चरैवेति'

सुप्रतिष्ठ शिक्षाविद् एवं साहित्यकार डॉ० सच्चिदानन्द सिंह 'साथी' के सद्य: प्रकाशित 40 लघुकथाओं का संग्रह 'चरैवेति' की रचनाओं से गुजरते हुए पाठक शैक्षिक, सामाजिक एवं अन्य समकालीन मूल्यों के क्षरण की त्रासदी को अत्मसात करते हुए भी उन रचनाओं के फलितार्थ से नि:सृत मूल्यबोधजनित नैतिकता के उजास से अपने को आत्मविमुग्ध पाएंगे। समीक्ष्य संग्रह की प्राय: सभी लघुकथाएं अपनी-अपनी दुनिया को परोसते हुए एक ऐसे विन्दु पर पाठकों को खड़ा कर देती हैं, जहाँ के बाद नए सिरे से मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के ब्याज से एक समरस समाज की प्रक्रिया आरंभ होती है। इस मानी में संग्रह की लगभग सभी रचनाएं अपने समय की चेतना को उद्घाटित करते हुए उसके केन्द्र में शोषित-वंचित समुदाय की पीड़ा को रेखांकित करना चाहती हैं। इन लघुकथाओं के अधिकांश पात्र युवा, बच्चे एवं वृद्ध हैं और इनमें परस्पर संवाद के माध्यम से जिस जटिल सामाजिक यथार्थ की विद्रपताओं से पाठकों को रू-ब-रू कराया गया है, उनमें पारम्परिक मूल्यबोध के चरमरा जाने में सामाजिक विकास के आदर्श का भी विलोपित हो जाना निदेशित किया गया है - जो अपने समकाल का त्रासद आख्यान प्रस्तुत करता है। अपनी भूमिका में डा० साथी ने लिखा भी है- 'लोक-बेलीक/पता नहीं किस लीक पर/पर यदि लघुकथाओं ने कोई/ अपनी ही लीक बना ली हो/ तो चौंकिए नहीं .....न तो कोई शास्त्रीय औजार ढूंढ़िए/ ढूंढ़ना ही है तो भीतर तलाशिए..... ....शायद ये लघुकथाएं.....आपकी हों..... और, आपके लिए हों.....।'

आलोच्य संग्रह की यों तो सभी रचनाएं अपनी-अपनी दुनिया की विषमताओं पर नश्तर चुभोती हैं, किन्तु 'अन्त:स्वर', 'अन्तहीन दर्द', 'अॅवार्ड', 'आत्मा की शांति के लिए', 'जनता जनार्दन', 'निरूत्तर', 'नेताजी हॉल्ट', 'पीड़ित मानवता के लिए', 'बायोडाटा', 'रिक्शा-किराया', 'लजवंती', 'शहीदों के मजारों पर .....', 'श्रद्धांजलि', 'श्रम की समिधा', 'सपन का सपना', 'सुकून का सुख', 'स्टॉफ के लिए' शीर्षक लघुकथाएं अपने आवेष्टन की विविध भावदशा की यात्रा कराती हैं। 'अन्त:स्वर' में यदि युवापीढ़ी के दिग्भ्रमित होने का कटु यथार्थ है, तो 'अन्तहीन दर्द' युवापीढ़ी के साथ-साथ पूरे तंत्र के लुंज-पुंज हो जाने की करुण कथा। 'अॅवार्ड' में सरकारी पुरस्कार को निरर्थक घोषित करते हुए समाज में पीड़ित जनों की सेवा से मिलने वाली सुखद अनुभूति की तृप्ति में ही 'सच्चा' अॅवार्ड मिलने जैसा भाव उद्घाटित किया गया है, तो 'निरूत्तर' शीर्षक लघुकथा नें दिखाया गया है कि चौड़ी होती आर्थिक खाई आदमी आदमी के बीच की दूरी को तो बढ़ा ही देता है, व्यक्ति की संवेदना को भी समृद्धि कुंठित कर देती है। 'आत्मा की शांति के लिए' तथा 'जनता जनार्दन' दो ऐसी लघुकथा है, जिसमें घटना अलग-अलग होकर भी समान रूप से युवा पीढ़ी में चेतना के विकास को उजागर करता है। 'आत्मा की शांति के लिए' रचना में एक ग्रामीण युवक झिंगुर की मां मर जाती है। वह गरीब है। मां के क्रिया कर्म के लिए पुरोहित ने जो फिहरिस्त दी है, उसके लिए उसे पचास हजार रुपये की जरूरत पड़ती है, जो उसके पास नहीं है। गांव का मुखिया उससे हमदर्दी जताते हुए पूरी रकम उसे दे देने का प्रस्ताव करता है, इस शर्त पर कि वह एक सदा कागज पर अंगूठा का निशान लगा दे। सामंती संरचना वाले समाज में ऐसे असंख्य किस्से पढ़ने को मिलते हैं, जहाँ कोई जमींदार किसी गरीब की थोड़ी-बहुत मदद कर उसकी पूरी जमीन कागज पर उसके अंगूठे के निशान लगवा कर हड़प जाता है, किन्तु इस लघुकथा में झींगुर ऐसा नहीं करता। वह नोटों का बंडल मुखिया की ओर उछाल देता है किन्तु अपने अगूठे को नीलाम चढ़ने से बचा लेता है। इसी तरह 'जनता जनार्दन' शीर्षक लघुकथा में वर्तमान राजनीतिक पृष्ठभूमि में 'जनता' और 'जनार्दन' के अर्थ विभेद को बताते हुए 'जनार्दन' के छद्म को रेखांकित करने के साथ साथ 'जनता' के 'जाग्रत' होने को भी उजागर किया गया है। इस रचना में एक नेताजी सुदूर गांव में जाकर वहाँ की हजारों जनता को तरह-तरह के लुभावने सपने दिखाकर वोट मांगता है। नेता के भाषण से उस गांव के दीनू को विश्वास हो जाता है कि अब उसकी गरीबी तो दूर होगी ही, उसके बेटे मोती को नौकरी भी मिल जाएगी। मेरे अच्छे दिन लौटेंगे-यह सोच-सोचकर दीनू खुश है और अपने सुख के भांति भांति के सपने देखने लगता है। चुनाव में नेताजी जीत कर राजधानी लौट जाते हैं। एक दिन दीनू अपने पुत्र मोती को लेकर नेताजी के राजधानी स्थित बंगले पर हाजिर होता है। वहाँ प्रहरी उसे अंदर दाखिल होने नहीं देता। हंगामा हो जाता है। दीनू अन्दर जाना चाहता है, जबकि प्रहरि जाने नहीं देता। तभी वहाँ नेताजी की गाड़ी आ जाती है। वे प्रहरी से हंगामा का कारण पूछते हैं। प्रहरी जब दीनू के आने की सूचना देता है तो वे भिन्नाते हुए फिर कभी आने को कहलवा देते हैं। गाड़ी फुर्र हो जाती है। नेताजी के इस बदले तेवर पर दीनू हक्का बक्का है ..... किन्तु मोती अब सब कुछ समझने लग गया है। वह अपने बापू से कहता है ।' इन रचनाओं में मुखिया जी या नेताजी द्वारा आम जनता का आर्थिक नैतिक शोषण किया जाना समकालीन समाज में वर्तमान राजनीति के व्याकरण का सामान्य पाठ है, किन्तु अब झिंगुर या मोती का 'इंकार' बताता है कि युवा पीढ़ी में एक नई चेतना का उद्भव हो रहा है, जो समाज के पारम्परिक मूल्यों अथवा पारम्परिक मूल्यबोधजनित नैतिकता को ध्वस्त कर सामाजिक परिवर्तन के नए औजारों से 'आदर्श सम्बन्धों' की स्थापना करना चाहता है।

आलोच्य संग्रह की सभी रचनाओं में जहाँ कहीं भी 'युवक' पात्र आए हैं, उनमें यही 'तेज' देखने को मिलता है। इन लघुकथाओं के वृद्ध पात्र पारम्परिक मूल्यबोधजनित नैतिकता के दंश से आहत होकर भी यथास्थितिवादी होने में ही अपनी

सुरक्षा महसूस करते हैं, तो उनके विपरीत युवा पात्र यथास्थितिवाद के खिलाफ संघर्ष करते हुए एक ऐसा समाज बनाना चाहता है, जहाँ व्यक्ति-व्यक्ति के बीच किसी भी स्तर पर कोई विभेद न हो। युवा और वृद्ध पात्र द्वारा इन विपरीत सोचों में जीने के बावजूद दोनों में कोई संघर्ष नहीं होता, तो इसका कारण यह है कि दोनों ही पात्र सामाजिक संवेदनशीलता की मनोभूमि में जीते हैं और इस तरह किसी भी चीज को देखने की उनकी दृष्टि करुणाजन्य ही है। करुणा व्यक्ति के विवेक को सहनशीलता की क्षमता से आपूरित कर देती है। समाज की अनेक विसंगतियों को उजागर करने के बावजूद लेखक उसके ब्याज से अपने पात्रों में यथास्थिति के खिलाफ कोई विद्रोह उत्पन्न नहीं कर पाता, क्योंकि लेखक की करुणा उनके पात्रों पर हावी हो जाती है। 'प्रेरक सम्बंध' शीर्षक लघुकथा में पचहत्तर वर्षीय एक रेलयात्री अपने युवा सहयात्री से 'तिरंगा' गुटका खोलने को कहता है, किन्तु युवक यह कहते हुए नफरत से अपना मुँह फेर लेता है कि 'बाबा मैंने इसे कभी नहीं खोला है, मुझे 'आइडिया' नहीं है .....।' युवक की प्रतिक्रिया से वृद्ध नाराज होने के बजाय प्रभावित होता है। वह गुटका फेंक देता है और युवक के आचरण-संस्कार की प्रशंसा करते हुए उसे अपना गुरू मान लेता है। यहां दोनों पात्र अपने अलग-अलग वय-वर्ग का होने के बावजूद धरातल पर अवस्थित दिखता है और वह धरातल है 'करुणा' का। इसी करुणाजन्य चेतना में 'माल्यार्पण' का युवक पात्र सुमिरन दास भी अपनी घोर उपेक्षा के बावजूद 'अपने कपड़ों को फाड़ डालता है और 'माला' को गांधी टोपी में श्रद्धापूर्वक जमीन पर रखकर वह संघर्ष का संकल्प लेता है ....।'

डा० 'साथी' अपने आरंभिक दिनों में पत्रकार थे, फिर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हुए। दीन-दुखियों की सेवा को उन्होंने अपना व्रत माना और साहित्य-लेखन के माध्यम से मनुष्य की गरिमा को समृद्ध करने की कोशिश की। इन सबसे उनके व्यक्तित्व में ऋजुता एवं हार्दिकता विकसित हुई। अपने समकालीन सामाजिक संरचना के विकास में वे अपने व्यक्तित्व के अनुकूल आयामों को आरोपित करते हुए पात्र एवं घटनाओं को इस तरह संयोजित करते हैं कि उनकी सभी लघुकथाएं करुणा के माध्यम से क्रान्तिधर्मिता को साकार करना चाहती हैं। लोकतांत्रिक परिवेश में सामाजिक परिवर्तन के लिए आन्दोलन का यह आदर्श रास्ता है, जिसे डा० साथी की लघुकथाओं के पात्र अपनाते हैं। किन्तु पूंजी संस्कृति की संपोषक व्यवस्था में यह रास्ता निरर्थक लगता है, इसलिए इसकी उपेक्षा होती है। इन दोनों के द्वन्द्व में पाठक न भी पड़ना चाहें, तो उन्हें उनकी रचनाओं से गुजरते हुए बोध हो जाएगा कि डा० साथी की ये लघुकथाएं भारतीय स्वाधीनता के पचपन वर्षों की त्रासदी का शोकगान प्रस्तुत करती हैं। इस संग्रह में एक लघुकथा है --'सपन का सपना'। इस रचना का पात्र सपन एक रेलवे प्लेटफार्म पर जूते पॉलिश करने का काम करता है। लेखक उससे जूते पॉलिश करवाते समय उनकी दीनता पर द्रवित हो पूद बैठता है ' बेटा, क्या तुम पढ़ते भी हो?' नाकारात्मक उत्तर मिलने पर वे पुन: पूछते हैं 'क्या तुम पढ़ोगे? मैं तुम्हें पढ़ाऊंगा.....।' इससे सपन की आंखों में एक निस्तेज चमक कौंधती है। वह कहता है-'क्यों झूठ बोलते हुए बाबूजी?.....क्या, सच में, तुम मुझे पढ़ा पाओगे.....?' उत्तर में लेखक में लेखक मौन हो जाता है। कोई उत्तर दिए बिना परन्तु 'सपन के सपना' को सार्थक करने का संकल्प लिए वे आगे बढ़ जाते हैं। आजादी के पचपन वर्ष बीच जाने के बाद भी इस देश के निरक्षरों को साक्षर बनाने वाली अनेक अनेक योजनाएं यदि सपन तक न पहुंच पाती हों, तो इस त्रासदी पर यह रचना शोकगान ही प्रस्तुत करती जान पड़ती है। इस तरह की अनेक लघुकथाएं संग्रह में हैं, जो सामाजिक राजनीतिक विषमता के प्रति पाठकों का ध्यानाकर्षण करती हैं।

आधुनिक हिन्दी लघुकथा के विकास में 'चरैवति' की लघुकथाएं अपनी विविध आयामी रचनाशीलता के कारण, जिनमें मानवोत्थान की करुण भावना भी शामिल है, रेखांकित की जाएगी। 'चरैवेति' की लघुकथाओं पर विमर्श के द्वारा सभ्यताओं के संघर्ष के इस जटिल दौर में भारतीय संस्कृति के विकास में करुणा की क्रान्तिकारिता को भी केन्द्र में लाया जा सकता है और यदि ऐसा हुआ तो इन रचनाओं की सार्थकता सिद्ध हो जाएगी। 'चरैवेति की रचनाएं अपनी संवेदनशीलता से करुणा का मार्ग दिखलाती हैं, जिनसे चलकर समाज में आमूल परिवर्तन लाया जा सकता है। इस सुचिंतित एवं संवेदनात्मक लघुकथा-संग्रह 'चरैवेति', जिसे अलका प्रकाशन, पटना 800004 ने प्रकाशित किया है, का आधुनिक हिन्दी लघुकथा लगत में व्यापक स्वागत होगा।

पुस्तक : चरैवेति
लेखक : डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी'
समीक्षक : डॉ शिवनारायण
प्रकाशक : अलका प्रकाशन, पटना-800004

मुझे फिर मिला दूसरा बनवास

❑ मोहसिन मासूमी

काटा था मैंने चौदह साल का बनवास,
मैं दु:खी न था।
सीता का हरण हो गया
मैं दु:खी न था।
सारे दु:खों का सहन किया था
किसके लिए ?
आज जब मैं सरजू नदी तट पर पहूंचा
मेरे चरणों को रोते हुए बच्चों ने
बूढ़ों ने , जवानों ने स्पर्श किया
मेरा कलेजा दहल गया
सदियों बाद मुझे फिर मिला दूसरा बनवास
जो मेरे अपनों ने दिया।
अब कभी न जाऊँगा सरजू के तट पर
कभी न आऊँगा तेरे घर
दे डाला तुम लोगों ने दुनियां से बनवास,
फिर क्यों ढूँढ़ते हो मेरे घर का निशान,
मेरा जन्म स्थान!

संपर्क: डब्लू आई/बी-1, मीठापुर, खगौल रोड, पटना-1.

सरदार पटेल : जिनके लिए देशहित सर्वोपरि

❑ डॉ० पी० दयाल

विगत 31 अक्टूबर 2002 को लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल की 127 वीं जयंती पर राष्ट्रीय विचार मंच की बिहार इकाई द्वारा पटना में आयोजित एक समारोह में पटना विश्वविद्यालय के इमेरिटस प्रोफेसर डॉ० पी० दयाल ने सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता, पारदर्शिता और सरदार पटेल विषय पर एक आलेख प्रस्तुत किया, जिसे यहां पाठकों के लिए प्रकाशित किया जा रहा है।

राष्ट्रीय विचार मंच द्वारा सरदार पटेल की 127वीं जयन्ती के अवसर पर 'सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता एवं पारदर्शिता और सरदार पटेल विषय पर गोष्ठी का आयोजन अत्यन्त सामयिक और महत्वपूर्ण है। सरदार पटेल सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता और पारदर्शिता के प्रतीक थे। इसके विपरीत आज हमारा सार्वजनिक जीवन ऐसे दौर से गुजर रहा है जिसमें स्वच्छता और पारदर्शिता का पूर्ण अभाव है। आचरण का मापदंड नहीं है और अपराध, चरित्रहीनता, निर्लज्जता और दिशाहीनता इसके मुख्य गुण हैं। आज की राजनीति धर्म और जाति के आधार पर लोगों को विभाजित और भ्रमित करने की राजनीति है और स्वार्थ और सत्ता इसके मुख्य लक्ष्य हैं। देश को मजबूत बनाने और उसके विकास की नीतियाँ ढुलमुल हैं और उन्हें कारगर करना हमारी प्राथमिकता नहीं है। हमारा सारा समय लोगों को सब्जबाग दिखलाने, अपनी प्रशंसा और उपलब्धियों तथा दूसरों की कमजोरियाँ बतलाने में जाता है। हमें अपनी बुराइयों और कमजोरियों को देखने की न तो फुर्सत है और न इच्छा। जनहित, समाज कल्याण और उत्थान, देश प्रेम और विकास सभी गौण हैं। हमारी प्राथमिकतायें हैं-नगरों के नाम बदलना, नये जिले और राज्य बनाना, नये विश्वविद्यालय खोलना, मंत्रियों, विधायकों और सांसदों एवं प्रशासकों की सुख-सुविधा, सुरक्षा वेतन इत्यादि पर अधिक से अधिक खर्च करना, बड़ी-बड़ी निकायों को स्थापित करना और प्रचार तथा विज्ञापनों पर बेलगाम खर्च करना। हमारे पास शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, नगरीय सेवाओं, सड़कों, सिंचाई तथा बिजली के विस्तार के लिए पर्याप्त पैसे नहीं यहाँ तक कि हम कर्मचारियों को समय पर वेतन भी नहीं दे पाते हैं। हम बड़े-बड़े घपले और घोटाले करते हैं। फिर उनकी जांच में करोड़ों रुपये खर्च करते हैं, लेकिन अंत में कोई नतीजा नहीं निकलता और कोई दंडित नहीं होता। हम फिजूलखर्ची रोकने और वित्तीय अनुशासन की बात करते हैं, लेकिन वास्तव में अपने वित्तीय संसाधन के दुरुपयोग और प्रशासन, राजनीतिज्ञों और चुनावों के बढ़ते हुए अनुत्पादक खर्चों को रोकने में असमर्थ हैं। हम कई वर्षों से गरीबी और निरक्षरता उन्मुलन के बड़े बड़े कागजी प्रोग्राम बनाते रहे हैं, लेकिन आज भी निरक्षर और गरीबी से नीचे लोगों की संख्या भारत में संसार के सभी देशों से अधिक है। वास्तव में हम कहते कुछ हैं, और करते कुछ और हैं। हमारी कथनी और करनी में बड़ा अन्तर है। भारतीय जनता भाग्यवादी, सहनशील और उदार है, खेती और मजदूरी में लगी हुई है और अधिकांश गरीब और निरक्षर है और सब कुछ बिना विद्रोह के सह लेती है। निरक्षरता और गरीबी के वातावरण में ये विकृतियाँ पनपती हैं। किन्तु प्रजातंत्र और निरक्षरता एक साथ नहीं चल सकते।

कहा जाता है कि हमने अपने देश को हरित क्रांति के माध्यम से खाद्यान्नों में संपूर्णता बनायी है। किन्तु यह हमारे वैज्ञानिकों की देन है न कि राजनीतिज्ञों की। राजनीतिज्ञों की देन यह है कि यहाँ सारा अनाज सरकारी गोदामों में सड़ रहा है और न हम उसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से गरीबों को दे पाते हैं और न उसका निर्यात कर पाते हैं। हमारी नीतियों और कुप्रबंधन का फल है कि हमारे सारे उद्योग अस्त व्यस्त हैं और औद्योगिक उत्पादन में प्रगति नगण्य है। आधी कम्पनियाँ घाटे पर चल रही हैं और शेष बन्द होने के कगार पर हैं। जूट और कपड़ा उद्योग बीमार है। चाय का उद्योग जिसमें भारत का स्थान सर्वोपरि था, वह आज निर्यात में बहुत पीछे है और हम चाय का लंका तथा थाइलैंड जैसे देशों से आयात कर रहे हैं। भारतीय बाजार विदेशी मालों और विशेष रूप से चीन के बने खिलौने, बैटरी, कपड़े तथा अन्य सामानों से भरे हैं।

फिर देश की सुरक्षा, कश्मीर की समस्या, पाकिस्तान से संबंध, उत्तर-पूर्वी राज्यों में विद्रोह की समस्या तथा आतंकवाद की समस्यायें हैं। इन पर खर्च दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है, किन्तु हम कितनी इमानदारी और तत्परता से इनका सामना कर पायेंगे कहना मुश्किल है। देश के बाहर की प्रतिकूल शक्तियों से अधिक हमें अपनी आन्तरिक कमजोरियों से खतरा है। फूट, भेदभाव, सांप्रदायिकता, जातिवाद आज हमारे सार्वजनिक जीवन के आधार बन गये हैं। इन पर सतर्कता और नियंत्रण तभी संभव है जब हम अपनी मानसिकता में परिवर्तन लायें और सार्वजनिक जीवन में नैतिकता और स्वच्छता को उचित स्थान दें। इसके लिए वर्त्तमान स्थिति में बदलाव लाकर सद्भाव, भाईचारा, ईमानदारी और इंसानियत का वातावरण पैदा करना होगा, और संकीर्ण एवं नाकारात्मक राजनीति को भगाना होगा। इस काम में सरदार पटेल जैसे व्यक्तियों के व्यक्तित्व कृतित्व, उनका पारदर्शी चरित्र, उनकी ईमानदारी, निष्ठा, सूझ-बूझ, व्यावहारिक कुशलता और देशप्रेम से न केवल हमें प्रेरणा मिलती है, सही मार्गदर्शन होता है और आशा की किरण उगती है जिससे आज की भयावह स्थिति से निजात पाना असंभव नहीं। सरदार पटेल न केवल राष्ट्र निर्माता थे, बल्कि राष्ट्र प्रहरी और कुशल प्रशासक भी थे। उनके लिए देशहित सर्वोपरि था और व्यैक्तिक एवं पारिवारिक जीवन तथा सुख:दुख आखिरी प्राथमिकता थी श इन्हें गांधी जी के बतलाये मार्ग-सत्य और अंहिसा में अटूट विश्वास था। उनकी राजनीति नैतिक मूल्यों की राजनीति थी जिसका0 0प्रथम और अंतिम लक्ष्य देश का उत्थान था। हमारे राजनीतिज्ञों के लिए सरदार पटेल का जीवन आदर्श और अनुकरणीय होना चाहिए।

संपर्क : पूर्व कुलपति, मगध वि०वि०
रामपुर रोड, पटना-6

शिक्षा पर बढ़ती संकीर्ण राजनीति की काली छाया

❑ सिद्धेश्वर

शिक्षा के मामले में हमारा अतीत भले ही स्वर्णिम रहा हो, कभी विश्वगुरू बनकर दुनिया में ज्ञान का दीप प्रज्ज्वलित करने का श्रेय यहाँ के नालन्दा विश्वविद्यालय को प्राप्त था, पर इन महान उपलब्धियों के बाबजूद उस अतीत की तुलना में हमारे शिक्षा तंत्र का वर्तमान आज कोई खास उत्साह जगाता नहीं लगता। देश की भावी पीढ़ी को शिक्षा, प्रशिक्षण और संस्कार मिलते रहे हैं पर उनमें समरूपता नहीं। सरकारी विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में पढ़ाई का स्तर आदर्श तो क्या मामूली स्तर भी स्वीकार्य नहीं होता। आखिर तभी अभिभावक द्वारा आज निजी संस्थाओं की पढ़ाई पर ही ज्यादा भरोसा किया जा रहा है। आज नवोदय विद्यालय जैसी महत्वकांक्षी योजनाएं भी धूल चाटती नजर आ रही हैं। आखिर क्यों? इस सवाल का जवाब हमें ढूढ़ना ही होगा।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में प्रयोगों की भूल-भुलैया से गुजरती हुई शिक्षा और शिक्षा-नीति कई बिडंबनाओं की शिकार हुई है। सबसे आश्चर्य की बात यह है कि अनेक प्रयोगों के बावजूद भी शिक्षा के उद्येश्य और स्वरूप को लेकर कोई स्पष्ट अवधारणा अभी तक नहीं बन पाई है। ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षा को केन्द्रीकृत और असमान बनाए रखते हुए यह अपने वर्गीय हितों के संरक्षण-संपोषण की कुत्सित कोशिश की जा रही है। इतना तो तय है कि शिक्षा नीति को लेकर बरती जा रही यह उदासीनता हमारी वर्तमान पीढ़ी को तो छतिग्रस्त कर ही रही है भावी पीढ़ी को भी ऐसी अंधी गली की ओर ले जा रही है जहाँ से फिर वापस लौटना बहुत मुश्किल होगा।

क्या आज हम ऐसा नहीं महसूस करते कि आज दी जा रही शिक्षा युवाशक्ति को आम तौर पर अपने देश काल के प्रति, अपने सामाजिक और मानवीय मूल्यों के प्रति तथा अपने वृहत्तर उत्तर दायित्वों के प्रति संवेदनशील बनाने में विफल रही है? क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि आज की शिक्षा राष्ट्र की भावी-पीढ़ी में राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना का संचार नहीं कर पा रही है?

सच तो यह है कि शिक्षा का उद्येश्य मनुष्य को समाज और देश के लिए उपयोगी बनाना है किंतु आज की शिक्षा व्यवस्था की मशीन को चला सकने वाले पूर्जा बना रही है और बेहतर नागरिक गढ़ने की प्रयोगशालाएं न होकर बद्तर नौकरशाह एवं कलर्क के उत्पादन का कारखाना हो गयी है। आज असलियत यह है कि युवाशक्ति को राजनैतिक पीठिका देनेवाली तकरीबन हर पार्टी या संस्था हमारे पूरे समाज तथा राजनीति में रिसते आ रहे नासूरों का प्रतीक बन चुकी है। ऐसी अराजक भीड़ पार्टी तथा देश को कहाँ ले जाएगी, यह सवाल सबके सामने आज खड़ा है।

युवाओं की ऊर्जा सार्थक और सहज निर्माण में शरीक हो तो राष्ट्र की उन्नति के आसार बनते हैं। परन्तु आज उसका उल्टा हो रहा है। युवाओं में कूट-कूट कर विदेशी परंपराओं और संस्कृति की तहजीब भरी जा रही है। गरीबी, अराजकता, मंहगाई और गुलामी की तरफ एक के बाद एक बढ़ते कदम इन्हीं कारणों से आज देश के युवाओं को उस तरह उद्वेलित नहीं कर पा रहे हैं जिस तरह युवा पीढ़ी 1942, 1967 और 1974 में उद्वेलित हुई थी। युवा पीढ़ी को आज जिस हालात के थपेड़ों से विवेकहीन और डरपोक बना दिया गया है उसके फलस्वरूप ही आज भ्रष्टाचार विरोधी क्रांति नहीं जन्म ले पा रही है।

बिहार में शिक्षा का तो यह आलम है कि उसने बिहार की तरुणाई को दिशाहीन ही नहीं कर दिया वरन विवेकहीनता के उस मुकाम तक पहुँचा दिया जो स्वस्थ सामाजिक संरचना के ताने-बाने को ही खत्म करने पर तुला है। वास्तव में बिहार की अधोगति का रोना हर तरफ सुनायी पड़ रहा है। यहाँ से उत्तीर्ण छात्र-छात्राओं का दिल्ली तथा अन्य प्रदेशों के कॉलेजों में नामांकन करने में हिचकिचाहट है। फिर भी कोई भी व्यक्ति उन मूल बिन्दुओं की ओर उँगली उठाने की जहमत मोल लेने को तैयार नहीं है जहाँ से निकलकर वहाँ की युवा पीढ़ी शिक्षा की डिग्री के बावजूद पूर्णत: अशिक्षित ही रह जाता है। आज जरूरत है शिक्षातंत्र को चाट रहे दीमक को साफ करने की जिसके कारण पूरी पद्धति ही खोखली और अपंग होती जा रही है।

शिक्षक जिनका दायित्व भावी पीढ़ियों में जीवन-मूल्यों का विकास करना है, आज उन्हें राजनीति का मोहरा बनाया जा रहा है। फलत: वे युवाओं को राजनीतिक जोड़-तोड़ का पाठ पढ़ा रहे हैं। हमारे शिक्षा केंद्र, जो आज राजनीतिज्ञों की कुत्सित नीति का केंद्र तथा भ्रष्ट और पैरवीकारों का रंगमंच बन गए हैं, वहां शिक्षा की अर्चना न कर पद और पैसों का नमन किया जाता है। एक विद्यार्थी जिसने कभी सरस्वती का आँगन समझ विद्यालय, विश्वविद्यालय में प्रवेश किया आज महज मूक कठपुतली बनकर रह गया है। इसमें लेश मात्र भी संदेह नहीं कि शैक्षणिक अराजकता के लिए छात्र, शिक्षक, अभिभावक, पत्रकार, साहित्यकार, सरकारी सेवक आदि समान रूप से जिम्मेदार तो हैं ही पर शिक्षा के मंदिरों को क्षत-विक्षत करने का काम शिक्षा माफिया तथा राजनेताओं ने विशेष रूप से किया है। शैक्षणिक वातावरण को प्रदूषित करने में आज की संकीर्ण राजनीति

इस कदर उत्तरदायी है कि संवेदनाएं दम तोड़ रही हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय तथा दिल्ली विश्वविद्यालय जैसे श्रेष्ठ कहे जाने विद्या मंदिर परिसर में सरेआम राजनीति से जुड़े छात्र नेताओं द्वारा छात्राओं के बलात्कार की घटनाएं उस संकीर्ण राजनीति तथा संवेदनहीन समाज के उदाहरण हैं। शिक्षा की ओट में अपनी दुकानदारी चलाकर राज्यों में अशिक्षितों की जो फौज तैयार की जा रही है और समाज में विसंगतियाँ उत्पन्न की जा रही हैं उसके विरूद्ध जनमत तैयार करना होगा तथा अपनी मनोवृति को परिवर्तित कर हमें राष्ट्र तथा समाज के प्रति अपनी भूमिका को सकारात्मक दिशा देनी होगी। रसातल में जाती आज की शिक्षा व्यवस्था को कोई भी यदि सम्माननीय स्थान दिलाने में जरा-सा भी प्रयास करेगा आम जनता उसका सहर्ष स्वागत करेगी। नेताओं को भी शिक्षा में अकारण प्रयोग से बचना चाहिए तथा अभिभावकों को भी अपने बच्चों के भविष्य पर प्रश्न चिन्ह लगाने की गलती नहीं करनी चाहिए। आज स्थिति यह है कि आज की संकीर्ण-मानसिकता जनित राजनीति एवं उसके कार्यकलापों के मूल कारणों को जानते हुए भी हमारी दृष्टि उस पर नहीं जा पा रही है क्योंकि हम सब के ज्ञान चक्षु को स्वार्थ रूपी परदे ने ढक लिया है। परिणामस्वरूप आज अधिकांश जनमानस एक दूसरे को काटकर, दबाकर, नीचा दिखाकर, क्षति पहुँचाकर तथा शोषण कर आगे बढ़ने की दुष्प्रवृति में तल्लीन है। वह अपने श्रम एवं पसीने जैसे सदकर्तव्यों के प्रति किंकर्तव्यविमूढ़ है जिसके परिणामस्वरूप उसके विचारों में प्रदूषण का आना स्वाभाविक है।

आज की शिक्षा प्रणाली जाति और संप्रदाय के कठघरे में रोगग्रस्त खड़ी है जिसके विषाणु इस देश की सारी जनता है। भारतीय संविधान ने भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया है। संविधान राष्ट्र की आत्मारूपी देह होता है और शिक्षा इस देह की रीढ़। इसलिए जिस राष्ट्र की आत्मा धर्म निरपेक्ष हो, उस राष्ट्र की शिक्षा धर्म निरपेक्ष होनी चाहिए। केंद्र सरकार पर शिक्षा का राजनीतिकरण और भगवाकरण करने का आरोप कितना सही या गलत है यह तो आनेवाला समय बताएगा पर इतना अवश्य है कि हम देश में ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करें जिसमें से भारतीयता का लोप न हो। जो शिक्षा भारतीयता की अनदेखी करती हो वह भारत के उज्ज्वल भविष्य में सहायक नहीं बन सकती। आज की शिक्षा में ज्ञान अधिक और समाज कम होता है। आज की शिक्षण संस्थाएं अपने विद्यार्थियों के लिए दुनिया भर के ज्ञान इकट्ठा कर देती है। भूगोल से लेकर कम्प्यूटर तक की शिक्षा में अपने विद्यार्थियों को पारंपरागत बना देती है लेकिन इस शिक्षण संस्थानों में समाज और देश को ठीक से देखने की दृष्टि नहीं दी जाती है। इन शिक्षण संस्थानों में पढ़नेवाले बच्चों के दिमाग में जब गांव के बारे में, खेत खलिहान के बारे में, फसलों के बारे में सवाल उभरते हैं तो उन्हें उचित ढंग से जवाब देनेवाला भी नहीं मिलता है और यही आज की शिक्षा पद्धति का अधूरापन है। जो भी हो, शिक्षा को तो कम से कम दलगत राजनीति के दायरे से बाहर रखा ही जाना चाहिए। शिक्षा को दलगत राजनीति का मुद्दा बनाना एक प्रकार से भावी पीढ़ी के साथ खिलवाड़ करना ही है।

.....याद वतन की मिट्टी आई है

बड़े दिनों के बाद हम वतनों को याद बतन की मिट्टी आई है ..... वतन की मिट्टी की सोंधी गंध की याद समेटे विशिष्ट प्रवासी दल सात समंदर पार से पौस माह के शीत भरे मौसम में पुराने इन्द्रप्रस्थ की धरती पर इस महक को फिर ताजा करने के लिए पिछले दिनों राजधानी में एकत्रित हुए। मॉरीशस के प्रधानमंत्री जगन्नाथ और उनकी पत्नी सरोजनी सहित साथ 60 देशों से आए लगभग 2000 प्रवासी भारतीयों के स्वागत के साथ अटल बिहारी बाजपेयी द्वारा भारतीय मूल के विदेशी नागरिकों को दोहरी नागरिकता का तोहफा देने की घोषणा की गई। यह अधिकार मात्र सात देशों के नागरिकों को ही मिलेगा। इस स्वागत समारोह में प्रधानमंत्री अटलजी द्वारा अंग्रेजी में दिए गए भाषण से लोग निराश हुए। इस अवसर पर दस मशहूर हस्तियों को सम्मानित किया गया।

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी दस सम्मानित आप्रवासी भारतीय हस्ताक्षरों के साथ

अधिवेशन में विचार-विमर्श के मुद्दे और व्यक्त विचार

'आजादी के बाद वैचारिक क्रांति के नए आयाम' को केंद्र में रखकर 'विचार दृष्टि' पत्रिका एवं उसके वैचारिक मंच द्वारा पिछले 16 एवं 17 नवंबर 2002 को नई दिल्ली में दो दिवसीय राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन किया गया। इस अधिवेशन में देश के उन ज्वलंत सवालों को विचार-विमर्श का मुद्दा बनाया गया जिससे भारत को आज भी जूझना पड़ रहा है। विभिन्न राज्यों के सुपरिचित एवं प्रख्यात रचनाकारों, चिंतकों, विचारकों एवं प्रखर पत्रकारों ने न केवल इस अधिवेशन में अपने विचार प्रस्तुत किए बल्कि निर्धारित विषयों पर अपने तथ्यपरक एवं सारगर्भित आलेखों के पाठ भी किए। इसके अतिरिक्त जो विद्वान लेखक-विचारक किसी कारणवश इस अधिवेशन में भाग न ले सके, उन्होंने उन विषयों पर अपने आलेख भेजकर हमें कृतार्थ किया है। इन आलेखों में प्रस्तुत विचारों को एक प्रकाश्य पुस्तक में समेटने की एक योजना बनी है, जो हमारी थाती होगी। किंतु चाहकर भी प्रकाशनाधीन पुस्तक को हम विचार दृष्टि के सभी पाठकों तक पहुँचा नहीं पा सकेंगे। इसलिए इन पाठकों के हित के मद्दे नजर पत्रिका के इस अंक में प्राप्त आलेखों में व्यक्त विचारों के सारांश प्रस्तुत करना हमारे लिए लाजिमी है। विश्वास है इससे हमारे सुधी पाठकों को न केवल एक स्वस्थ मानसिक खुराक मिलेगी बल्कि वे इससे लाभान्वित भी हो सकेंगे। प्रस्तुत है यहाँ निम्नांकित विषयों पर विद्वान लेखकों से प्राप्त आलेखों के कुछ अंश:-

(1)सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीय एकता खतरे में

(2) वैश्वीकरण और आतंकवाद: आज की चुनौती

(3) बढ़ती आबादी पर अंकुश पर युवाओं की भूमिका

(4)भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति और राष्ट्रीय नीति

सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीय एकता खतरे में

प्रो. कुमार रवीन्द्र

प्रश्न सामाजिक समरसता का: संदर्भ राष्ट्रीय एकता शीर्षक आलेख में अपने अध्ययनपूर्ण एवं संतुलित लेखों के लिए चर्चित (हिसार, हरियाणा) के प्रो. कुमार रवीन्द्र का कहना है कि सामाजिक होना मनुष्य होना है। सामाजिकता मनुष्य होने की प्रमुख पहचान है, उसकी पहली और आखिरी शर्त है। मानुषी आस्था का यही प्रस्थान-बिंदु और आधार है। मनुष्य की सभी संवेदनाएँ किंवा उसकी संचेतना की सारी चेष्टाएँ सामाजिकता से ही जुड़ी हुई हैं, और सामाजिकता की इस मूल प्रवृति से जुड़ा हुआ है सवाल सामाजिक समरसता और सौमनस्य का। इसी से जुड़ा है वह भाव-बोध जिसमें मनुष्य ने सामाजिक होने की आदिम जरूरत को पहचाना होगा, उसे आकार दिया होगा, व्यवस्था का रूप दिया होगा। यह निश्चित संभावना है कि आदिमकाल में अपनी दैहिक-जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य ने अन्य प्राणियों के समान ही परिवार को जन्म दिया होगा और साथ ही अन्योन्याश्रित होने की अनिवार्यता को भी पहचाना होगा। बाद में समाज के बहुआयामी विकास के लिए उसके माध्यम से व्यक्ति के विकास के लिए भी यह समरसता-भाव ही कारगर साबित हुआ होगा। मनुष्य की सांस्कृतिक - भाषिक चेतना का उद्भव और विकास इसीलिए संभव हुआ कि वह सामाजिक समरसता की स्थिति को कुछ हद तक प्राप्त कर सका। आध्यात्मिकता जो एकमात्र मनुष्य की ही संभावना है, का विकास भी सामाजिक समरसता से ही मुमकिन हुआ।

सामाजिक समरसता को प्राप्त करने में सत्ता-प्रतिष्ठान और उसके संयोजकों की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे देश में रामराज्य को एक आदर्श व्यवस्था के रूप में परिकल्पित किया गया है। रामराज्य एक आदर्श व्यवस्था इसीलिए थी कि राम ने सामरस्य को अपनी राज्य-व्यवस्था का मूल मंत्र माना था। किसी भी प्रतिरोधी आवाज को राम ने नजरअंदाज नहीं होने दिया, फिर वह आवाज चाहे उनकी सौतेली मां की हो या एक मामूली रजक की हो। राम का राज्यादर्श थी संपूर्ण सामाजिक सामंजस्य की प्राप्ति। इसलिए उन्होंने सभी स्तरों पर, चाहे वह

व्यक्तिगत एवं निजी पारिवारिक हो या सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक हो, सौहार्द और सद्भाव को ही अपनी नीति बनाया उन्होंने रामकाज में साम-नीति को ही प्रश्रय दिया। अन्य तीन नीतियों दाम-दंड-भेद को उन्होंने अपनी राज्यनीति का आधार नहीं बनाया, उनकी मर्यादित शासन-व्यवस्था में कुछ भी त्याज्य नहीं था। सभी को अपनाने, अपना मानने की यह नीति ही सामाजिक सामरस्य को प्राप्त कर सकती है। यही है वह दृष्टि जिससे हम समाज का और समाज के माध्यम से व्यक्ति का संपूर्ण विकास संभव बना सकते हैं।

सांप्रदायिक सद्भाव इस सामाजिक समरसता का अंगी भाव है। संप्रदाय के आग्रह के मूल में दूसरे के प्रति शंका और भय और अपने प्रति एक सीमित स्वरक्षा ग्रंथि होती है। सामाजिक समरसता के वातावरण में यह शंकालु अस्वीकार दृष्टि शिथिल एवं अंतत: निरस्त हो जाती है; इसका कोई प्रयोजन नहीं रह जाता। दूसरी ओर , सहज सामाजिक समरसता की प्राप्ति के लिए सांप्रदायिक सद्भाव एक अनिवार्य शर्त है। जब तक संप्रदाय के प्रति सम्मोह और लालसा का भाव रहेगा, समाज समरस नहीं हो पाएगा। विभिन्न संप्रदाय-समूहों का एक-दूजे के प्रति जब सहज आंदर-भाव होगा, तभी समाज पूरी तरह आशंका मुक्त होकर सामरस्य की वांछनीय स्थिति को प्राप्त कर सकेगा। संप्रदाय व्यक्तियों के समूह के रूप में उन्हें तो ठीक है। किंतु यदि यह असहिष्णु भाव उपजाए, तो उस प्रक्रिया का परिचायक बनाती है और जिससे विखंडित होते हैं। स्वकेंद्रित भाव को जन्म देती है। भाव है, जो समग्र पोषक तत्व है। सांप्रदायिक संकुचित स्वार्थों से ऊपर सह-अनुभूति से जुड़ते हैं, समाज में सभी खाईयों को रास्ता बनाता है।

सामाजिक समरसता सत्र में अध्यक्षीय भाषण प्रस्तुत करते हुए श्री के.एल.जैन

समसामयिक बिखरी हुई एवं बिखंडित एक-दूसरे से जोड़े यहाँ तक जुड़ाव अन्य संप्रदायों के प्रति यह संकुचित होते जाने का है, जो हिंसक और प्रतिहिंसक समाज और मानुषिकता मानुषिकता संहारक आसुरी परार्थकता ही वह सात्विक दैवी प्राणिनगत किंवा सृष्टि का सद्भावना से हम निज के उठ कर एक-दूसरे से सहज यही वह आंतरिक पुल है जो पाटता है, उनके पार जाने का संदर्भ में हमारी राष्ट्रीय अस्मिता दिखाई देती है। इसका एक मुख्य कारण हमारा संकुचित सांप्रदायिक सोच है। हम जिस राष्ट्रीय अस्मिता की बात यहाँ कर रहे हैं, वह नदी-पर्वत-सागर अथवा गाँव नगर की संज्ञाओं से परे एक भावात्मक चेतना है, जो हमें हमारी विशिष्ट पहचान देती है, हम इसे भौगोलिक अथवा ऐतिहासिक परिसीमाओं में नहीं बाँध सकते। राष्ट्रीयता एक अनुभूति है, एक भाव है सूत्रे मणिगणा इव 'अदृश्य होकर भी सब जगह विद्यमान है। राष्ट्रीयता का सोच अवचेत में स्थित हो, तो सांप्रदायिकता भी सकारात्मक हो जाती है, एक मूल्य बोध के रूप में इसकी चेतना वांछनीय ही नहीं, आवश्यक भी है, वैसे राष्ट्रीयता का जो अर्थ आज सर्वमान्य है, वह योरोप की 'नेशन-स्टेट' की राजनैतिक अवधारणा से उपजा है। हमारे देश में वस्तुत: जातीय बोध प्रमुख रहा है, जो हमारी राष्ट्रीय अस्मिता को परिभाषित करता है। यह जातीय बोध वर्णाश्रम व्यवस्था से जुड़ कर जाति की सीमाओं में सिकुड़-सिमिट गया; यही हमारे देश की त्रासदी रही। जातिगत, धर्मगत, वर्गगत, क्षेत्रगत यहाँ तक कि भाषागत अहिष्णुता भी आज हमारी राष्ट्रीय अस्मिता को खंड-खंड कर रही है। हमारी राष्ट्र की परिकल्पना तो 'पंजाब, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल, बंग/ विन्ध्य, हिमाचल, गंगा, यमुना, उच्छल जलधि तरंग' की विविध इकाइयों के समीकृत संज्ञान की ही रही है। आज हमारा राष्ट्र का संज्ञान इन्हीं अलग-अलग क्षेत्र-संज्ञाओं में बिखर गया लगता है। मेरी राय में, हमारी सांस्कृतिक चेतना इस सारे बिखराव के बाबजूद अभी भी वही है। हमारी राष्ट्रीय एकता का प्रश्न इसी सांस्कृतिक एकात्मता से जुड़ा हुआ है। उसकी एकात्मता को जाग्रत करने, रखने की आवश्यकता है।

कृष्ण कुमार विद्यार्थी 'नूर'

पटना के तेजस्वी लेखक एवं विचारक कृष्ण कुमार विद्यार्थी 'नूर' का मानना है कि किसी भी समय तथा सुसंस्कृत देश में जो विकास के पथ पर अग्रसर हो रहा है वहां जो सर्व-वांछित आदर्श होता है वह है राष्ट्रीय एकता। इस राष्ट्रीय एकता की स्थापना में अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक तत्त्वों के समायोजन एवं उनकी एकरूपता का होना आवश्यक है। ऐसी राष्ट्रीय एकता देश को एक विशिष्ट पहचान, एक स्वस्थ इकाई तथा एक अस्मिता प्रदान करती है जो नागरिकों तथा प्रशासन के लिए गर्व की बात होती है।

जिस समरसता की बात आज की जा रही है उसकी नींव में प्रत्येक मनुष्य की मर्यादा, उसकी दैनंदिन आवश्यकतायें, उसके विकास तथा अभ्युत्थान की बातें आती हैं। पोटोगोरस (प्राचीन ग्रीस का विद्वान) ने तथा बाइबल में जिस मानवीय सद्भाव तथा सहिष्णुता की बात कही उससे पूर्व व्यास ने घोषणा की थी "आत्मन: प्रतिकुलानि परेषां का समाचरेत" (शान्ति पर्व-महाभारत) भारतीय संस्कृति में रची बसी यह शुद्ध संवेदना ही सामाजिक समरसता का शुद्ध आधार है। भारत आज तक अपने मन्त्रोच्चार द्वारा" सर्वे भवन्ति सुखन्तु: सर्वे सन्त निरामय:" का जाप करता रहा है। इसने कभी यह कल्पना नहीं की कि सनातन धर्मी तो स्वर्ग में जायेंगे और अन्य धर्मावलम्बियों को दोज़ख़ की आग में जलना

पड़ेगा। इतिहास गवाह है कि जहां पाश्चात्य और अन्य देशों में धर्म के नाम पर सैकड़ों वर्ष खून की नदियां बहती रही हैं और समानधर्मी गुट भी एक दूसरे के खून के प्यासे रहे हैं वहीं भारत में विभिन्न मतावलम्बियों में भी खुलकर मारकाट बहुत कम हुआ है। अलग-अलग गुटों को अलग-अलग स्तरों पर राजाश्रय भले ही मिला हो पर वे शत्रुवत व्यवहार नहीं करते थे। सनातम धर्म ने तो बुद्ध को अपना एक अवतार घोषित कर, उनकी विचारधारा से मतभेद होते हुए भी उनके महान पथ-प्रदर्शक होने को सर्वमान्यता दी। इसे कहते हैं सद्भाव जो एक विशुद्ध मानव तथा एक विवेकपूर्ण समाज की पहली पहचान है। अशोक बौद्ध धर्म का अनुयायी था पर अपने शिलालेख पर सर्व-धर्म-समभाव का उलेख कर उस महामानव ने जिस समरसता और सद्भाव का प्रारम्भ करवाया वह आज भी भारत के जन-जीवन में परिलक्षित है।

अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसे देश में आज यह कहने की क्यों आवश्यकता होती है कि समरसता और सद्भाव के लिये प्रयास किया जाय। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि यहाँ के बहुल समाज ने अपने आदर्शों (वेदान्त) से नाचुत हो कर मानव मानव में कृत्रिम विभेद मान्यता प्रदान कर उन्हें जीवन का स्थायी अंग बना लिया और दूसरा कारण है लगभग एक हजार वर्षों की गुलामी जिससे भारत को गुजरना पड़ा। मैं दो टूक शब्दों में यह कहना चाहूंगा कि यह गुलामी उन लोगों को करनी पड़ी जो या तो भौतिक उपलब्धियों के चकाचौंध में यह भूल गये कि भारत की संस्कृति कितना उदात्त और कितना सर्वभौम थी या उनलोगों की जिन्होंने सत्ता, और धर्म दोनों की स्थापना तलवार की नोक पर की थी। यह एक विडम्बना ही है कि ऐसे लोग जो धर्म के नाम पर सैकड़ों साल पाशविक रक्तपात में रत रहे या जेहाद और धर्मान्तरण के दूषित कार्य-कलापों से सामाजिक समरसता तथा धार्मिक सद्भाव की खिल्ली उड़ाते रहे हैं वे आज भारत के आयोजित धार्मिक झगड़ों पर उंगली उठाते हैं। उनकी इस दोहरी नीति और गिरगिट की चाल पर हँसी आती है।

सामाजिक **समरसता पर अपने विचार व्यक्त करते हुए जनरल एन.** एस. मलिक

आज भारत में एकता की कोई भी नीति तब तक सफल नहीं होगी जब तक वह विश्व के साथ समरसता और सद्भाव की कामना नहीं रखती। यहाँ के धर्म, यहाँ की संस्कृति , यही चाहती है कि हम मानव-सभ्यता तथा विश्व-बंधुत्व के विश्व-मानव, विश्व-संस्कृति, विश्व-साहित्य, विश्व-दर्शन, विश्व-विज्ञान, विश्व-अर्थव्यवस्था, विश्व-धर्म, विश्व-नैतिकता, विश्व-अध्यात्म तथा विश्व-दृष्टि के साथ एक सम्यक् अनुपात में जोड़े जिसमें हमारी भारतीय-संस्कृति के फूल मुरझायें नहीं वरन हमारा आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश दोनों ही और अधिक समृद्ध हो सकें।

डॉ. वीरेन्द्र कुमार तिवारी

अपने मौलिक तथा प्रखर सामाजिक विश्लेषण के लिए चर्चित लेखक डॉ. वीरेन्द्र कुमार तिवारी (इलाहाबाद) का मत है कि मानवता की रक्षा के लिये व्यक्ति द्वारा निर्मित समाज जाति, वर्ग, धर्म, संप्रदाय, बोली, भाषा, प्रांत,क्षेत्र, काला-गोरा आदि न जाने कितने आधारों पर इस प्रकार विभाजित हो गया है कि मानवता निरन्तर पतन के गर्त में चलती चली जा रही है। यदि उत्थान हो रहा है तो मात्र दानवता का। आज जन साधारण में आशंका, घृणा, विद्वेष, आतंक, अविश्वास आदि अगणित विघटनकारी एवं पतनोन्मुख विचारों का उदय हुआ है। इस विषम एवं भयावह स्थिति के लिये कोई एक कारण नहीं है। राष्ट्रीय एकता के लिये खतरा बनते जा रहे आज के विषाक्त वातावरण के लिये उत्तरदायी कारणों पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है। देश की अखण्डता एवं एकता को बनाये रखना एक दुष्कर कार्य हो गया है। विविधता के जो तत्व हमारे देश को सुन्दरता प्रदान करने वाले हैं, वे ही तत्व देश के मूल स्वरूप को विकृत करने में लगे हुए हैं। कुछ बाहरी तो, कुछ भीतरी शक्तियाँ मिलकर हमारे समाज रूपी जंजीर की कुछ कमजोर कड़ियों पर आघात करके तोड़ना चाहती हैं। कहीं भाषा-बोलियों को अस्त्र बनाकर विषवमन किया जा रहा है, तो कहीं विविध जातीय समीकरण बनाकर लोहे को लोहे से काटने का सिद्धात अपनाया जा रहा है। कहीं वर्ग-संघर्ष की संभावनाएँ तलाश कर समाज के विविध वर्गों के बीच महाभारत कराने का प्रयास किया जा रहा है, तो कहीं धार्मिक उदारता को दुर्बलता समझ कर धर्म की मूल भावना से विरत रखने का प्रयास किया जा रहा है। बाहर बारूद का भय दिखाकर आतंकित किया जा रहा है तो अन्दर घृणा की ज्वाला भड़का कर समूचे राष्ट्र को भस्म कर देने का षड्यंत्र चल रहा है।

भाषा-बोली, धर्म-संप्रदाय, वर्ण-जाति, गाँव-नगर, जनपद प्रांत, दीप महाद्वीप आदि सभी व्यवस्थाएँ समाज को जोड़ने के लिये, समाज को समृद्ध बनाने के लिये एवं इस संसार को सुंदर बनाने के लिये की गयी हैं; किन्तु आज इन सबका उपयोग समाज को तोड़ने, जर्जर एवं दरिद्र बनाने तथा कुरूपता प्रदान करने के लिये किया जा रहा है। बड़े सुनियोजित ढंग से स्वार्थी लोग कहीं भाषा के नाम पर तो कहीं बोली के नाम

पर, कहीं धर्म के नाम पर तो कहीं सम्प्रदाय के नाम पर, कहीं वर्ण के नाम पर तो कहीं जाति के नाम पर भाँति-भाँति के विवाद खड़े करके राष्ट्रीय एकता के लिये चुनौतियाँ उत्पन्न कर रहे हैं। वे लोग अपनी विकृत मानसिकता द्वारा राष्ट्र के शरीर को भी विखण्डित कर देना चाहते हैं। चाहे वह कश्मीर की समस्या हो या उत्तर पूर्व की, चाहे वह गुजरात की समस्या हो या दक्षिण की, इन सबके पीछे सुनियोजित षड्यंत्र कार्य कर रहा है, जिसमें बाह्य शक्तियों का साथ दे रही हैं आभ्यन्तरिक विघटनकारी शक्तियाँ। 'फूट डालो राजकरो' का सिद्धान्त आज भी उसी प्रकार कार्य कर रहा है, जिस प्रकार अंग्रेजों के शासनकाल में करता था। अतीत में भी इस देश की सुख समृद्धि से आकृष्ट होकर विदेशी शक्तियों ने इस देश पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहा और जिन युक्तियों से वे सफल हुए, आज भी उन्हीं युक्तियों से स्वार्थी तत्व सत्ता के केन्द्र तक पहुँचना चाहते हैं।

गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, आतंकवाद आदि अनेक समस्याओं से जुझ रहे देश को विकास के पथ पर अग्रसर करने के लिये राष्ट्रीय एकता के लिये उत्पन्न खतरों को निराश करने एवं भारत को उसका खोया हुआ गौरव पुन: प्रदान करने के लिये बाह्य शत्रुओं से लड़ने के पूर्व अपनी आंतरिक दुर्बलताओं को दूर करना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। देश के कल्याण के लिये भारतीय समाज में एकरसता की नहीं अपितु समरसता की आवश्यकता है। विविधता इस सृष्टि की स्वाभाविक प्रवृति है। हमारे देश को केंचुए की एकरूपता की आवश्यकता नहीं, अपितु मानव शरीर की भाँति विविध अंग-प्रत्यंगों वाली मानवीय एकता की आवश्यकता है, जिसमें प्रकृति के विविध रसों का संतुलित संचार हो, जिससे शरीर का प्रत्येक अंग सुगठित, पुष्ट एवं सौष्ठभरा बने। इसके लिये समाज के अंगभूत प्रत्येक धर्म, वर्ग के व्यक्यिों का समुचित एवं संतुति पोषण एवं संरक्षण हो। हम समाज के किसी भी अंग की अवहेलना या उपेक्षा करके सुंदर समाज की रचना नहीं कर सकते। देश के प्रत्येक क्षेत्र, भाषा और धर्म को स्वाभाविक रूप से प्रवहमान रखने के लिये उसके स्वाभाविक स्वरूप को बनाये रखने की महती आवश्यकता है।

सिद्धेश्वर

राष्ट्रीय विचार मंच के महासचिव सिद्धेश्वर के मतानुसार राष्ट्रीय एकता में बाधा पहुँचाने वाले अनेक तत्व हैं किंतु उनमें से सबसे महत्वपूर्ण तत्व हैं सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव का अभाव। इस देश में जातिवाद का चेहरा इतना कुत्सित होता जा रहा है कि इसकी वजह से देश में गृह युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो रही है। जीवन के हर क्षेत्र में आज यह दृष्टिगोचर हो रहा है। भारतीय समाज विचित्र रूप से इसके चलते उपखंडों व समूहों में बँट रहा है। देश के हर गली-मोहल्ले, घर दफ्तर व ग्राम पंचायतों से लेकर संसद तक अधिकतर राजनेताओं एवं भ्रष्ट अधिकारियों-कर्मचारियों में जाति के आधार पर दरारें उभरी हुई हैं और उनके मुँह से निकले जातिवाद के जहर को स्पष्ट देखा जा सकता है। चाहे वह चुनाव का मामला हो या मंत्रियों की नियुक्ति का, सरकारी समितियों का गठन करना हो या अधिकारियों-कर्मचारियों की बहाली, जातिवाद वहाँ उपस्थित है। और तो और अब तो देश के सर्वोच्च पद राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति के चुनाव में भी जातिवाद का नजारा स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। क्या हमारे लिए यह शर्म की बात नहीं कि आजादी के 55 वर्षों बाद भी अंग्रेजों से विरासत में मिली भेद-भाव की कुसंस्कृति की दासता का चोला उतार फेंकने में हम अपने आपको सक्षम नहीं हो पा रहे हैं। पिछले दिनों राजस्थान के जयपुर जिले के चकवाड़ा गांव में दलित वर्ग के लोगों को तालाब में स्नान करने तथा मंदिर में प्रवेश करने से रोकने को लेकर जो टकराव हुआ वह भारतीय समाज के लिए क्या कलंक नहीं माना जाएगा। सच मानिए आज भी अनुसूचित जाति के लोगों को न तो चकवाड़ा गांव के तालाब के पानी का प्रयोग करने दिया जाता है और न ही वहाँ के विश्वनाथ मंदिर में जाकर उन्हें पूजा-अर्चना करने की इजाजत है। बिडंबना यह है कि छुआछूत की यह बीमारी जयपुर के इस चकवाड़ा गांव में ही नहीं बल्कि राजस्थान, तमिलनाडु, ऊ०प्र०, बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात तथा केरल में दलितों को मंदिर में प्रवेश की अनुमति नहीं है। कुछ दिनों पूर्व केरल में एक दलित मंत्री के पुत्र की शादी के वक्त मंदिर में घटी घटना से आप अवगत होंगे। गांवों में छुआछूत की जड़ें इतनी गहरी बनी हुई है कि न्यायालय के आदेशों के बावजूद भी दलितों को मंदिरों में प्रवेश की अनुमति नहीं दी जाती है। फलत: वे धर्मांतरण के लिए विवश होते हैं। छुआछूत की इस मानसिकता से भी समाज में समरसता नहीं आ पा रही है जो राष्ट्रीय एकता के लिए खतरा है। इसके निदान के लिए न केवल हिंदू धर्म के ठेकेदारों को हिंदुत्व के मूल दर्शन के मद्देनजर अपनी मानसिकता में बदलाव लाना होगा बल्कि सामाजिक, धार्मिक स्वैच्छिक संगठनों को भी आगे कदम बढ़ाकर इसे जनांदोलन का रूप देना होगा।

प्रथम सत्र को संबोधित करते हुए 'विचार दृष्टि' के संपादक श्री सिद्धेश्वर

देश में बढ़ती आर्थिक असमानता, अशिक्षा तथा असमाजवादी व्यवस्था के कारण भी बहुत हद तक सामाजिक समरसता नहीं हो पा रही है। इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय एकता के महत्व को लोगों की समझ में नहीं लाया जा सकता। इस देश के बिहार सहित कई राज्यों में नरसंहारों का जो सिलसिला शुरू हुआ वह भी उस गंदी राजनीति की देन है जिसका आधार है जातिवाद। यही कारण है कि विभिन्न जातियों के बीच व्याप्त कटूता प्रतिशोध में बदल गई है। फलतः समाज छिन्न-विछिन्न हो रहा है। हिंसा-प्रतिहिंसा के इस दौर से अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिसका प्रभाव सामाजिक एवं राजनीतिक गलियारों में स्पष्ट देखा जा सकता है। दरअसल भारत में विभिन्न जातियों के अलग-अलग समूह हैं और उनकी अलग अलग राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं हैं जिसकी पूर्ति के लिए होड़ लगी है क्योंकि आज सारी शक्ति सत्ता में सीमित हो गयी है। इसलिए सत्ता में अपनी हिस्सेदारी के लिए हर जाति का समूह अपनी कमर कसे है। महत्वकांक्षाएं जब टूटती हैं तो संदेह का जन्म होता है और संदेह असुरक्षा को जन्म देत हैं। यही असुरक्षा अस्तित्व के स्थापित्व की जंग छेड़ती है जिससे अनुशासन हीनता पनपती है। राष्ट्रीय एकता के लिए यह असुरक्षा और अनुशासनहीनता खतरनाक है।

भारत ने लोकतंत्र को अपनाकर संविधान में सभी धर्मों को समान अधिकार दिया है। मगर सभी धर्मों के कट्टरपंथी धार्मिक समभाव को नष्ट करने पर अमादा हैं जिसके कारण दंगे भड़क उठते हैं और नरसंहार होते हैं। दरअसल इस देश में कट्टरपंथियों की हैवानियत इस कदर बढ़ गयी है कि वे उन्माद पैदा करने से बाज नहीं आते। कट्टरपंथी चाहे किसी भी धर्म के हों उन्हें अपने धर्म से कुछ लेना-देना नहीं है। वे तो केवल लोगों के दिल में धर्म की आग भड़काकर उस आग में अपने स्वार्थ की रोटी सेकना चाहते हैं। इसलिए ऐसे कट्टरपंथियों एवं आतंकियों से सभी धर्म के लोगों को सावधान और चौकस रहने की आवश्यकता है ।

आज समाज में एक और बात देखने को मिल रही है, वह है तुष्टीकरण की नीति और यह तुष्टीकरण आर्थिक या सामाजिक वर्गों के आधार पर न होकर धर्म के आधार पर है जो ज्यादा खतरनाक है। वोट की राजनीति ने इसे और खतरनाक बना दिया है। आज चिंता इस बात की नहीं है कि कैसे धर्म की कठिनाईयों और कुरीतियों को दूर किया जाए तथा रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों को कैसे नष्ट करने का अभियान चलाया जाए। चिंता सिर्फ इसकी है कि कैसे अल्पसंख्यक शोषित, पीड़ित दलित तथा पिछड़ों का कैसे तुष्टीकरण किया जाए। इससे न केवल आपस में वैमनस्यता बढ़ती है बल्कि लोगों के बीच खाई बनती जाती है। यह राष्ट्रीय एकता को प्रभावित करता है।

रजनी कान्त

पटना के चिंतक एवं विचारक रजनी कांत का मानना है कि सामाजिक समरसता सामाजिक जीवन का प्राण है। यह तभी सम्भव है जब समाज के हर व्यक्ति एक दूसरे के पूरक बने रहे। इसमें धार्मिकता, प्रांतीयता और सांप्रदायिकता का कोई स्थान ही नहीं होना चाहिए। इसके लिए पूरे समाज में एक ही विचारधारा बहने का प्रावधान होना चाहिए। यदि विश्व का कोई व्यक्ति किसी दूसरे समाज में जाय तो उसे यह अहसास हो कि सबों में एक ही मानववादी विचारधारा की गंध मिलती है। यह मानववादी विचारधारा समूचे मानव समाज को समरस बनाये रखने रखने की क्षमता रखता हो। घृणारहित और करुणा का सामंजस्य ही एक शक्तिशाली मानव समाज को आधार प्रदान कर सकता है। भेद-भाव की राजनीति समाज को विखंडित करने का कार्य करता है। जितना भी अमानवीय गुणों की पहचान हमारे मनीषियों नें किया है वह काफी है। धर्म और कर्म में क्या अन्तर है उसे समझे वगैर हम धार्मिक उन्माद से मुक्ति नहीं पा सकते हैं। हम यदि उपरोक्त गुणों को अपने में अंगीकार कर लेते तो हम खुद दूसरों के लिए अनुकरणीय बन सकते है। फिर कौन सी दुनिया बच जायगी जिनसे हमारा कोई टकराव की गुंजाइश रह जायगी।

वैश्वीकरण और आतंकवाद: आज की चुनौती

प्रो० कुमार रवीन्द्र

'वैश्वीकरण और भारत' शीर्षक लेख में प्रो० कुमार रवीन्द्र का मानना है कि वैश्वीकरण अपने आप में न तो कोई मूल्य है और न ही यह अन्य किसी मानव मूल्य की स्थापना करता है। इसे अनंत भौतिक विकास के मूल मंत्र के रूप में प्रसारित किया जा रहा है। विश्वग्राम और विश्वहाट की गुहार देकर पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा एक अर्थतंत्र के तहत पूरे विश्व पर शिकंजा कसा जा रहा है। वैश्वीकरण को एक मूल्य बोध की शक्ल दे दी गई है, जिससे असमर्थ अर्थविकसित अर्थव्यवस्थाओं को आतंकित और दिग्भ्रमित करना आसान हो गया है। उपरी तौर पर देखने में वैश्वीकरण में कोई बुराई नहीं आती किन्तु यदि गहराई से इसके वर्तमान स्वरूप के सभी पहलुओं पर विचार किया जाय तो इसके असली मंतव्यों को पहचानना मुश्किल नहीं होगा।

भारत के लिए वैश्वीकरण एक चुनौती और एक अवसर, दोनों ही रूपों में उपस्थित हुआ है। विश्व परिमंडल में उभरते राष्ट्रों में भारत ही एक ऐसा देश है, जो लोकतांत्रिक शासन पद्धति के तहत अपनी आर्थिक समस्याओं का निराकरण करने का उद्यम कर रहा है और वह तब जबकि जनसंख्या-प्रस्फोट से उसके प्राकृतिक साधनों पर अतिरिक्त दबाब की स्थिति है। वैश्वीकरण के माध्यम से वह अपने अर्थतंत्र को विश्व-अर्थतंत्र के समानांतर तो लाना चाहता हो है साथ-ही वह विश्व की आर्थिक विषमताओं को दूर कर समग्र मानवता के लिए एक संतुलित समरस समाज की भी स्थापना करने का आकांक्षी है। यह दूसरी बात है कि आज हमारी जटिल आर्थिक समस्याओं के चलते विश्व-समुदाय हमारे

दृष्टिकोण को समझ कर भी अनदेखा कर रहा है, परन्तु वह दिन दूर नहीं, जब हमारे सह-अस्तित्व के सोच को पूरा विश्व मानने को बाध्य होगा। अभी कल की ही तो बात है, जब हमारा राष्ट्र कई सदियों की सुप्तावस्था से जाग कर एक नई क्रांति-दृष्टि ले कर विश्व-परिदृश्य पर उपस्थित हुआ था। भारत ने एक महाशक्ति के भरखिलाफ जिस अनूठे अहिंसात्मक ढंग से जन-जागृति पैदा की थी और उस प्रचंड जन-जागृति से उस उपनिवेशवादी पराशक्ति को परास्त किया था, उससे सारा विश्व चकित-विस्मित रह गया था। आज भी विश्व जानता है कि हमारी अपनी समस्याओं से लड़ने का तरीका अलग ही किसिम का है, जो धीमा हो सकता है, कुछ हद तक अवैज्ञानिक और त्रुटिपूर्ण भी हो सकता है, पर हम दूसरों की तरह न तो संकुचित और हिंसक हो पाते हैं और न ही अपनी स्वाभाविक भावात्मक संचेतना को त्याग कर एकांगी हाट-संस्कृति को पूरी तरह अपना पाते हैं।

अकादमिक सत्र में विचार विमर्श करते मंचासीन अतिथिवृंद

जब भारत वैश्वीकरण की बात सोचता है, तो वह राष्ट्रों के आपसी रिश्तों में समानता के आधार पर सहयोग और सहभागिता की बात सोचता है। हमारी 'गणपति' की परिकल्पना भी प्राणिमात्र के समन्वयन और सामंजस्य का प्रतीक है।

आज का वैश्वीकरण जो मनुष्य की स्वार्थ-बुद्धि की चरम पराकाष्ठा को ही वांछनीय एवं आदर्श मानता है, हमारे मूल स्वभाव से वैसे तो मेल नहीं खाता, किंतु हमें उसे आज कोई भी राष्ट्र या समुदाय स्वीकार तो करना ही पड़ेगा। अपने को काट कर सकल विश्व-समुदाय से सकता। चमत्कारिक अलग-अलग नहीं रख को एक छोटी ग्राम-इकाई में संचार-साधनों ने पूरे विश्व का सुदूर से सुदूर स्थान तब्दील कर दिया है। दुनिया उँगलियों की पहुँच में है। विज्ञान 'इंटरनेट' पर आदमी की परिकल्पना को साकार कर ने विश्व-मानव की दिया है, हालाँकि यह विश्व-मानव मानसिकता के धरातल पर आज भी आदि-मानव से बहुत अलग नहीं है। दुनिया के किसी भी कोने में जो कुछ भी छोटा-से-छोटा भी घटित हो रहा है, उसके प्रभाव से हम बच नहीं सकते। हर घटना हमारी संचेतना को जोड़ती या तोड़ती है। ऐसे में 'मूँदहु आँख कतहुँ कोउ नाहीं' की मनःस्थिति न तो संभव है और न ही श्रेयस्कर। रास्ता एक ही है कि हम वस्तुस्थिति को अंगीकार करें और इसी में अपने लिए जो कुछ वरणीय है, उसका स्वागत करें, पूरी तरह अपनाएँ और जो कुछ भी अवांछनीय अथवा हमारी प्रकृति के प्रतिकूल पड़े, उसे निस्संकोच और बिना किसी हीनता-बोध और विभ्रम के अस्वीकार करने का साहस रखें, किंतु इसके लिए हमें स्वयं अपनी प्रगति की दिशा और तेवर को निश्चित करना पड़ेगा, अपने विकास का 'मॉडल' स्वयं बनाना पड़ेगा और उस पर दृढ़ता से अमल करना पड़ेगा। उन सम्मोहों से जूझना भी पड़ेगा, जो हमारी अस्मिता को खंडित या आहत करे। वैश्विक एवं अंतरराष्ट्रीय मंचों पर अपने पक्ष, अपने सोच एवं अपनी राय को बेझिझक और पूरी आत्म-निष्ठा के साथ प्रस्तुत करने का भी धैर्य हमें रखना होगा। सबसे बड़ी चुनौती जो किसी भी देश के सामने वैश्वीकरण ने रख दी है, वह है व्यक्तिगत राष्ट्रों की अस्मिता के विलोपन की, दूसरी बड़ी चुनौती उनके अपने देश के भीतर की स्थितियों की है। अब कोई भी शासन-व्यवस्था, चाहे वह प्रजातांत्रिक हो या निरंकुश सत्तात्मक, अपनी जनता को बहुत लंबे समय तक भुलाने में नहीं रख सकती। कहीं भी कोई भी विकास हो, सूचना-तांत्रिकी आज उसकी खबर हर आदमी तक तत्काल पहुँचा देती है। आम जनता को उस विकास-स्थिति को पाने की इच्छा करने से यह कह कर रोका नहीं जा सकता कि वह हमारे लिए ठीक नहीं है। अस्तु, उसे पाने का यत्न करने में कोताही न हो, यह हर राष्ट्र के लिए जरूरी है।

ज्योति शंकर चौबे

'वैश्वीकरण: आधुनिक भारत की चुनौती' शीर्षक लेख में सुप्रसिद्ध चिंतक ज्योति शंकर चौबे लिखते हैं कि 15 दिसम्बर 1993 के आते ही विश्व के 116 देशों ने जब डंकल प्रस्ताव का समर्थन किया तो भारत ने भी तीसरी दुनिया के विकासशील देशों का साथ छोड़कर पता नहीं किस विवशतावश 117वें समर्थक देश के रूप में अपने हस्ताक्षर कर दिये। इस प्रकार भारत ने आर्थिक उपनिवेशवाद के सम्मुख अपने घुटने टेक दिये। तीसरी दुनिया के देशों में विदेशी कम्पनियों के लिये व्यापार की सहज एवं सुलभ स्थिति बनाने हेतु अमेरिका द्वारा अपने व्यापार अधिनियम सुपर 301 के प्रयोग की धमकी ने भी इन देशों में फूट डालने की प्रक्रिया में सफलता पायी। कुछ देशों पर यह कानून लागू भी किया गया। गैट की शर्तों के परिप्रेक्ष्य में भारत ने अपने विकास की संभावनायें टटोली। चीन ने सशर्त समर्थन की बात कर अपनी आत्मनिर्भरता का जहाँ परिचय दिया, भारत ने अंग्रेजियत के परिवेश में परावलंबन का सहारा लिया। इस समझौते के तहत बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए तीसरी दुनिया के विकासशील देशों में पूँजी निवेश एवं व्यापार की सहज तथा सुलभ सुविधा प्राप्त हो गयी।

समझौते की शर्तों के अनुसार सीमा शुल्कों में कटौती एवं आयात पर बंदिशों को समाप्त करने का विधान बना। कृषकों के उपलब्ध समर्थन मूल्य में कटौती कर 10 प्रतिशत से अधिक की सब्सीडी प्रतिबंधित की गयी। जबकि अमेरिका स्वयं अपने किसानों को 550 डॉलर (23650रु०) प्रति हेक्टेयर सब्सीडी देता है। कुछ लोग इसे भारतीय व्यवस्था के खगोलीकरण की बात करते हैं। लेकिन वास्तविकता यह है कि यह व्यवस्था विश्व बैंक, आई० एम०एफ० और गैट्स के इर्द गिर्द ही घूमती है।

आधुनिक भारत को भूमण्डलीय वैश्वीकरण की दौर में इन सभी समस्याओं के बीच से गुजरना है और इन चुनौतियों का सामना करना है, जो अपनी प्राकृतिक एवं बौद्धिक संपदा के सही एवं व्यवहारिक उपयोग के द्वारा ही संभव है। परावलंबन इसका समाधान नहीं है। वैश्वीकरण के दौर में विकसित एवं विकासशील देशों की असमानत' की दूरी बढ़ी है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की रकम 1991 के 36 अरब डॉलर से बढ़कर दो हजार ई० में 178 अरब डालर हो गयी है। जब वास्तविकता यह है कि इसका 80 प्रतिशत केवल 10 विकसित देशों के खाते में ही गया है। विश्व की दो अरब 50 करोड़ की आबादी आधुनिक उर्जा सेवा से बंचित है। हमारे देश की उत्पादन क्षमता विश्व की औसत उत्पादन क्षमता 2.50 टन प्रति हेक्टेयर तक भी नहीं पहुँच पायी है। और 2 टन प्रति हेक्टेयर पर स्थिर है, जबकि चीन की प्रति हेक्टेयर उत्पादन क्षमता 5 टन अमेरिका की 6 टन, एवं कनाडा की 8 टन है। देश की एक अरब से अधिक आबादी में 20 करोड़ लोगों को दोनों वक्त रोटी के प्रबंध की समस्या भी देश के सामने है। सरकारी तौर पर घोषित देश के 12 राज्य सूखे की चपेट में हैं।

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में सामने आयी इन चुनौतियों को सामना देश को अपने बल बूते करना होगा। बहुराष्ट्रीय कंपनियों से प्रतिस्पर्धा के लिए देश में अपने आप को तैयार करना होगा। आतंकवाद से मुकाबले के लिए अपने बल बूते की बात हम करते हैं। वैश्वीकरणीय आर्थिक उपनिवेशवाद का सामना भी भारत को अपने परिवेश एवं सोच में ही करना होगा। वैश्वीकरण भारत के लिए वरदान नहीं है, एक चुनौती है। देश में उपलब्ध साधनों एवं अपने बौद्धिक क्षमता तथा सामर्थ्य को विकसित कर ही हम इस चुनौती का सामना कर सकते हैं।

बढ़ती आबादी पर अंकुश में युवाओं की भूमिका

डॉ० पी० दयाल

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त भूगोलवेत्ता तथा मगध विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ० पी० दयाल ने अपने 'भारत की जनसंख्या समस्या' शीर्षक आलेख में लिखते हैं कि देश के आर्थिक विकास और जनसंख्या वृद्धि में घनिष्ट संबंध है। जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना में अधिक विकास की दर ऊँची नहीं होने पर देश आर्थिक दृष्टि से डूबता जाता है, प्रति व्यक्ति आय घटती जाती है और जीवन स्तर नीचा होता जाता है। भारी जनसंख्या दबाव के ही कारण संसार के कुल निर्धन व्यक्तियों में से एक-तिहाई से अधिक भारत में निवास करते हैं। निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाले लगभग 26 करोड़ लोगों को भोजन, वस्त्र, घर और काम उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती है। आर्थिक विकास और एक स्वस्थ राष्ट्र निर्माण के मार्ग में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या एक प्रभावशाली अंकुश है जो देश के आर्थिक विकास के सभी प्रयासों और योजनाओं को निष्फल कर देती है।

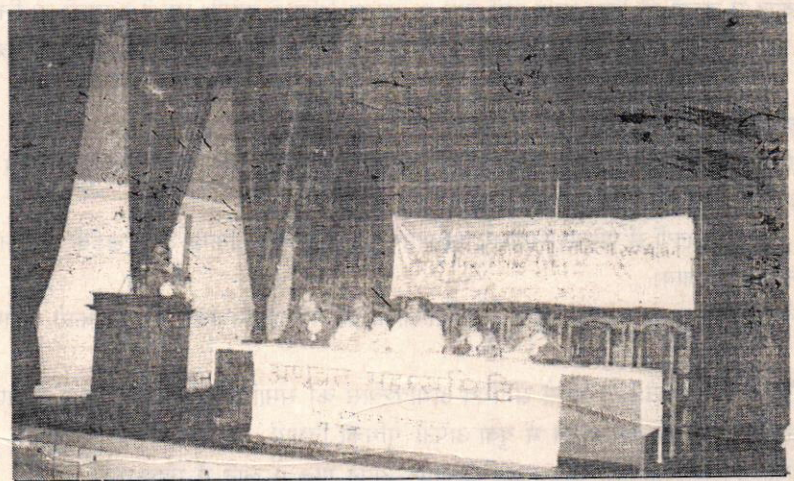

डॉ.विद्या शर्मा की अध्यक्षता में अ० भा० युवा एवं महिला सम्मेलन

जनसंख्या की तीव्र वृद्धि दर से अनेक समस्यायें उत्पन्न होती हैं। तीव्र वृद्धि जनसंख्या की आयु संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाती है और 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या अधिक होती है। 1991 में भारत में इस आयु समूह का प्रतिशत 38 था जो विकसित देशों की तुलना में बहुत अधिक है, जहाँ अधिकांश जनसंख्या 40 वर्ष से ऊपर आयु वाली है। 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चे उत्पादन प्रक्रिया में भाग नहीं लेते और पूर्णत: दूसरों पर आश्रित हैं। अत: जनसंख्या के निर्भरता अनुपात में वृद्धि होती है। देश के उपलब्ध साधनों का एक बड़ा हिस्सा बच्चों के भरण-पोषण, शिक्षा और स्वास्थ्य पर खर्च हो जाता है। यही बच्चे कुछ वर्ष बाद काम की खोज में श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं जिससे बेरोजगारी की समस्या और भी गंभीर हो जाती है। फिर इस युवा-जनसंख्या में प्रजनन-शक्ति अधिक होती है और इससे जनसंख्या-वृद्धि में मदद मिलती है। सौभाग्य से 1991-2001 की अवधि में जन्म दर में थोड़ी कमी आयी है, और जो भी आंकड़े उपलब्ध हैं उनसे पता चलता है कि छ: वर्ष तक के बच्चों की संख्या में 1991 और 2001 के बीच कमी हुई है और कुल जनसंख्या में उनका प्रतिशत

लगभग 2.5 प्रतिशत कम हुआ है। यह एक आशाजनक संकेत है और इस दशक के जन्म दर में गिरावट से संबंधित है।

तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए भोजन, शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं में पर्याप्त वृद्धि करना मुश्किल काम होता है और भूखमरी, गरीबी, साक्षरता तथा स्वास्थ्य की समस्यायें पहले से भी अधिक जटिल होती जाती हैं। यदि हम भोजन की समस्या को लें तो पाते हैं कि भारत में प्रति व्यक्ति कृषि के अन्तर्गत भूमि बराबर घटती जा रही है और 1951 में 0.84 एकड़ से घटकर 1991 में 0.5 एकड़ रह गयी है। दो फसली जमीन तथा सिंचित दोनों में भी जनसंख्या वृद्धि के अनुपम वृद्धि नहीं हुई है। खाद्यानों के उत्पादन की वार्षिक वृद्धि कर जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर के बहुत निकट होते हुए भी पीछे रही है।

फिर जनसंख्या वृद्धि दर अधिक रहने से बचत और निवेष दोनों में कमी आयी है और उस अनुपात में विकास के लिए कम राशि उपलब्ध होती है तथा विकास की गति धीमी होने लगती है। यही कारण है कि बेरोजगारी, भोजन, साक्षरता और स्वास्थ्य जैसी समस्याओं से अभी भी हम उलझ रहे हैं और इनमें संतोषजनक प्रगति नहीं हो पा रही है। विकास की गति धीमी होने से और लोगों के जीवन स्तर में स्पष्ट प्रगति नहीं होने से, समाज में असंतोष और राजनीतिक अशांति उत्पन्न होती है और अपराध तथा हिंसा में वृद्धि होती है। अत: जनसंख्या में वृद्धि दर पर नियंत्रण और विशेष रूप से जन्म दर में कमी अत्यन्त आवश्यक है।

गोविन्द शर्मा

वरिष्ठ एवं प्रखर पत्रकार गोविन्द शर्मा 'बढ़ती आबादी : युवाओं के लिए चुनौती' शीर्षक अपने लेख में कहते है कि हमारी सरकार युवाओं के सुन्दर भविष्य की खातिर बढ़ती आबादी रोकने के लिए क्या कदम उठा रही है। हालांकि सरकारी एजेंडा में आबादी नियंत्रण का कार्यक्रम तो शामिल है। उसके लिए स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और राज्य सरकारों के स्वास्थ्य विभाग कुछ कार्यक्रम चला रहे हैं। लेकिन ये कार्यक्रम काफी नहीं हैं। सभी जानते हैं कि पचास के दशक से ही अपने देश में परिवार नियोजन एक सरकारी कार्यक्रम के रूप में चलाया जा रहा है। इसके लिए कर्मचारियों और अधिकारियों की फौज, है अरबों रुपये इस मद में खर्च किए गये। फिर भी परिवार नियोजन का कार्यक्रम सफल नहीं माना जा रहा है। हर पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में इसे स्थान दिया जाता है। लेकिन कार्यान्वयन के समय इसमें ढिलाई का प्रमुख कारण राजनेताओं में इस कार्यक्रम के प्रति इच्छा शक्ति का अभाव है।

राजनैतिक दलों के नेता इस विषय पर बात करने से कतराते हैं। उनका भ्रम है कि इस कार्यक्रम पर जोर देने से उनका वोट-बैंक बिगड़ जाएगा। इसका एक कारण यह भी है कि एक संप्रदाय के कुछ लोग, जो नासमझ हैं, इसे धर्म विरोधी मानते हैं। जबकि आज दुनिया के सभी धर्मोवाले देशों में जनसंख्या नियंत्रण का कार्यक्रम बड़े प्रभावी ढंग से लागू किया जा रहा है। इस सच्चाई से इनकार नहीं कर सकते। कोई धर्म इंसान को जानवर की जिन्दगी जीने की कामना नहीं करता है। धर्म का मतलब इंसान को सच्चा इंसान बनाने में मदद देना है। ज्यादा बच्चों से परिवार गरीब होता है। बच्चे का सही ढंग से लालन-पालन नहीं हो पाता है। सरकार के सामने भी बढ़ती आबादी को खिलाने, पढ़ाने और स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराने की परेशानी रहती है। इसमें दुनिया के दूसरे देशों के मुकाबले नागरिकों का जीवन सुख सुविधाओं से पूर्ण कैसे हो सकता है। बेकारी बढ़ती जाएगी। स्कूल में बच्चों के लिए जगह नहीं रहने के कारण अशिक्षा बढ़ेगी। बढ़ती आबादी के लिए उतने चिकित्सक कहाँ से आयेंगे। यह सवाल देश के नौजवानों के सामने है। अगर भारत के नौजवान मन-तन से लग जाएं तो आबादी नियंत्रण की समस्या देखते देखते हल हो सकती है।

युवाओं को क्या करना चाहिए

1. जनसंख्या नियंत्रण के लिए युवाओं को सबसे पहले सरकारी कार्यक्रमों की जानकारी हासिल करनी चाहिए। परिवार नियोजन के जितने कार्यक्रम अभी चलाए जा रहे हैं उनमें युवाओं की सीधी भागीदारी हो।
2. युवक मांग करें कि सभी विश्वविद्यालयों में परिवार नियोजन को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए। लड़के और लड़कियों को परिवार नियोजन की विधियों की सही जानकारी दी जाय।
3. प्रत्येक गांव में युवक-युवतियों की टोली बने जो पुरुषों और महिलाओं को परिवार नियोजन की जानकारी दे तथा सेवाएँ उपलब्ध कराने में पहल करें।
4. बच्चे और बच्चियों के विभेद को मिटाने और इससे संबंधित अंधविश्वास की समाप्ति के लिए अभियान चलाए।
5. ग्रामीणों को अच्छी स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराने में युवा अपनी भूमिका निभायें
6. परविार नियोजन से संबंधित उपलब्ध सरकारी सुविधाओं को अपने अपने गांव में लाने में मदद करें।
7. प्रत्येक युवक स्वयं परिवार नियोजन के नियमों का पालन करें
8. छोटे परिवारों को गांव स्तर पर सम्मानित किया जाय।
9. यह प्रचारित किया जाए कि परिवार नियोजन कार्यक्रम किसी भी संप्रदाय के सिद्धांतों के विरूद्ध नहीं है।

भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति और राष्ट्रीय नीति

डॉ. एन. सुरेश

मलयालम एवं हिंदी के सशक्त हस्ताक्षर तथा केरल विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. एन. सुरेश **केरल में हिन्दी भाषा की स्थिति और मलयालम भाषा हिंदी अध्येताओं की अध्ययन संबंधी समस्याएँ** शीर्षक अपने लेख में भारतीय भाषाओं पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि विश्व में मानव वर्ग की 1/5 आबादी तथा 3280483 वर्ग कि०मी० विस्तृति वाला भारत असंख्य भाषाओं एवं बोलियों का देश है। 1971 के सेंसस के हिसाब से इस देश में मातृभाषा के रूप मे व्यवहृत भाषाओं की संख्या 700 है। आर्य, द्रविड़, विष्ती चीनी और आग्नेय - इन चार भाषा परिवारों के अंतर्गत आनेवाली भिन्न-भिन्न भाषाएँ हैं ये सब। एक हजार से भी कम लोगों द्वारा मातृभाषा के रूप में व्यवहृत भाषाएँ भी इस सूची में शामिल की जाए तो भारत की भाषाओं की कुल संख्या 1652 तक हो जाती है। भाषिक गठन एवं शब्दावली की दृष्टि से काफी भिन्न होने पर भी, ये भाषाएँ, विशेष कर आर्य और द्रविड़ परस्पर बड़े गहन प्रभाव डालती है और निश्चय ही इन के कुछ सामान्य लक्ष्ण भी ढूँढ़े जा सकते हैं जो कि भारतीय कहे जा सकते हैं। भाषा बाहुल्य की यह परिस्थिति भारत में एक ओर शासन-प्रशासन की केंद्रीय व्यवस्था को किसी हद तक शिथिल बना देती है और शासन तंत्र के लिए समस्याएँ पैदा कर देती है, तो दूसरी ओर देश की सामाजिक संस्कृति को भी धन्य और समृद्ध बना देती है। भारत रूपी इस विशाल उद्यान के भाषा रूपी छोटे बड़े, रंग-बिरंगे महक भरे फूलों की शिल्प भंगिमा देश की अति सुंदरता का निशान है, विकलता का नहीं, देश के लिए अभिशाप नहीं, वरदान है। उद्यान में विकसित फूलों में कुछ अत्यंत आकर्षक और मन को लुभानेवाले होते हैं तो कुछ कम आकर्षक होते हैं। परंतु अनाकर्षक फूलों की तो हम उपेक्षा नहीं करते। वैसे ही असंख्य भाषाओं में कुछ तो अत्यंत विकसित, समृद्ध एवं ओजस्वी होती है जब कि कुछ तो कई कारणों से अपेक्षाकृत कम विकसित या अल्पविकसित या अविकसित तथा कमजोर होती हैं। लेकिन इन सभी भाषाओं को बराबर पोषित एवं विकसित करना और सुरक्षित रखना एक सुसंस्कृत प्रजातंत्रीय देश के प्रथम कर्तव्यों में से एक है। लेकिन चूँकि किसी देश के भौतिक विकास में भाषा की सबसे बड़ी भूमिका निभानी होती है और सारे देश को एक इकाई मानकर उसकी समस्त विकासपरक क्रियाकलापों के जल-तंत्र को एक सूत्र में बाँधे रखना होता है, इसलिए, भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में सभी भाषा-भाषियों के विचारों, आशाओं, आकांक्षाओं, आवश्यकताओं एवं संस्कारों को संजोते हुए विकास कार्यक्रमों को रूप देने और उसकी प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए एक मेधावी भाषा की आवश्यकता एवं अनिवार्यता असंदिग्ध है और इसकी अनावश्यकता को बहस का विषय बनाना देश के समग्र विकास की प्रत्याशा में जिंदगी जीनेवाली आम जनता को बहकाने और विकास की प्रक्रिया में भागीदार होने से उन्हें वंचित रखने के मुट्ठी भर वरेण्य वर्ग के नौकरशाहों के कुचक्र का परिणाम है।

डॉ. परमानंद पांचाल की अध्यक्षता में भारतीय भाषाओं पर संगोष्ठी

वर्ण व्यवस्था, शब्दावली, दर्शन, संस्कार, संस्कृति, दर्शन साहित्य, समीक्षा शास्त्र आदि तमाम पद्धतियों के विकास की दृष्टि से भारत में कोई भी भाषा नहीं बची है जो संस्कृत का ऋणी न रही हो। इस प्रकार भारत के सांस्कृतिक संग्रथन और एतद्वारा एकीकरण को संपोषित करने एवं सुरक्षित रखने में संस्कृत भाषा ने अपने सूरजनुमा से जो शांत भूमिका निभाई थी वह अत्यंत प्रशंसनीय एवं निर्णायक है।

इसी संस्कृत की परंपरा में उद्भूत एवं विकसित तथा आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी विकास की माँग के अनुरूप अपने को परिपूरित बनाने में अपनी परनानी संस्कृत का ही आश्रय लेती रहने वाली हिंदी आज भारतभर में सबसे अधिक बोली एवं समझी जानेवाली भाषा है। अपनी योग्यता के आधार पर भारतीय संविधान द्वारा उसे संघ की राजभाषा घोषित किए (अंग्रेजी के साथ सह राजभाषा के रूप में) अर्ध शताब्दी हो चुकी है, पर उसके कार्यान्वयन की प्रगति, खासकर अहिंदी प्रदेशों में, केवल सालाना हिंदी पखवाड़ा या हिंदी दिवस समारोह तक सीमित रह गई है। इस दिशा में हमारे असफल रहने के कई कारण तो होते हैं, मगर आधारभूत कारण का तो मुखौटा खोलने पर ही पता चलेगा।

डॉ. शिववंश पाण्डेय

सुप्रसिद्ध चिन्तक एवं समीक्षक डॉ. शिववंश पाण्डेय ने अपने तथ्यपरक लेख में कहा है कि भारत में 97 प्रतिशत जनता द्वारा बोली जाने वाली 23 भाषाओं में से 18 भाषाओं को संविधान की अष्टम अनुसूची में स्थान दिया गया है और देश में सर्वाधिक बोली एवं समझी जाने

वाली भाषा हिन्दी को 'राजभाषा' घोषित किया गया है। स्वतंत्रता पूर्व जिस हिन्दी को राष्ट्रभाषा की महत्ता और लोकप्रियता प्राप्त थी वह संविधान द्वारा राष्ट्रभाषा की गरिमा प्रदान करने में सी०राजगोपालाचारी (तमिलनाडु), राजा राम मोहन राय, जस्टिस शारदा चरण मिश्र, विद्यासागर, सुनीति कुमार चटर्जी(बंगाल), लोकमान्य तिलक (महाराष्ट्र), लाला लाजपत राय (पंजाब), महात्मा गाँधी, स्वामी दयानंद सरस्वती (गुजरात) सदृश हिन्दीतर भाषियों ने पहल एवं योगदान किया था उस हिन्दी को राजभाषा का भी गौरव प्रदान करने तथा उसे राजभाषा के रूप में पूर्णत: प्रतिष्ठित करने में इन भाषाओं का यथापेक्षित योगदान क्यों नहीं मिल रहा है। योगदान की बात तो पृथक रही, कई भाषा समुदाय द्वारा इसका खुलकर विरोध क्यों किया जा रहा है।

मैं समझता हूँ जब भी भारत की राष्ट्रभाषा राजभाषा या सम्पर्क भाषा की चर्चा की जाय तो हमें भारत की सभी भाषाओं को साथ लेकर चलना चाहिए। राजभाषा हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं की शत्रु एक ही विदेशी भाषा है अँग्रेजी। तब हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाएँ जो अपने अविर्भाव काल से समरस भाव से विकसित हो रही हैं और परस्पर आदान प्रदान करती हुई अपने अपने क्षेत्र में प्रचलित और प्रसारित हैं, एक जुट होकर उस विदेशी भाषा का रास्ता नहीं रोक सकतीं जो सभी भारतीय भाषाओं के विकास मार्ग पर अवरोध के रूप में खड़ी है।

अधिवेशन में प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए श्री अजीत कुमार

एक साजिश के तहत हमारे बीच यह भ्रम फैलाया गया है कि भारत में चार भिन्न भिन्न परिवारों में भाषाएँ प्रचारित हैं और इनमें पारस्परिक बोधगम्यता का अभाव है यह वही दुष्प्रचार किया जाता है कि हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाएँ पूर्ण विकसित नहीं हैं और इसलिए आधुनिक ज्ञान- विज्ञान की प्रगति को ढोने का सामर्थ्य उनमें नहीं है। अत: अंग्रेजी को अपनाने के सिवाय हमारे पास कोई विकल्प नहीं है। ऐसे भ्रामक प्रचार के मूल में आप जायें तो पायेंगे कि इस दुष्प्रचार के जनक देश का मात्र 2 प्रतिशत वह तथाकथित अभिजात वर्ग है जो अंग्रेजी के बल पर सत्ता और समाज पर काबिज बना रहता है। देश में अंग्रेजी जानने और बोलनेवालों की संख्या 2 प्रतिशत से अधिक नहीं है पर वे 98 प्रतिशत जनता के ऊपर आधिपत्य जमाये रखने के लिए अंग्रेजी भाषा को अपना अस्त्र बनाये हुए हैं। अंग्रेजी के इन पक्षधरों द्वारा यह प्रचार किया जाता है कि हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाएँ अंग्रेजी के समान विकसित, आधुनिक और सशक्त नहीं हैं, इसलिए इनके द्वारा हम देश को आगे नहीं बढ़ा सकते। वे यह भूल जाते हैं कि किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी अपनी भाषा के माध्यम से ही होता है, परायी भाषा के माध्यम से नहीं। इतिहास में ऐसे उदाहरण अब तक नहीं देखने को मिलते हैं कि किसी समाज या राष्ट्र ने किसी विदेशी भाषा को अंगीकृत कर अपना उत्थान किया हो।

संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, तमिल सदृश प्राचीन भाषाओं से विकसित हमारी वर्तमान आधुनिक भारतीय भाषाओं को भी वे सारे गुण, लक्षण, प्रवृतियाँ व सामर्थ्य विरासत में प्राप्त हुए हैं। अंग्रेजी राज स्थापना से पहले तक वे सारी भाषाएँ अपने अपने इलाकों में संबंधित भाषायी समाज की समस्त आवश्यकताओं और आकांक्षाओं की पूर्ति करती रहीं और संपर्क भाषा के रूप में मध्यदेश की भाषा पहले संस्कृत और बाद में क्रमश: पाली, प्राकृत और अपभ्रंश कार्य करती रही। सम्पर्क भाषा के विकास, प्रचार प्रसार में सभी इलाकों के, सभी भाषाओं के लोग योगदान करते रहे हैं। तमिल भाषी लोग भी इसके अपवाद नहीं रहे हैं बल्कि अन्य लोगों की तुलना में तमिल प्रांत के लोगों का इसमें अधिक योगदान के प्रमाण मिलते हैं। नवीन शोध से यह पता लगा है कि तमिलभाषी अन्य देशवासियों व विदेशियों से सम्पर्क के लिए संस्कृत का प्रयोग करते थे। तमिल व्यापारी चीनी औ जापानी व्यापारियों से तथा अन्य दक्षिणपूर्वी एशियायी देशों के व्यापारियों से अपना व्यवहार संस्कृत के माध्यम से किया करते थे। लगभग सभी भारतीय भाषाओं ने अपनी आवश्यकता के अनुसार संस्कृत की इस अपार शब्द सम्पदा से लाभ उठाया है। भारत की भाषाएं ही नहीं अपितु बृहत्तर भारत के अंग माने जानेवाले दक्षिण पूर्वी एशियायी देशों की भाषाएँ भी संस्कृत की ऋणी हैं। प्राचीन समय में मध्यदेश की भाषाएँ जिस तरह से भारत में सार्वदेशिक सम्पर्क भाषाओं के रूप में काम करती रही, उसी प्रकार वर्तमान समय में हिन्दी यह भूमिका निभा रही है। अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में हिन्दी की स्थिति विलक्षण है जो अन्य भारतीय भाषाओं में उपलब्ध नहीं है।

यदि संविधान के अनुच्छेद 343 द्वारा देवनागरी लिपि में लिखित को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया तो अनुच्छेद 345 में राज्यों को अधिकार दिया जाता कि वह उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग के अर्थ उस समय में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिन्दी को अधिकार दे सकेगा। संविधान के अनुच्छेद 343, 345 और 351 को निष्ठापूर्वक बिना किसी राजनीतिक हस्तक्षेप के लागू होने दिया गया होता तो आज भारतीय भाषाएँ अँग्रेजी से पराभूत होती नहीं दिखाई देती। आज अंग्रेजी भारतीय भाषाओं पर इसलिए हावी है कि हमने उसे भारतीय भाषाओं के सिर पर बैठने की अनुमति दे रखी है। राजभाषा अधिनियम 1963 को अधिनियमित कर यदि अंग्रेजी को अनन्तकाल तक संघ की राजभाषा बने रहने का अवसर नहीं दिया होता तो शायद अंग्रेजी इस रूप में भारतीय

भाषाओं को दबाये रखने में समर्थ नहीं होती। 1967 ई० में तो राजभाषा अधिनियम में संशोधन कर ऐसा प्रावधान कर दिया गया कि अब अंग्रेजी को अपदस्थ करने में शायद ही भारतीय भाषाएँ समर्थ हो सकें। इस संशोधन के द्वारा यह प्रावधान कर दिया गया है कि जब तक भारत का प्रत्येक राज्य केवल हिन्दी को ही संघ की राजभाषा स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होगा तब तक हिन्दी के साथ अंग्रेजी भी संघ की राजभाषा बनी रहेगी और वह दिन शायद निकट भविष्य में शीघ्र नहीं आने वाला है क्योंकि जिन तीन राज्यों की राजभाषा अंग्रेजी है वे कब और किस परिस्थिति में हिन्दी को संघ की राजभाषा मानने के लिए सहमत होंगे, यह विचारणीय है। स्पष्ट है कि जबतक अंग्रेजी संघ की राजभाषा के रूप में चलती रहेगी तबतक हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं को समाज तथा सरकार में वर्चस्व एवं अधिकार रखने वाले 2-3 प्रतिशत अंग्रेजी भक्त लोग पनपने नहीं देंगे। उन्हें भय है कि यदि भारतीय भाषाओं की प्रशासन आदि के क्षेत्र में प्रभुता स्थापित हो गई तो प्रशासन के उच्च पदों पर से उनका एकाधिकार छिन जायेगा और अन्य सामान्य लोग भी इनके समकक्ष स्थान पर बैठने लगेंगे।

डॉ. गुलाबचंद कोटाडिया

विविध विधाओं के चर्चित रचनाकार डॉ.गुलाबचंद कोटाडिया(चेन्नई)**भाषायी राष्ट्रनीति** शीर्षक अपने आलेख में लिखते हैं कि भावनाओं को अभिव्यक्ति करने के लिए मातृभाषा आवश्यक है। वही एकमात्र सशक्त माध्यम है। यह हम भारतीयों का एक भ्रम है कि अंग्रेजी के बिना सरकारी कामकाज चल ही नहीं सकता है। महाशक्ति चीन, फ्रांस और रूस अंग्रेजी देश नहीं है फिर भी विज्ञान सूचना प्रौद्योगिकी में बहुत ही विकसित देशों की श्रेणी में खड़े हैं और वे अपने देश का राज्यकार्य सब अपने राष्ट्रभाषाओं में ही करते हैं। बाहर जाते हैं तो अपनी भाषा में ही बोलते हैं जबकि हमारे नेता बाहर अंग्रेजी का ज्ञान बघारने में अपना गौरव मानते हैं। अंग्रेजी के प्रति इस मोह को तोड़ना ही होगा। हढ राजनीतिक इच्छा का अभाव ढेर सारे अवरोध खड़ा कर देता है। ढीले-ढाले लूजपुंज कदम नाकामी रहे। राष्ट्रभाषा हिन्दी हो इसपर सभी सहमत हैं फिर विरोध कैसा? राष्ट्रभाषा एक राष्ट्र की महत्वपूर्ण पहचान व धरोहर होती है। राष्ट्रीय नीति के लिए ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

क्षेत्रीय भाषाएं अपनी उन्नति व प्रगति में लगे रहें पर क्षेत्रीय भाषा के बाद हिन्दी को अनिवार्य भाषा घोषित कर अंग्रेजी को स्वैच्छिक व नैकात्यिक भाषा घोषित कर दें। कान्वेंट व अंग्रेजी माध्यम को ज्यादा प्राथमिकता न दी जाए। त्रिभाषा फार्मूला विवाद का विषय बन चुका है यद्यपि उसकी उपयोगिता को कम नहीं आंका जाना चाहिए था। अहिन्दी प्रदेश पूर्वाग्रह हटा दें कि उन पर हिन्दी थोपी जा रही है। त्रिभाषा अहिन्दी प्रदेशों के लिए उपयोगी था पर आश्चर्य तो हिन्दी राज्यों का है जो हिन्दी राष्ट्रभाषा को पूर्णत: क्यों नहीं सरकारी राजकाज में अपना रहे हैं वे इस कार्य में पहल करें। हिन्दी राष्ट्रभाषा हो यही हमारा ध्येय होना चाहिए। अगर हिन्दी प्रदेश ही हिन्दी से कतराएंगे तो अन्य भाषियों को दोष देना वृथा है। केन्द्र सरकार एक राष्ट्रीय नीति अपनाए जो कि एक राष्ट्रभाषा स्वयं हो। भाषा ही सर्वभाषा राष्ट्र की सर्वोपरि पहचान होती है।

डॉ. कलानाथ मिश्र

उदीयमान एवं तेजस्वी रचनाकार तथा मगध विश्वविद्यालय के डॉ. कलानाथ मिश्र का मानना है कि भारत जैसे बहुभाषा-भाषी विशाल राष्ट्र में भावात्मक एकता और सांस्कृतिक उत्कर्ष कायम रखने के दायित्व निर्वहन करने की क्षमता और दक्षता यदि किसी भाषा में है तो वह निर्विवाद रूप से हिन्दी ही है। भारत की क्षेत्रीय भाषाई एकता, अखण्डता, सांस्कृतिक चिन्तन, व्यावहारिक विचार विनिमय तथा समग्र राष्ट्रीय तथा सामाजिक राजनैतिक जन चेतना का संचार करने की क्षमता उसी भाषा में निहित है जो अन्य महत्वपूर्ण भारतीय भाषाओं तथा अनेक लोक भाषाओं के बीच केन्द्रीय भूमिका निभा पाने में सक्षम हो। वस्तुत: इस दृष्टि से हिन्दी विभिन्न भारतीय भाषाओं के बीच संपर्क और एकता कायम करने वाली भाषा है।

इतना तो स्पष्ट है कि हिंदी को किसी दूसरी भारतीय भाषा से टकराव नहीं है। अंग्रेजी जो टकराव कभी-कभी भाषाई माध्यम से व्यक्त होता है, वह निजी स्वार्थ एवं राजनैतिक कारणों से किया जाता है। परन्तु देश की नवीन राजनैतिक परिदृश्य में क्षेत्रीय दलों को भी राष्ट्रीय स्तर पर अपना महत्व अनुभव हो रहा है और वे भी भली-भांति अपनी राष्ट्रीय भूमिका निभा रहे हैं, जिससे तथाकथित राजनैतिक हिंदी विरोध भी कम हुआ है। आम जन तो हिंदी को दिल से राष्ट्रभाषा मान ही चुके हैं। वे धड़ल्ले से हिंदी धारावाहिक और सिनेमा का मजा लेते हैं। नवीन संचार माध्यमों के बदौलत हिंदी भारत के कोने-कोने में रच बस गई है। यहां मैं विशेष रूप से भारतीय सिनेमा जगत को उनकी उत्कृष्ट हिंदी सेवा हेतु साधुवाद देना चाहता हूँ। उन्होंने केवल भारत वर्ष में ही नहीं संपूर्ण विश्व में हिंदी के लिए जो कुछ भी किया है वह अविस्मरणीय है। दूरदर्शन के एक साक्षात्कार कार्यक्रम में अनेक दक्षिण के हिंदी कलाकार, मैं विशेष रूप से हेमामालिनी, जयाप्रद्रा आदि का नाम से लेना चाहूंगा जिनकी हिंदी स्नेह स्वत: सामने आता है। किंतु साथ ही यह भी शिकायत है कि कुछ ऐसे भी कलाकार हैं जो जीवन भर हिंदी में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर भी बनावटी रोब ओढ़कर अंग्रेजी में देते हैं। यही हाल कुछ अफसरशाही लोगों का भी है। आज कल एक और प्रचलन चल पड़ा है वह है 'हिंगलिश' का। न हिंदी न अंग्रेजी। वस्तुत: उन्हें ठीक से कोई भाषा नहीं आती। मैं हिंदी की इस विकास यात्रा में भारतीय रेल के अवदानों को भी नहीं भुला सकता।

मैं तो महावीर प्रसाद शुक्ल की यह बात दोहराता हूं कि "हमें यह देखकर क्षोभ होता है कि हमारे देश में ऐसे लोग अंग्रेजी भाषा का समर्थन करते हैं जिनकी न तो मातृभाषा अंग्रेजी है और न पितृभाषा अंग्रेजी है।" कामिल बुल्के की तरह मैं अंग्रेजी को दासी के रूप में रहने

को नहीं कहता, किन्तु उसकी स्थिति भारत से सदैव ही एक अतिथि की तरह ही रहनी चाहिए, उसी में भारत की एकता, अखण्डता, अस्मिता, संस्कृति, समाज अक्षुण्ण रह सकता है क्योंकि राष्ट्रभाषा और राष्ट्र अभिन्न हैं।

डॉ. विद्या शर्मा

एम० ओ० पी० वैष्णव कॉलेज, चेन्नई की चर्चित हिंदी विभागाध्यक्षा का मत है कि भाषाएँ माँ सरस्वती के मन्दिर में बँटने वाले प्रसाद की तरह होती हैं। उस पावन प्रसाद को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। अपनी भाषा से ही देश का विकास होता है। इस सर्वांगीण विकास का धरातल है भारतीय भाषाएँ, जो सांस्कृतिक और वैचारिक धरातल पर भारतीय जन मानस को उद्घाटित करती हैं। अत: सभी भारतीय भाषाओं के संबंध सूत्र एक दूसरे के साथ बँध जाते हैं।

भारत बहुभाषा-भाषी देश है। पर भाषा का सहारा लेकर हम उसमें क्षेत्रीयता का रंग भरते हैं। क्षेत्रीय अस्मिता को क्षेत्रीय भाषाई अस्मिता के साथ जोड़कर ही भाषावाद प्रांतों की स्थापना की गई है। अब उनको एक दूसरे के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार किया जा रहा है। भाषाई तनाव और विद्वेष के आधार पर पहले से बने एक राष्ट्र की संकल्पना को निकट इतिहास ने खंडित किया है। भाषाओं के आधार पर बनी राष्ट्रीय अस्मिता की भावना ने न केवल पूरे यूरोप को नए सिरे से खंडित किया बल्कि पूरे राष्ट्र की संकल्पना को ही नया आयाम दे डाला। पहले तो बहुभाषा-भाषी राष्ट्र , भाषा की जातीय अस्मिता के आधार पर कई टुकड़ों में बँट गए यहाँ तक कि द्विभाषिक क्षेत्र भी क्षेत्रीयता की भावना के शिकार हुए। मुसलमानों को उर्दू के नाम पर एवं बंगला देश को बंगला भाषा के नाम अलग किया गया। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के टूटने का दर्द बड़ी बेदर्दी से दिलों में दरार डाल रहा है। मुसलमानों की भाषा उर्दू, तो पंजाबी, सिक्खों की भाषा ले। सिक्खों ने पंजाबी भाषा को धर्म और राजनीति से इस कदर जोड़ डाला की पंजाबी हिन्दुओं ने हिन्दी को अपनी मातृभाषा मानने से इंकार कर दिया।यदि आज स्वतंत्र भारत में स्वभाषा को विदेशी भाषा के समक्ष उसका गौरवपूर्ण दर्जा नहीं दिया गया तो भारत की एकता का विश्वास खंड खंड होकर टूट जाएगा। परतंत्र भारत में हम राजभाषा अंग्रेजी के विरूद्ध नारे लगाते थे आज हम स्वतंत्र भारत में अपनी राजभाषा हिंदी के विरूद्ध नारे क्यों लगा रहे हैं? क्यों भोली जनता को प्रांतीयता और भाषा-भेद की ज्वाला में झोंक रहे हैं? कुछ स्वार्थी राजनीतिज्ञों की घिनौनी चालों के कारण और कुछ देशद्रोहियों के कारण, राजभाषा को राजसिंहासन नहीं मिला, जनता को मिली भाषा भेद की मोटी मोटी प्राचीरें और अलगाववाद का हलाहल! देश-विदेशों में यह भ्रम फैलाने का प्रयास किया गया कि दक्षिण भारत में हिंदी का विरोध है, किंतु यह असत्य, अज्ञान और भ्रम इसलिए टिका न रह सका कि तमिलनाडु सहित सभी अहिन्दी प्रदेशों में हिंदी के परीक्षार्थियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। सामान्य जन को भी इस यर्थाथता का अनुभव होने लगा है कि राजभाषा, राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा हिंदी से वंचित होकर किसी प्रदेश के भी विद्यार्थी एवं अन्य युवक अपना भविष्य उज्ज्वल नहीं बना सकते। राष्ट्रभाषा हिंदी ही उन्हें मुख्य धारा (भाग्य धारा) से जोड़ती है।

राजनीति की घिनौनी चाल का शिकार हुई है हमारी भारतीय भाषाएं। राजनेताओं की कथनी और करनी में जमीन आसमान का अन्तर आ गया है। वे घातक और दोहरी चालें चल रहे हैं, सिर्फ नोटों और वोटों की भाषा समझते हैं। विडम्बना यह है कि संविधान की कोई धारा इन्हें दंडित नहीं कर सकती। भारत को एक राष्ट्र और उसकी भाषा को राष्ट्र की भाषा के रूप में विकसित करने की नीति आज परम आवश्यक है। दूसरा कारण यह कि जब हम स्वयं अपनी भाषा का सम्मान नहीं करते, तब विदेशी उसे क्यों सीखेंगे? मास्को में राजदूत रहे के० एल० गाँधी ने अपने अनुभवों के आधार पर सवाल उठाया है। विदेश के लोग बड़ी मुश्किल उठाकर हिन्दी सीखने के बाद जब भारत आते हैं, तब यहाँ के लोग हिन्दी से बढ़कर अँग्रेजी बोलना चाहते हैं। यह बात बेशक भारतीय भावनाओं के अनुकूल नहीं है।

साहित्य, राजभाषा और शिक्षा-तीनों क्षेत्रों से शिक्षित नागरिकों का विशेष संबंध है। वे ही भारतीय भाषाओं के भविष्य पर चिन्तित हैं। स्वतंत्रता-प्राप्ति ही पूरे देश के चिन्तन में नया मोड़ लायी है। हिन्दी को पूरे भारत की भाषा स्वीकार करने के साथ-साथ राज्यों की राज्य भाषा की सत्ता को मजबूत करना स्वतंत्र भारत का लक्ष्य रहा किन्तु राजनैतिक नेताओं की मानसिकता स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद यों बदली कि वे वन को भूल गए, अपने पेड़ों को ही देखने लगे। संविधान की धारा तक हिन्दी से बचने की तमिलनाडु की जिद इसका उदाहरण है। इसकी उल्टी बात भी कम नहीं। दक्षिण के गाँवों तक को हिन्दी में ही पत्र भेजने का हठ हिन्दी प्रदेश की संस्था जब करती है, तब यही जिद जाहिर होती है। यह तू-तू-मैं-मैं वाली बात ही भारतीय भाषाओं के विकास की मुख्य बाधा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विश्व की रुचि हिन्दी सीखने के लिए बढ़ी है और बढ़ सकती है यदि राजनीति अभिशाप की तरह बीच में न आए। क्योंकि नीति और नीयत में हमारे पास नीयत की कमी है।

आज जो भाषाओं को अपनी अस्मिता बचाने के लिए जूझना पड़ रहा है उससे निवारण हेतु, हमें एक साथ चुनौती स्वीकार करनी पड़ेगी और अपने आत्मविश्वास और अदम्य धैर्य का परिचय देना पड़ेगा। सभी भारतीय भाषाओं के सौजन्य में ही हम लक्ष्य की ओर आत्म कल्याण ही नहीं जन कल्याण की ओर बढ़ अखण्ड भारत के अखंड विश्वास की रक्षा करेंगे- "एकं सद् विप्रा: बहुधा वदन्ति" क्योंकि भाषा केवल कंठ का व्यायाम न होकर हृदय की प्रेरणा है। हम अपनी रगों में स्फूर्ति की चेतना और जीवन जीने की शक्ति पाते हम मंजिल की ओर निकल पड़े हैं-

किसी कवि ने लिखा है-

मत करो क्रय और विक्रय देश के सम्मान का
स्नेह से सौहार्द का व्यापार करना सीख लो।

राष्ट्रीय अधिवेशन में पारित प्रस्ताव

'विचार दृष्टि' एवं उसके वैचारिक मंच की ओर से नई दिल्ली में पिछले 16 एवं 17 नवंबर, 2002 को आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय अधिवेशन के पटल पर विद्वान लेखकों, चिंतक व विचारकों द्वारा देश के ज्वलंत मुद्दों पर व्यक्त विचारों के आधार पर 17 नवंबर के समापन सत्र में देश के कोने-कोने से पधारे प्रतिनिधियों ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए गए। पारित प्रस्ताव में एक ओर जहाँ सरकार से उसे कार्यान्वित करने की माँग की गई वहीं पत्रिका एवं मंच के सदस्यों सहित समस्त भारतीय समाज के नागरिकों से यह अपेक्षा की गई कि वे भी अपने व्यवहार व आचरण में उन्हें अमल में लाएं-

1. सामाजिक समरसता:

(1) सामाजिक जीवन में धन के महत्व को कम किया जाए और सत्ता को अनावश्यक सम्मान नहीं दिया जाए। इसके लिए हर गांव, कस्बे व मुहल्ले में छोटे-छोटे संगठन गठित कर अनावश्यक प्रदर्शन और खर्चीले तमाशों का डटकर विरोध किया जाए और योग्यता तथा गुणों के आधार पर लोगों को सम्मान दिया जाए।

(2) सरकार अंतर्शाखा एवं अंतर्जातीय विवाह को बढ़ावा देने के लिए नियुक्ति, प्रोन्नति एवं चुनाव में टिकट के बंटवारे आदि में जहाँ आवश्यक कानून बनाए वहीं रिश्वत एवं भ्रष्टाचार में लिप्त तथा समाज की धारा के विपरीत कार्य कर रहे लोगों के खिलाफ सख्त से सख्त कानूनी कार्रवाई करे।

(3) समाज के जागरूक नागरिक अपने दायित्व के निर्वहन के लिए जन जन से जुड़ें ताकि जनतंत्र को वस्तुत: प्रतिष्ठित करने का भाव मुखर हो सके और अधिकारों, आदर्शों, मूल्य मर्यादाओं और नियम प्रक्रियाओं के मजाक उड़ानेवालों को सबक सिखाया जा सके।

2. सांप्रदायिक सद्भाव:

(1) देशवासी अपने में ही नहीं, दूसरों में भी समता, मैत्री, करुणा और मुदिता के भाव जाग्रत करें।

3.वैश्वीकरण:

(1)भारत में अपनी राष्ट्रीय आवश्यकता और आकांक्षाओं के अनुरूप ही उदारीकरण की नीति अपनायी जाए।

4. आतंकवाद:

(1) सरकार आतंकवाद को मिटाने के लिए हर संभव प्रयास करे और नागरिकों में देश के लिए जज्बा पैदा करें ।

(2) भारत, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका के अतिरिक्त दक्षिण एशिया के कुछ राष्ट्र राज्यों को मिलाकर एक राजनैतिक संघ स्थापित करने का प्रस्ताव भारतीय संसद के द्वारा पारित हो ताकि इस संघ द्वारा राष्टों की संकीर्णता से उबरने का एक अंतर्राष्ट्रीय प्रयास किया जा सके।

5. बढ़ती आबादी:

(1) सरकार देश में बढ़ती आबादी को कम करने के लिए आवश्यक कानून बनाए तथा साक्षरता बढ़ाने का उपाय करे।

6. भारतीय भाषाएं:

(1)भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति अपने-अपने राज्यों में उनका स्थान, उनके आपसी संबंध और राष्ट्रहित में उनके समन्वय एवं क्रियाशीलता पर विचार कर सरकार एक भाषा नीति का निर्माण करे जिसका आधार हो कि किस प्रकार सभी भारतीय भाषाएं एक दूसरे के करीब आएं, वे एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी न बनकर एक दूसरे के सहयोगी बनें, पूरक बनें ताकि भारतीय भाषाओं के बीच राष्ट्रभाषा हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में आगे बढ़ाया जा सके।

7. वैचारिक क्रांति:

(1) वैचारिक संकट की इस घड़ी में लेखक, चिंतक व विचारक अपनी कलम उठाएं और कागज पर अपने विचारों को लिपिबद्ध कर विषम परिस्थितियों से सामना करने के लिए जन-चेतना जाग्रत करें।

संयोजक, विषय समिति

मंच के राष्ट्रीय अधिवेशन पर एक विस्तृत रपट

सत्ता के केंद्र नई दिल्ली की हलचलों के बीच वैचारिक क्रांति की अनुगूँज

प्रस्तुति : सिद्धेश्वर

उद्घाटन सत्र:

वर्तमान दौर में पक्ष-प्रतिपक्ष दोनों के लिए बने सत्ता के केंद्र, बहादुरशाह ज़फर की ऐतिहासिक धरती, अनेकों उत्थान-पतन देखे दिल्ली की हलचलों के बीच एवं विचार-शून्यता की इस बेला में वैचारिक क्रांति की एक ऐसी अनुगूँज सुनाई पड़ी जिसमें पूरे भारत का प्रतिनिधित्व कर रहे संवेदनशील एवं विचारवान प्रबुद्धजनों ने सामयिक सरोकारों को उठाने-पहचानने, तथा राजनीति सहित समाज के हर क्षेत्र में गिरते मूल्य-मर्यादाओं की पुनर्स्थापना की इच्छा व्यक्त की गई। साथ ही विकृत मानसिकता को रोककर रचनात्मक प्रवृति को प्रेरित करने तथा अन्याय, शोषण और भ्रष्टाचार के विरूद्ध वैचारिक क्रांति के माध्यम से जन-चेतना जाग्रत करने का संकल्प लिया गया। अवसर था राष्ट्रीय राजधानी नई दिल्ली स्थित **राष्ट्रीय विचार मंच** एवं राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी **विचार दृष्टि** के संयुक्त तत्वावधान में 16 एवं 17 नवंबर 2002 को आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय अधिवेशन। आजाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की सादगी, बौद्धिकता तथा सदाशयता को समर्पित इस अधिवेशन का उद्घाटन भारत सरकार के रेल मंत्री श्री नीतीश कुमार द्वारा 16 नवंबर को प्रातः 10 बजे हुआ। अपने उद्घाटन भाषण में श्री कुमार ने भारत-पाक के बीच बिगड़ते रिश्ते के मद्देनजर कहा कि गलत विभाजन का खामियाजा अवश्यंभावी है। हमारा मुकाबला पाकिस्तान से नहीं, चीन से है। राष्ट्र को विकसित करने के लिए सभी की भागीदारी आवश्यक है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार आजादी हासिल करने की अवधि में लेखकों, चितकों, विचारकों एवं संचार माध्यमों ने अपने विचारों व लेखन के माध्यम से जन-जागरण अभियान में उल्लेखनीय योगदान किया था। आजादी के बाद आज वैचारिक क्रांति के साथ-साथ कार्य संस्कृति पर बल देने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय विचार मंच एवं उसकी पत्रिका विचार दृष्टि इस दिशा में अनवरत कारगर एवं सराहनीय भूमिका निभा रही है।

उद्घाटन सत्र में रेलमंत्री नीतीश कुमार के साथ मंचासीन अतिथिवृंद

आजादी के बाद वैचारिक क्रांति के नए आयाम और हमारा दायित्व विषय को केंद्र में रखकर आयोजित इस अधिवेशन को अहिंसा यात्रा के प्रवक्ता मुनिश्री लोक प्रकाश 'लोकेश' का सान्निध्य प्राप्त था। उन्होंने इस अवसर पर अपने उद्बोधन में कहा कि देश की सुरक्षा देशवासियों के नैतिक एवं चारित्रिक बल पर भी निर्भर करती है। संप्रदाय को धर्म के रूप में देखना धार्मिक अशांति का कारण है। देश के विकास के संबंध में एक सवाल खड़ा करते हुए उन्होंने कहा कि यह विकास मानव केंद्रित होना चाहिए अन्यथा यह वरदान न होकर अभिशाप बन जाएगा। इसके मद्देनजर समाज में व्यक्तियों को मूल्य देना होगा, उसकी परिसंपत्तियों को नहीं और यह तभी संभव है जब हम विचार को महत्व देंगे क्योंकि विचार-क्रांति आचार क्रांति की पूर्व पीठिका है। विचार संस्कार के माध्यम से आचार में परिणत होता है।

उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि तथा भारत के पूर्व डिप्टी चीफ ऑफ आर्मी स्टॉफ जनरल एन० एस० मलिक ने इस बात पर चिंता प्रकट की कि जंग में कब्जा किए गए भू भाग को वापस करने तथा स्वतंत्रता के शहीदों को भूलने से न केवल भारतीय सैनिकों का मनोबल गिरता है बल्कि देश की सुरक्षा के लिए भी यह कदम ठीक नहीं है। चीन धन्यवाद का पात्र है जिसने हमें सामरिक रूप से जगा दिया। राष्ट्रनीति के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद दूषण नहीं भूषण है। हमें देश की एकता कायम रखने के लिए इसकी आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक सुरक्षा को बरकरार रखना होगा। मंच द्वारा इस दिशा में किए जा रहे कार्यों से हम प्रभावित हैं तथा इससे जुड़कर मुझे प्रसन्नता हुई है।

इसके पूर्व विशिष्ट अतिथि तथा केरल हिंदी साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर ने उपस्थित प्रतिनिधियों के समक्ष एक सवाल रखकर लोगों को सोचने के लिए बाध्य किया कि संयम और नियंत्रण के अभाव के इस दौर में स्वार्थ से सराबोर समाज क्या एक समर्थ राष्ट्र के निर्माण में समर्थ है? हिंदी को उसका वाजिब हक कब मिलेगा? इस अवसर पर प्रेसिडेंसी कॉलेज, चेन्नै की

प्राध्यापिका डॉ० पी० सी० कोकिला ने विशिष्ट अतिथि के रूप में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए इस बात पर जोर दिया कि कॉलेज एवं विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में समसामयिक समस्याओं के समावेश के साथ-साथ पाठ्यक्रम एवं संविधान में हिंदी की स्थिति पर पुनर्विचार किया जाना समय की माँग है। अपने स्वागत भाषण में स्वागताध्यक्ष तथा दिल्ली नगर निगम के पार्षद ईश्वर गोयल ने दिल्ली की ऐतिहासिकता एवं इसकी गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत का हवाला देते हुए अधिवेशन में देश के कोने-कोने से पधारे मान्य अतिथियों एवं प्रबुद्ध प्रतिनिधियों का हार्दिक अभिनन्दन किया तथा दिल्ली के धर्मनिरपेक्ष एवं उदार दिल की चर्चा की।

प्रारंभ में मंच के राष्ट्रीय महासचिव तथा विचार दृष्टि के संपादक सिद्धेश्वर ने विषय-वस्तु को प्रस्तुत करने के क्रम में मंच तथा पत्रिका के उद्देश्यों को रेखांकित किया। उन्होंने आजादी के बाद देशभक्ति की भावना में हो रही लगातार कमी पर चिंता व्यक्त करते हुए न केवल लोगों को संकुचित विचारों से उपर उठने की बात कही बल्कि वैचारिक क्रांति को नया आयाम देने के लिए प्रबुद्धजनों को अपनी तटस्थता त्याग कर अपने नकली कुहासेवाले खोल से बाहर आने का आह्वान किया तथा एक सबल राष्ट्र के निर्माण के लिए स्वस्थ समाज की स्थापना पर बल दिया।

उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष तथा भारत सरकार के पूर्व मुख्य सतर्कता आयुक्त यू०सी० अग्रवाल ने की। उन्होंने अपने उद्गार में कहा कि एक अच्छे नागरिक का कर्तव्य है कि वह अच्छाई और बुराई दोनों को देखे। पत्रकारिता को संयमपूर्ण और दायरे में रहते हुए कार्य करने की सलाह दी तथा पदलोलुपता और अर्थलोलुपता रूपी बीमारी से बचने पर जोर दिया। मंच का संचालन किया मंच की दिल्ली इकाई के अध्यक्ष डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव ने तथा आभार व्यक्त किया महासचिव डॉ० अनिलदत्त मिश्र ने।

प्रथम सत्र:

16 नवंबर को ही दोपहर 12 बजे से प्रारंभ प्रथम सत्र में **सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव के बिना राष्ट्रीय एकता खतरे में** 'विषय पर आयोजित संगोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे अ०भा०अणुव्रत न्यास के मुख्य प्रबंध न्यासी के० एल० जैन ने अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्य के लिए भी जागरूक होने की आवश्यकता पर बल दिया तथा भीख लेने की प्रवृति को त्याग कर पुरुषार्थ की संस्कृति विकसित करने की बात कही। उन्होंने देश की समस्याओं के समाधान के संदर्भ में स्वयं को समर्थ एवं विवेक नागरिक बनने की सलाह दी। श्री जैन ने धर्म की व्याख्या के क्रम में कहा कि जो बाँधता है वह धर्म कहाँ है। मंच के कार्यकलापों की मुक्त कंठ से सराहना करते हुए इससे जुड़ने में उन्होंने प्रसन्नता जाहिर की।

वैचारिक क्रांति के नये आयाम पर विषय प्रस्तुत करते हुए श्री सिद्धेश्वर

प्रारंभ में मंच के उपाध्यक्ष तथा राजनीति विज्ञान के पूर्व प्राध्यापक, प्रो० साधुशरण ने विषय प्रवर्तन के क्रम में व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र तीनों के लिए सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव की आवश्यकता जताई और कहा कि स्वार्थ से प्रभावित नीति सामाजिक समरसता के लिए न केवल घातक साबित होती है बल्कि अंततः मानव के अभ्युदय को प्रभावित करती है। इलाहाबाद के डॉ० वीरेन्द्र कुमार तिवारी ने विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि भारत की विविधता बेसूरी आवाज नहीं अपितु मनोरंजक संगीत है। जिस सत्य से दृष्टि हुई है उसी सत्य के भाव में समरसता उत्पन्न होती है और इसके अज्ञान से उसमें टूट पैदा होती है। इसलिए मन, वचन और कर्म से हमें कार्य करना होगा ताकि अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफलता मिल सके। सुपरिचित चिंतक व विचारक पी० एन० सेठ ने कहा कि सामाजिक दु:चिंता का प्रलाप ही कांफी नहीं वरन् उस पर सम्यक रूप से कार्य करने की भी आवश्यकता है। जबतक हम एक दूसरे की भावनाओं का सम्मान नहीं करते उससे सम्मान की अपेक्षा बेमानी होगी। पटना के सुधी साहित्यकार ज्योतिशंकर चौबे ने कहा कि बदलते परिवेश में अपनी नजरिया बदलने के साथ-साथ हमें रचनात्मक इतिहास लेखन की ओर मुड़ना होगा और विकृत मानसिकता से उबरने का प्रयास कर रचनात्मक प्रवृति को प्रेरित करना होगा। इस सत्र के विशिष्ट अतिथि जनरल एन० एस० मलिक ने लोगों के समक्ष एक सवाल रखते हुए कहा कि हम भारतीय हैं, उसके बाद ही कुछ अन्य हैं, क्या इस अवधारणा का चारित्रिक रूप से आत्मसातीकरण संभव है? दिल्ली की सामाजिक कार्यकर्ता प्रेमलता राही ने कहा कि दोषी जागरूक होता है सोया हुआ नहीं। क्या देश के मौजूदा हालात से निजात पाने के लिए हम प्रबुद्धजन एक नहीं हो सकते?

सुप्रसिद्ध चिंतक व लेखक जय प्रकाश कर्दम ने समाज में समरसता की जगह समता लाने पर बल दिया क्योंकि समता से ही समरसता का विकास संभव है। जाति राष्ट्र की एकता में सबसे बड़ा बाधक मानते हुए श्री कर्दम ने राष्ट्रीयता का मूल बिंदू अहम के विकास पर जोर दिया जो आत्मीयता के विकास से ही संभव है और वह सामंजस्य का विरोधी नहीं है। मौजूदा दौर की विषमता एवं विभाजनयुक्त संस्कृति में हमें सुधार लाने की आवश्यकता है। हमें समता एवं समरसता के लिए भारतीय और केवल भारतीय होकर जाति

प्रथा पर प्रहार करना होगा जिसके लिए प्रेम-विवाह एक कड़ी का काम कर सकता है। मगध विश्वविद्यालय के डॉ० कलानाथ मिश्र ने वक्ताओं के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि वैचारिक शून्यता की इस घड़ी में प्रबुद्धजनों के सक्रिय सहयोग से व्यापक फेरबदल की गुंजाइश है।

द्वितीय सत्र:

अपराह्न सत्र में **वैश्वीकरण और आतंकवाद : आज की चुनौती** विषय को प्रस्तुत करते हुए डॉ० अनिल दत्त मिश्र ने कहा कि आतंकवाद की जड़ में सामाजिक विषमता भी काम कर रही है तथा अमेरिका की दोहन नीति भी आतंकवाद को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध हो रही है। इस सत्र के मुख्य वक्ता तथा भारत सरकार के गृह मंत्रालय में वर्षों तक गृह सचिव के पद पर रहे यू०सी० अग्रवाल ने वैश्वीकरण और आतंकवाद पर एक विस्तृत आलेख प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने कहा कि आतंक के खिलाफ आक्रामकता का अभाव है। यद्यपि भारत ने आतंकवाद के सवाल पर आक्रामक कूटनीति अपनाई है किंतु आतंकवाद विरोधी एक व्यापक नीति अभी तक तैयार नहीं की जा सकी है। मणिपुर एवं उत्तर प्रदेश के पूर्व आरक्षी महानिदेशक वी० पी० कपूर ने भी आतंकवाद से लड़ने के लिए एक अलग राष्ट्रीय नीति पर जोर देते हुए राष्ट्रीय इच्छाशक्ति के विकास पर बल दिया तथा राष्ट्रीय स्तर पर चेतना और भागीदारी को आवश्यक बताया। मंच की प० बंगाल इकाई के अध्यक्ष जितेन्द्र धीर ने सरकार की उदार आर्थिक नीतियों पर न केवल चिंता जाहिर की बल्कि उसपर कठोर प्रहार करते हुए कहा कि सरकार की दोषपूर्ण नीतियों के चलते देश का प्राय: हर वर्ग अपने वर्तमान और भविष्य को लेकर आशंकित है और देश की संप्रभुता एवं स्वाभिमान दाव पर है। बेरोजगारी अपनी चरम सीमा पर हैं। आज एक साधारण आदमी बाजार में अपने आपको ठगा सा महसूस करता है। पटना स्थित सिन्हा लाईब्रेरी के मुख्य पुस्तकाध्यक्ष डॉ० रामशोभित प्र० सिंह ने कहा कि आर्थिक उदारवाद पूरे देश के लिए खतरनाक परिस्थितियाँ पैदा कर रहा है। तथाकथित सुधरती अर्थव्यवस्था में करोड़ों लोग अपने को और पेरशान हाल पाते हैं। मंच से जुड़े युवा वर्ग के प्रतिनिधि धनंजय श्रोत्रिय ने कहा कि नैतिकताविहीन वैश्वीकरण ने असमानता, बेकारी और सामाजिक तनावों के रूप में नई समस्याएं खड़ी कर दी हैं। हिसार, हरियाणा से पधारे प्रतिनिधि प्रो० कुमार रवीन्द्र ने इस सत्र की अध्यक्षता की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में कहा कि जिस देश ने पूरे विश्व को अहिंसा, प्रेम, सहिष्णुता और मैत्री का संदेश दिया है आज हम उन्हीं मूल्यों की उपेक्षा करके मृगतृष्णा की ओर दौड़ रहे हैं। वक्ताओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए मंच के कोषाध्यक्ष तथा भारत सरकार, वाणिज्य मंत्रालय के युवा अधिकारी संजय सौम्य ने कहा कि भारत में अपनी राष्ट्रीय आवश्यकता और आकांक्षाओं के अनुरूप ही उदारीकरण की नीति अपनायी जानी चाहिए।

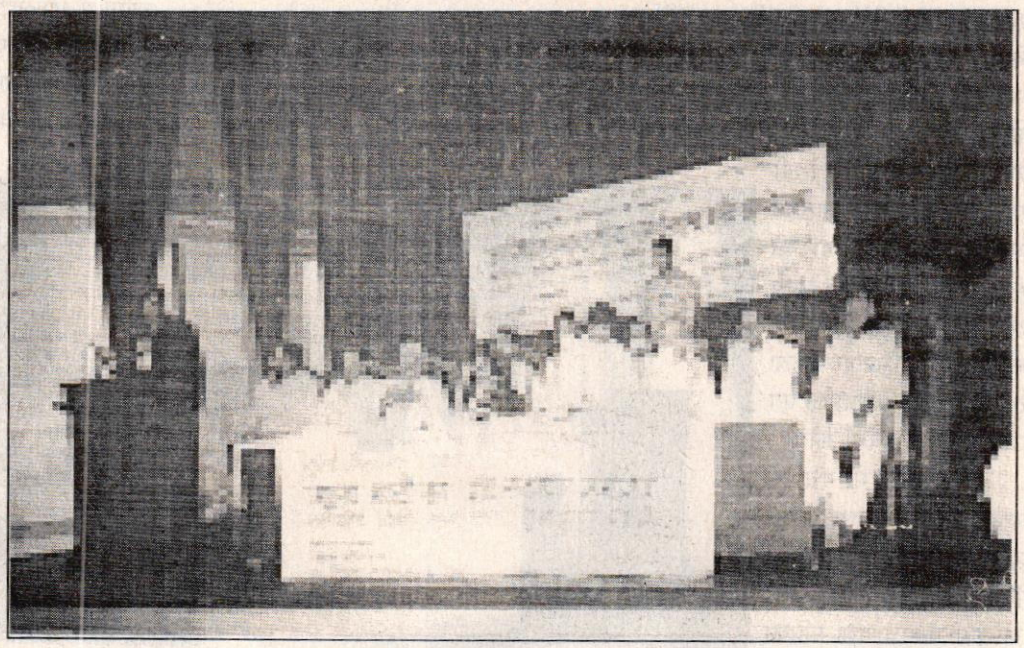

कविवर मधुर शास्त्री की अध्यक्षता में अ० भा० सर्वभाषा कवि सम्मेलन

तृतीय सत्र:

अखिल भारतीय सर्वभाषा कवि सम्मेलन

कविवर मधुर शास्त्री की अध्यक्षता में सांध्य सत्र के अखिल भारतीय सर्वभाषा कवि सम्मेलन में जिन कवियों, शायरों ने अपने काव्य-सुधा-रस का पान राजेन्द्र भवन के खचाखच भरे सभागार के सुधी श्रोताओं को कराया उनमें डॉ० वीरेन्द्र कुमार तिवारी, कुलदीप गौहर, डॉ० राजेन्द्र गौतम, राजेश 'चेतन', सतीश सागर, डॉ० प्रेमा खुल्लर, चंद्र प्रकाश माया, डॉ० सहदेव सिंह 'पाचर', डॉ० धर्मेन्द्र नाथ 'अमन', श्रीमति अल्केश त्यागी, श्रीमति जशोदा प्रकाश, डॉ० एन० सुरेश तथा धनंजय श्रोत्रिय का नाम उल्लेखनीय है। डॉ० लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने मंच का सफल संचालन कर कवि सम्मेलन को जीवंत बनाया।

'मूल्य माटी का' का लोकार्पण

कवि सम्मेलन के अंत में भारत सरकार की सूचना एवं प्रसारण मंत्री सुषमा स्वराज के कर-कमलों द्वारा मुनिश्री लोक प्रकाश 'लोकेश' के काव्य-ग्रंथ '**मूल्य माटी का**' का लोकार्पण हुआ। अपने उद्‌गार में श्रीमती स्वराज ने कहा कि मुनिश्री की कविता में एक प्रवाह है मानों कविताएं किसी सूत्र से बँधी हुई हों। काव्य-संग्रह पढ़ने पर आत्मिक अनुभूति होती है। इस अवसर पर सांसद कवि बाल कवि वैरागी ने कहा कि पूरे काव्य में करुणा की रसधारा प्रवाहित होती है। लोकार्पित काव्य-ग्रंथ के रचनाकार मुनिश्री 'लोकेश' ने अपने उद्‌गार में कहा कि अगर देश की एकता और अखण्डता बनाए रखनी है तो हमें देश की माटी का मूल्य पहचानना होगा। लोकार्पण समारोह को संबोधित करते हुए संस्कृत एवं हिंदी के सशक्त हस्ताक्षर दयानंद भार्गव ने कहा कि कवि जागते हुए को सुला देता है, लेकिन संत कवि सोते हुए को जगा देता है। मुनिश्री 'लोकेश' ऐसे ही संतकवि हैं। समारोह में पधारे मान्य अतिथियों एवं सुधीजनों का स्वागत किया डॉ० धर्मेन्द्रनाथ 'अमन' ने तथा कवि राजेश 'चेतन' ने अपने सफल मंच-संचालन से इस रोचक बनाया।

'मूल्य माटी का' का लोकार्पण करती हुई श्रीमती सुषमा स्वराज

चतुर्थ सत्र:

अ. भा. युवा एवं महिला सम्मेलन

दूसरे दिन 17 नवंबर 2002 को प्रात: 10 बजे से चेन्नै की डॉ० विद्या शर्मा की अध्यक्षता में **बढ़ती आबादी पर अंकुश में युवाओं की भूमिका** विषय पर प्रारंभ चतुर्थ सत्र की संगोष्ठी में आकाशवाणी, दिल्ली के उपनिदेशक डॉ० मेदिनी राय ने आमजन में व्याप्त दकियानुशी विचार पर कटाक्ष करते हुए कहा कि जब तक जन्म-मृत्यु पर भगवान का कॉपीराइट रहेगा तक तक आबादी पर अंकुश नहीं लग सकता। लड़कियों को पराया धन कहकर जल्दी ही शादी कर दी जाती है और जिस उम्र में लोगों को आर्थिक विकास प्रक्रिया से जोड़ने का काम होना चाहिए उन्हें शादी के बंधन में बाँध दिया जाता है। डॉ० राय ने इस बात पर चिंता प्रकट की कि लड़की के जन्म को अभिशाप समझा जाता है और जब तक इसका प्रतिकार नहीं किया जाएगा और बेटी पैदा करनेवाली माँ को बेटा पैदा करने वाली माँ के समान अधिकार नहीं मिलेगा तब तक आबादी बढ़ती रहेगी। 'बेटा ही वंश चलाता है', आबादी पर अंकुश लगाने के लिए इस अवधारणा को बंद करना होगा। डॉ० अनिल दत्त मिश्र ने हर क्षेत्र में पुरुष वर्चश्व को कम करने तथा स्त्री को ब्रेड से बेडरूम तक अधिकार देने की वकालत की। डॉ० सहदेव सिंह 'पाचर' ने आबादी कम करने के लिए महिलाओं को शिक्षा और रोजगार मुहैया कराने पर बल दिया।

मुनिश्री 'लोकेश' के काव्य-ग्रंथ पर उद्‌गार व्यक्त करती हुई श्रीमती स्वराज

चेन्नै प्रेसिडेंसी कॉलेज की प्राध्यापिका प्रो० पी०सी० कोकिला ने यह कहकर लोगों को चौंकाया कि आबादी अभिशाप ही नहीं वरदान भी हो सकती है अगर मानव संसाधन का उचित उपयोग किया जाए। उन्होंने मात्र एक लड़का या लड़की वाले परिवार को श्रेष्ठ मानने से इनकार किया। अणुव्रत न्यास से सक्रिय रूप से जुड़े संपत जी नाहटा ने इस अवसर पर कहा कि समस्या यह नहीं है कि आबादी अधिक है बल्कि समस्या यह है कि हम आबादी को काम नहीं दे पा रहे हैं। आबादी पर अंकुश कानून से नहीं आत्म संयम से लगाया जा सकता है और वंश परंपरा की मृगतृष्णा से निकलना होगा, श्री नाहटा ने जोर देकर कहा। इस अवसर पर ईश्वर गोयल तथा चिंतामणि बाल्मीकी ने युवकों और महिलाओं को सम्मान देने की बात करते हुए समाज के निचले पायदान पर खड़े आम जनों के उत्थान और फुनगी को ही नहीं जड़ को भी सींचने की पूरजोर वकालत की। अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ० विद्या शर्मा ने आबादी बढ़ने के कारणों में शिक्षा के अभाव को प्रमुख कारण मानते हुए महिलाओं को समाज में हिस्सेदारी देने पर बल दिया। प्रारंभ में डॉ० वीरेन्द्र कुमार तिवारी ने विषय प्रस्तुत किया तथा कोलकाता के प्रतिनिधि जितेन्द्र धीर ने मंच-संचालन के क्रम में परिवार नियोजन कार्यक्रम का ठीक से कार्यान्वयन न होना तथा शिक्षित बेरोजगारों की संख्या में निरंतर बढ़ोत्तरी को बढ़ती आबादी के कारण बताए। मंच के संगठन सचिव ब्रजेश कुमार ने आभार व्यक्त किया।

पंचम सत्र:

दोपहर 12 बजे से प्रारंभ पंचम सत्र में "**भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति और राष्ट्रीय नीति**" विषय पर आयोजित जीवंत परिसंवाद की अध्यक्षता भारतीय भाषाओं के मर्मज्ञ तथा राष्ट्रपति भवन में पदस्थापित पूर्व विशेष कार्य अधिकारी डॉ० परमानंद पांचाल ने की। डॉ० पांचाल ने भारतीय भाषाओं की बिडम्बनापूर्ण स्थिति की विस्तृत चर्चा करते हुए कहा कि भारतीय भाषाओं के बीच आपसी संवादहीनता के चलते ही अंग्रेजी लाभ उठा रही है। इस स्थिति से निपटने के लिए उन्होंने एक व्यापक एवं समंन्वित भाषा नीति के

निर्माण की आवश्यकता बतायी। देश को जोड़नेवाली कड़ी के रूप में हिंदी के महत्व को स्वीकारना तथा सभी भारतीय भाषाओं में पारस्परिक विचारों के आदान-प्रदान को भी महत्वपूर्ण माना। भाषाओं का ज्ञान अर्जित करना तथा अनुवाद के माध्यम से भाषाई एवं साहित्यिक आदान-प्रदान बढ़ाना भी आज की पहली जरूरत को उन्होंने महसूस किया।

केरल विश्वविद्यालय के हिंदी प्राध्यापक डॉ० एन० सुरेश ने भारत रूपी इस विशाल उद्यान के भाषारूपी छोटे-बड़े, रंग-विरंगे महक भरे फूलों की शिल्प भंगिया को देश की अति सुन्दरता का निशान माना तथा इसे वरदान समझा। उन्होंने इन सभी भाषाओं को बराबर पोषित एवं विकसित करना और सुरक्षित रखना एक सुसंस्कृत प्रजातंत्रीय देश के प्रथम कर्तव्यों में से एक बताया। इसके साथ ही भारत जैसे बहुभाषी देश में सभी भाषा-भाषियों के विचारों, आशाओं, आकांक्षाओं, आवश्यकताओं एवं संस्कारों को संजोते हुए विकास कार्यक्रमों को रूप देने और उसकी प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए हिंदी जैसी मेधावी भाषा की उन्होंने आवश्यकता एवं अनिवार्यता जताते हुए उसे विकास की प्रक्रिया में वंचित रखने के मुठ्ठी भर वरेण्य वर्ग के नौकरशाहों के कुचक्र पर चिंता प्रकट की।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि प्रो० पंकज पराशर ने भारतीय भाषाओं में साम्य की खोज करते हुए भाषायी एकता को बढ़ावा देने की बात कही तथा राष्ट्रहित में भारतीय भाषाओं के समन्वय एवं क्रियाशीलता पर विचार कर एक राष्ट्रीय नीति के निर्माण की आवश्यकता पर जोर दिया। अ०भा० अणुव्रत महासमिति के अध्यक्ष प्रो० धर्मेन्द्र नाथ 'अमन' ने भारतीय भाषाओं की महत्ता पर जोर देते हुए कहा कि मानव ज्ञान का समग्र स्रोत अलग अलग भाषाओं से बढ़ता रहा है। उन्होंने अपने उद्‌गार में भारत को एक सूत्र में बाँधने तथा देश की भावात्मक एकता के पोषण में हिंदी-उर्दू सहित सभी भारतीय भाषाओं के महत्व पर प्रकाश डाला। कोलकाता से पधारे विचार दृष्टि के ब्यूरो प्रमुख जितेन्द्र धीर ने कहा कि राष्ट्रीय एकता स्थापित करने तथा स्वतंत्रता-आंदोलन के वक्त राष्ट्रीय जागरण एवं चेतना जाग्रत करने में हिंदी के साथ साथ प्राय: सभी भारतीय भाषाओं ने अहम भूमिका अदा की है फिर भी हम अंग्रेजी का तिलक लगाए बैठे हैं। उन्होंने पुन: कहा कि भावनाओं को अभिव्यक्त करने में मातृभाषा एक मात्र सशक्त माध्यम है। इसलिए उसका संवर्द्धन जरूरी है। इस अवसर पर दिल्ली के सुपरिचित शायर मुसाफिर देहलवी ने भारतीय भाषाओं के संदर्भ में अपनी दो-तीन शायरी प्रस्तुत कर विद्वतजनों के दिलों में एक छाप छोड़ी।

समापन सत्र में मंचासीन बायें से श्री सिद्धेश्वर,डा.वाई.पी.आनंद, श्री यू.सी.अग्रवाल, श्री ईश्वर गोयल,मुनिश्री 'लोकेश' तथा डॉ अनिल दत्त मिश्र

मंच संचालन के क्रम में अधिवेशन के समन्वयक सिद्धेश्वर ने कहा कि कभी भाषा ने ही लोकतंत्र की डगर दिखाई थी क्योंकि भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही प्रचार-प्रसार कर हमारे प्रतिनिधि लोक सभा तथा विधान सभाओं में पहुँचे, किंतु उन्हीं भाषाओं की अवहेलना कर हम अंग्रेजी को प्रश्रय देते जा रहे हैं जो चिंता का विषय है। सत्र के प्रारंभ में मगध विश्वविद्यालय के हिंदी प्राध्यापक डॉ० कलानाथ मिश्र ने विषय प्रवर्तन करते हुए कहा कि भारत जैसे बहूभाषा-भाषी विशाल राष्ट्र में भावात्मक एकता और सांस्कृतिक उत्कर्ष कायम रखने के दायित्व निर्वहन करने की क्षमता और दक्षता यदि किसी भाषा में है तो वह निर्विवाद रूप से हिंदी ही है। जिस भाषा ने हमें आजादी दिलाई, जिस भाषा के बल पर हमारी सांस्कृतिक एकता अक्षुण्ण है और जिस भाषा में पूरा देश अपनी भावनाओं को स्वर देता है उसकी उपेक्षा कर अंग्रेजी को आत्मा में बिठाए रखना सरासर कुचक्र कहा जाएगा जिसका मुखालफत हर हाल में हमें करना है। मंच के सदस्य धनंजय श्रोत्रिय ने वक्ताओं एवं सुधी प्रतिनिधियों के प्रति आभार व्यक्त किया।

समापन सत्र:

पुरस्कार वितरण एवं विदाई भाषण

17 नवंबर के समापन सत्र की अध्यक्षता मंच के अध्यक्ष यू० सी० अग्रवाल ने की तथा विदाई भाषण सत्र के मुख्य अतिथि एवं राष्ट्रीय गाँधी संग्रहालय के गाँधी वादी निदेशक डॉ० वाई० पी० आनन्द ने प्रस्तुत करते हुए मंच द्वारा राष्ट्रीय अधिवेशन के माध्यम से देश के ज्वलंत मुद्दों पर हुई जीवंत चर्चा की मुक्त कंठ से सराहना की तथा देश की लोकतांत्रिक प्रणाली में अहिंसक ढंग से चलाए जा रहे जनांदोलन में अपने हर संभव सहयोग का आश्वासन दिया। इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित भारत सरकार, गृह मंत्रालय के इंटर स्टेट कॉसिल के अपर सचिव कमल टाबरी ने देश को प्रगति-पथ पर ले जाने के लिए समाज के सुलझे एवं विचारवान लोगों को अपनी तटस्थता त्याग कर आम जन-मानस को झकझोरने तथा अपने लेखन के माध्यम से जन-जागरण अभियान चलाने का आह्वान किया।

अंत में संयोजक डॉ० अनिल दत्त मिश्र ने उन सभी विद्वतजनों, संचार माध्यमों, सहकर्मियों, अ०भा०अणुव्रत महासमिति एवं न्यास के पदाधिकारियों सहित डॉ० राजेन्द्र प्रसाद न्यास एवं अकादमी के सदस्यों के प्रति तहेदिल से आभार व्यक्त किया। अणुव्रत महासमिति तथा न्यास ने जिस सहजता से प्रतिनिधियों के आवास तथा स्वागताध्यक्ष ईश्वर गोयल ने जिस उदारता से भोजन, अल्पाहार तथा चाय आदि की व्यवस्था में अपनी हार्दिकता का परिचय दिया और डॉ० राजेन्द्र प्रसाद न्यास ने आयोजन के लिए सभागार उपलब्ध कर तथा अणुव्रत

न्यास एवं महासमिति ने आवासीय व्यवस्था कर सहयोग किया उसके लिए मंच तथा विचार दृष्टि की ओर से उन सभी संगठनों एवं महानुभावों के प्रति विशेष रूप से आभार व्यक्त किया गया। अधिवेशन के अकादमिक सत्रों में देश के जाने-माने चिंतकों-विचारकों द्वारा सामाजिक समरसता, सांप्रदायिक सद्भाव, वैश्वीकरण, आतंकवाद, बढ़ती आबादी, भारतीय भाषाओं तथा वैचारिक क्रांति पर व्यक्त विचारों के आधार पर कुल सात प्रस्ताव पारित किए गए और पारित प्रस्तावों को कार्यान्वित करने की दिशा में पहल करने की सरकार से माँग की गयी। साथ ही देश के कोने-कोने से पधारे प्रतिनिधियों को प्रस्ताव में आहवान किया गया कि वे भी अपने आचरण व व्यवहार में उसे अमल में लाएं ताकि आमजन भी उनसे प्रभावित हो सकें। अध्यक्ष तथा मुख्य अतिथि ने मंच के राष्ट्रीय महासचिव के सहयोग से इस अवसर पर मंच के इतिहास में पहली बार राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत तथा देश के सुपरिचित विचारवान तीन हस्ताक्षरों-माननीय न्यायाधीश स्व० बनबारी लाल यादव (Posthumous), प्रखर समाजवादी श्री किशन पटनायक तथा उत्तर एवं दक्षिण के साहित्य सेतु केरल निवासी डॉ० एन० चंद्रशेखरन नायर को क्रमश: 'विचाररत्न', 'विचारभूषण', तथा 'विचारश्री' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। श्री अग्रवाल ने दिवंगत बनवारी लाल यादव के प्रतिनिधि तथा उनके हर कदम के राही डॉ० ओम प्रकाश यादव को एक शॉल, प्रशस्ति-पत्र एवं स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया। श्री पटनायक को नई दिल्ली में अलग से एक समारोह आयोजित कर सम्मानित किया जाएगा। केरल हिंदी साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर ने स्वयं अधिवेशन में उपस्थित होकर सम्मान ग्रहण किया और अपने उद्गार से मंच को गौरवान्वित किया। अंत में मुनिश्री लोक प्रकाश 'लोकेश' ने अपने उद्बोधन में अधिवेशन की सफलता पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए मंच तथा विचार दृष्टि के कार्यकलापों को गति प्रदान करने एवं अणुव्रत आंदोलन के साथ समन्वय स्थापित करने पर बल दिया। उन्होंने समाज के हर क्षेत्र में पनपते अनाचार, अत्याचार, भ्रष्टाचार का अहिंसात्मक प्रतिरोध करने तथा मानवीय एकता एवं सह-अस्तित्व की भावना से सत्य-निष्ठा के साथ काम करने का आह्वान किया। वैचारिक क्रांति की दिशा में मंच के द्वारा मैत्री, एकता, भाईचारा एवं नैतिक मूल्य-मर्यादाओं की पुनर्स्थापना के लिए वगैर जाति, रंग, संप्रदाय और भाषा के भेदभाव के किए जा रहे प्रयासों को अपेक्षित मार्गदर्शन एवं सहयोग का आश्वासन देकर मंच को मुनिश्री ने कृतार्थ किया जिसके लिए मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर ने मुनिश्री के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित की।

'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएं

सरदार पटेल की 127वीं जयंती

सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता और पारदर्शिता के प्रतीक थे सरदार पटेल

सरदार पटेल सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता और पारदर्शिता के प्रतीक थे। आज की राजनीति धर्म और जाति के आधार पर लोगों को विभाजित और भ्रमित करने की राजनीति है और स्वार्थ एवं सत्ता इसके लक्ष्य हैं। आज के सार्वजनिक जीवन में आचरण का मापदंड नहीं है और अपराध, चरित्रहीनता, निर्लज्जता एवं दिशाहीनता इसके मुख्य गुण हैं। जनहित, समाज कल्याण और उत्थान देशप्रेम तथा विकास सभी गौण हैं। विगत 31 अक्टूबर 2002 को पटना के रवीन्द्र भवन में राष्ट्रीय विचार मंच की बिहार इकाई द्वारा आयोजित लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल के 127 वें जयंती समारोह उद्घाटन भाषण में मगध विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ० पी० दयाल ने अपने उद्‌गार व्यक्त किए। अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त भूगोलविद डॉ० दयाल ने इस बात पर चिंता प्रकट की कि हमारा सारा समय लोगों को सब्जबाग दिखलाने, अपनी प्रशंसा और उपलब्धियों तथा दूसरों की बुराईयों को बतलाने में जाता है। हमें अपनी बुराईयों और कमजोरियों को देखने की न तो फुर्सत है और न इच्छा। इस अवसर पर पटना उच्च न्यायालय के अधिवक्ता अखिलेश पाठक ने कहा कि सार्वजनिक जीवन की गुणवत्ता में निरंतर गिरावट और उसका उत्तरोत्तर ह्रास आज सार्वाधिक चिंता का विषय है। समारोह को मंच के उपाध्यक्ष प्रो० साधुशरण पटना विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ० एस०एन०पी० सिन्हा, राजस्थान, पूर्व महालेखाकार डी०एन०प्रसाद, प्रो० अम्भानंद सिन्हा ने भी संबोधित किया। प्रारंभ में मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर ने समारोह के अवसर पर निधारित विषय "सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता, पारदर्शिता और सरदार पटेल" का प्रवर्तन करते हुए कहा कि सार्वजनिक जीवन सतत बढ़ते भ्रष्ट आचरण तथा गिरते नैतिक मापदण्डों एवं मूल्यों के मद्देनजर हमें समाज के जीवन में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह करुणा और सह अस्तित्व जैसे सद्‌गुणों एवं मूल्यों को लौटाना होगा। मंच-संचालन तथा आभार व्यक्त किया मंच के महासचिव मनोज कुमार ने।

देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की 118वीं जयंती पर संगोष्ठी : एक रपट

सत्ता और संपत्ति की लिप्सा से समाज छिन्न-भिन्न

भारतीय राजनीति में बढ़ती सत्ता एवं संपत्ति की लिप्सा ने समाज को बाँट कर रख दिया है। आँख मूँदकर पश्चिम की नकल करने तथा पाश्चात्य दृष्टि अपनाने की वजह से समाज में न केवल जड़ता आ गई है बल्कि हम भटक गए हैं। मानवीय संबंधों में जब सत्ता और संपत्ति का अभ्यूदय हो जाता है तो वह चरमराने लगता है। राजेन्द्र बाबू को स्मरण करने के साथ हम उनका अनुकरण भी करें, हम अपने भीतर उन्हें समाहित करें यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ये उद्‌गार हैं पूर्व केंद्रीय मंत्री तथा त्रिपुरा के पूर्व शिक्षाविद् राज्यपाल प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद के, जिसे विगत 3 दिसम्बर 2002 को पटना के सिन्हा लाईब्रेरी सभागार में राष्ट्रीय विचार मंच एवं राजेन्द्र साहित्य परिषद के संयुक्त तत्वावधान में देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की 118वीं जयंती के अवसर पर "भारतीय राजनीति में बढ़ती सत्ता एवं संपत्ति की लिप्सा और देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद" विषय पर आयोजित विचार संगोष्ठी में प्रस्तुत अपने व्याख्यान में व्यक्त किए। प्रो० प्रसाद ने पश्चिमी देशों की विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि उन विकसित देशों में लोकतंत्र नहीं धनतंत्र विद्यमान है जिसके अन्धाधुंध अनुकरण का ही प्रतिफल है कि भारतीय राजनीति और समाज में सत्ता और संपत्ति की लिप्सा बढ़ी है। श्रेय को खोजनेवाले नहीं बल्कि प्रेय के प्रेमी ही सत्ता एवं संपत्ति की तरफ भागते हैं। यही कारण है कि आज राजनीति में अच्छे एवं विचारवान लोगों की पुछ नहीं है। फलत: राजनीति की साख दिन व दिन गिरती जा रही है। प्रो० प्रसाद ने देश रत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व को सामने रखने के क्रम में उनकी सादगी, सदाशयता, बौद्धिकता के साथ-साथ 12 वर्षों तक राष्ट्रपति भवन में रहने के बाद भी अपनी परंपरा और संस्कृति को बरकरार रखने की क्षमता की विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि राष्ट्रीय संकट की घड़ी में चरित्र काम आता है जिसका सर्वथा आज अभाव है। बुद्धि के तीक्ष्ण राजेन्द्र बाबू मन, वचन और कर्म से एक थे।

संगोष्ठी की अध्यक्षता की राजेन्द्र साहित्य परिषद के अध्यक्ष डॉ० शिववंश पाण्डेय ने। उन्होंने भी देश के पतन की ओर जाने का कारण पश्चिम का अनुकरण बताया। डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी' ने संगोष्ठी में अपने 'विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि भारतीय राजनीति सत्ता लिप्सा से जुड़कर दृष्टिहीन हो गई है। इस मूल्यविहीन राजनीति का राजेन्द्र बाबू के जीवन में कोई स्थान नहीं था। सिन्हा लाइब्रेरी के मुख्य पुस्तकाध्यक्ष डॉ० रामशोभित प्र० सिंह ने पटना के ब्रजकिशोर स्मारक भवन स्थित पुस्तकालय, जिसे राजेन्द्र बाबू ने अपनी 19 हजार पुस्तकें भेंट की थी, की जर्जर स्थिति पर प्रकाश डालते हुए उसके जीर्णोद्धार का अनुरोध प्रो० प्रसाद से किया।

प्रारंभ में विचार दृष्टि के संपादक सिद्धेश्वर ने संगोष्ठी के विषय को प्रस्तुत करते हुए भारतीय राजनीति में बढ़ती सत्ता एवं संपत्ति की लिप्सा को भारतीय लोकतंत्र के लिए खतरे का संकेत बताया क्योंकि कुछ खास वर्गों की बढ़ती चमक दमक, विलास और शोभा की लोकप्रियता से न केवल गरीब तथा आम लोगों की मानसिकता पर सीधा असर पड़ रहा है बल्कि उसने उनकी हताशा को बढ़ाया है। जिसके परिणाम स्वरूप लोगों में ईर्ष्या की उत्तेजना बढ़ रही है। संगोष्ठी में भाग ले रहे वक्ताओं तथा श्रोताओं का स्वागत किया हृषीकेष पाठक ने तथा राजेन्द्र साहित्य के महासचिव बलभद्र कल्याण ने मंच संचालन किया। मनोज कुमार ने आभार व्यक्त किया।

प्रस्तुति : मनोज कुमार, महासचिव
राष्ट्रीय विचार मंच, बिहार

पत्र पत्रिका प्रदर्शनी एवं काव्य संगोष्ठी का आयोजन

विगत दिनों यहां कृषि मंत्रालय के कार्यालय विस्तार निदेशालय में एक समारोह का आयोजन किया गया, जिसके अन्तर्गत निदेशालय द्वारा हिंदी कविता पाठ, मौलिक लेखन, प्रश्नोत्तरी, सुन्दर लिखावट आदि विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इसके अलावा कर्मचारियों के वर्ष भर के टिप्पण प्रारूपण एवं टंकण संबंधी सर्वाधिक कार्य की प्रतियोगितायें भी आयोजित की गई।

इस अवसर पर देश के विभिन्न अंचलों से प्राप्त सैंकड़ों हिंदी-अहिंदी भाषी पत्र-पत्रिकाओं की एक तीन दिवसीय प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया। समापन के अवसर पर पुरस्कार वितरण के साथ ही एक काव्य गोष्ठी का अयोजन किया गया। जिसके मुख्य अतिथि काव्य गंगा पत्रिका के संपादक डॉ. स्वामी श्यामानन्द सरस्वती थे। गोष्ठी की अध्यक्षता निदेशालय के प्रशासनिक निदेशक श्री शशिकान्त पाण्डेय ने की। काव्य संगोष्ठी में डॉ. हरीश नवल, डॉ. अशोक लवा, डॉ. स्नेह सुधा, श्री श्रवण राही, श्री महेन्द्र शर्मा, श्री मनोहर लाल रत्नम श्रीमती जे. वी. मनीषा बजाज एवं सुश्री परम ज्योति ने अपनी सुमधुर कविताओं के माध्यम से श्रोताओं का भरपूर मनोरंजन किया। कार्यक्रम का संचालन निदेशालय के सहायक निदेशक श्री किशोर श्रीवास्तव ने किया। इस अवसर पर निदेशालय के निदेशक प्रशिक्षण श्री राजनाथ प्रसाद ने सभी का आभार व्यक्त किया।

निदेशालय में पहली बार प्रकाशित "राजभाषा विस्तारिका" नामक स्मारिका का विमोचन भी किया गया। स्मारिका में निदेशालय में पिछले वर्ष की हिंदी संबंधी गतिविधियों एवम् कर्मचारियों की रचनाएं संकलित की गई हैं। प्रस्तुति: शम्भू नाथ,आशुलिपिक
(कृषि विस्तार निदेशालय),नई दिल्ली

'आज के संदर्भ में पिता-पुत्र संबंध' पर व्याख्यान

स्वतंत्रता सेनानी स्व. राम एकबाल राम की 34 वीं पुण्यतिथि के अवसर पर विगत 5 जनवरी को पटना के दानापुर स्थित 'आराश्रय' में 'पिता-पुत्र संबंध आज के संदर्भ में' विषय पर एक व्याख्यान का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बिहार विधान परिषद के सदस्य रवीन्द्र कुमार ताँती द्वारा स्व. राम की प्रतिमा का अनावरण भी हुआ।

अवध बिहारी प्र. जिज्ञासु, संस्थापक, 'आराश्रय', दानापुर

मानवाधिकार दिवस

हक हासिल करने के लिए महिलाओं को स्वयं आगे आना होगा

मानवाधिकार दिवस के अवसर पर विगत 10 दिसंबर को देश के कई महानगरों सहित दिल्ली तथा पटना में भी राजनीतिक एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा महिलाओं के दमन और उत्पीड़न के खिलाफ विचार संगोष्ठियों के आयोजन किए गए। पटना की जीवंत पत्रिका 'जागो बहन' की ओर से 'महिलाओं का मानवाधिकार कहाँ' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में प्राय: सभी वक्ताओं ने वर्तमान पितृसतात्मक सामाजिक व्यवस्था में मानवाधिकार हनन की बढ़ती घटनाओं पर चिंता व्यक्त करते हुए महिलाओं को अपने हक हासिल करने के लिए उन्हें स्वयं आगे आकर संघर्ष करने का आह्वाहन किया। प्रारंभ में 'जागो बहन' की प्रधान संपादिका डॉ० शांति ओझा ने विषय प्रवर्तन करते हुए इस बात पर चिंता व्यक्त की कि अबतक देश के नौ राज्यों में ही मानवाधिकार आयोग का गठन हो सका है और बिहार जैसे राज्य, जहाँ महिलाएं सबसे अधिक उत्पीड़न का शिकार हो रही हैं में अभी तक मानवाधिकार आयोग का गठन नहीं हो पाया है। संगोष्ठी की अध्यक्षता प्रो० रमा श्रीवास्तव ने जहाँ संपत्ति में महिलाओं के समान अधिकार, राजनीति में समुचित प्रतिनिधित्व तथा सोच में परिवर्तन की आवश्यकता जताई वहीं मुख्यअतिथि नृपेन्द्रनाथ गुप्त ने महिलाओं के साथ निरंतर हो रहे आत्याचार को रोकने का आह्वान किया। राष्ट्रीय विचार मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर ने कहा कि अत्याचार, हिंसा चाहे महिला की हो या मर्द की उसका खामियाजा स्त्रियों को भुगतना पड़ता है। उन्होंने महिला मानवाधिकार बहाल करने के लिए समाज के प्रबुद्धजनों को आगे आने तथा इसके लिए जन-चेतना जाग्रत करने पर बल दिया। इसी प्रकार एपबा की शशि यादव, सुशीला झा तथा मोहिनी सिंह ने महिलाओं को जुझारू एवं संघर्षशील होने की बात कही। हिन्दुस्तान टाइम्स की वरिष्ठ उपसंपादक पायल कुमार ने मानवाधिकार दिवस पर नेल्सन मंडेला तथा एमनेस्टी इंटरनेशनल की भूमिका की सराहना करते हुए महिला कैदियों और रिमांड होम में रह रहीं निर्दोष महिलाओं की स्थिति पर चिंता जाहिर की। अधिवक्ता मीता मोहिनी ने विस्तार से महिला दमन व उत्पीड़न के निदान पर प्रकाश डाला। संगोष्ठी में बलभद्र कल्याण, डॉ० कैलाश प्र० सिंह, तथा सुदामा मिश्र ने भी अपने विचार व्यक्त किए और मंच का सफल संचालन एवं आभार व्यक्त किया मगही के सशक्त कवि डॉ० योगेश्वर प्र० सिंह 'योगेश' ने।

संगोष्ठी को संबोधित करती हुई डॉ. शांति ओझा

प्रस्तुति : राजकुमार प्रेमी,
पटना

देश-भर के जाने-माने सृजनधर्मी शब्द साधनों के साथ-साथ
उदीयमान प्रतिभाओं की सशक्त लेखनी का संयुक्त मंच

इन्द्रप्रस्थ भारती

हिंदी भाषा और साहित्य के उन्नयन हेतु सतत प्रयत्नशील

हिंदी अकादमी, दिल्ली

द्वारा प्रकाशित एक ऐसी संपूर्ण साहित्यिक पत्रिका जो सहज मानवीय संवेदनाओं, उदात्त जीवन-मूल्यों तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का अनूठा संगम और हर वर्ग के पाठक समुदाय की अपेक्षाओं के अनुकूल पठनीय एवं संग्रहणीय है।

लगभग एक सौ पचहत्तर पृष्ठ
मूल्य: एक प्रति 25/-रू० मात्र
(वार्षिक 100/-रू० मात्र)

सुरूचि-संपन्न स्वस्थ सकारात्मक अभिव्यक्ति की सूत्रधार 'इन्द्रप्रस्थ भारती' के स्थायी सहभागी बनें। आज ही अपना वार्षिक शुल्क सचिव, हिंदी अकादमी, दिल्ली के नाम मनीआर्डर/चैक द्वारा भिजवाकर सदस्यता प्राप्त करें।

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:-

डॉ० रामशरण गौड़
सचिव, हिंदी अकादमी, दिल्ली
समुदाय भवन, पदम नगर, किशनगंज, दिल्ली-110007
दूरभाष: 23550274, 23621889, 23536897

E-Mail Address: hindiacademy_delhi@vsnl.net

पुलिस बर्बरता की पराकाष्ठा

विचार संवाददाता, पटना

यों तो बिहार में सालों भर हत्या, बलात्कार, लूट-डकैती, सामूहिक नरसंहार की घटनाएं होती रहती हैं, किंतु पिछले साल के अंतिम सप्ताह में राजधानी पटना सहित राज्य के कई क्षेत्रों में हत्या की जो बाढ़ आयी वह यहाँ की चरमराई विधि-व्यवस्था को उजागर करती है। बेगुसराय के पुलिस उपाधीक्षक की गोलियों के शिकार दो बेगुनाहों की आग अभी ठंढी भी नहीं हो पायी थी कि पटना के आशियानानगर स्थित एक टेलीफोन बूथ पर बिल के भुगतान को लेकर हुए फर्जी मुठभेड़ में तीन निर्दोष युवकों को अपराधी बताकर दिन दहाड़े पुलिस ने अपनी गोलियों से छलनी कर दी। मृत विकास, हिमांशु एवं प्रशांत में से प्रशांत व हिमांशु को सरकारी नौकरी के लिए चयन भी कर लिया गया था और उनके चरित्र प्रमाण-पत्र का सत्यापन उसी क्षेत्र के शास्त्रीनगर थाने की पुलिस द्वारा किया जा चुका था।

पुलिस की इस बर्बरतापूर्वक कार्रवाई के खिलाफ वर्ष के आखिरी दिन दानापुर से दीदारगंज तक पटना की सड़कों पर जनाक्रोश का जो लावा फूटा, पुलिस चौकियों में आग लगाई गई आधा दर्जन से अधिक पुलिस वाहनों को जलाया गया और पटना के हजारों युवक जिस प्रकार सरकार के खिलाफ सड़क पर उतर आए, लोगों की यह नाराजगी एक बड़े आंदोलन का रूप ले सकती है। वैसे भी भ्रष्टाचार और पुलिस के अत्याचार के खिलाफ पहले भी बिहार में छात्रों व युवकों ने आंदोलन करके दिखाया है। चाहे वह 1955 का दीनानाथ पाण्डे गोलीकांड हो, मुजफ्फरपुर में 1967 और 2002 के गोलीकांड हों या 1974 के आंदोलन, इसने पूरे भारत के युवकों को आंदोलित किया था।

सच तो यह है कि कोई भी जीवंत और जीवित समाज अत्याचार और अनाचार बर्दास्त नहीं करता। पटना के फर्जी मुठभेड़ में जिस प्रकार तीन बेगुनाह युवकों की पुलिस द्वारा बर्बर हत्याएं की गई उससे समाज में कानून के शासन के प्रति अविश्वास, घृणा तथा प्रतिकार की भावना पैदा होना स्वाभाविक है। पुलिस की इस दरिंदगी पर भी जब राज्य सरकार तथा पुलिस के आला अधिकारियों को कोई अफसोस नजर नहीं आता तो इसे 'रक्षक ही भक्षक' को चरितार्थ करना कहा जाएगा। ऐसे में पुलिस किस बल-बूते जनता से सहयोग की अपेक्षा करती है। सहयोग का माहौल बनाने का दायित्व तो शासन का है। ऐसे आपराधिक कृत्य करनेवाली पुलिस को कड़ी से कड़ी सजा मिलनी चाहिए।

- दीपक कुमार, पटना से

पुलिस बर्बरता के खिलाफ बिहार बंद

पुलिस द्वारा तीन छात्रों की निर्मम हत्या के विरोध में संपूर्ण विपक्षी दलों और छात्र संगठनों के आह्वान पर पिछले 3 जनवरी को आयोजित बिहार बंद के दौरान पुलिस फायरिंग, हिंसा और आगजनी की घटनाओं ने 1974 के जे.पी. आंदोलन की याद ताजा कर दी। हालांकि इस बिहार बंद को भी पूर्व की भाँति राजद अध्यक्ष लालू प्रसाद यादव ने असफल करार दिया किंतु राजधानी पटना तथा बिहार के अन्य क्षेत्रों में यहां की आम जनता की जिस प्रकार भागादारी देखी गयी पटना का डाक बंगला चौराहा रणक्षेत्र में तब्दील रहा और पटना की सड़कों पर 'खून का बदला खून' का नारा लगा उससे यह तय है कि यदि सरकार द्वारा पटना तथा बिहार के अन्य जिलों में चल रहे बवाल तथा निर्दोष जनता पर किए जा रहे पुलिस व अपराधियों के अत्याचार पर काबू पाने का सार्थक प्रयास नहीं किया गया तो यह आग अभी जलती रहेगी और कोई आश्चर्य नहीं कि यदि सभी विपक्षी दलों ने एकजूट होकर पुलिस जूर्म और भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन को आगे बढ़ाया तो 1974 के जे.पी. आंदोलन का रूप यह ले सकता है। इसमें कतई संदेह नहीं कि बिहार की जनता सरकार की कुव्यवस्था से उब चुकी है और पुलिस की इस ताजा बर्बरता ने आग में घी का काम किया है। यह जो चिंगारी फूटी है, संभव है बिगड़ते हालात में यह दावानल का स्वरूप अख्तियार कर ले। 3 जनवरी का इस बिहार बंद में स्वत: स्फूर्त यह जनाक्रोश वर्षों से ध्वस्त हुई राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के राख से सुलगा है। राख का यह ढेर वर्षों से जमा हुआ था और पुलिस के प्रति उभरा यह ताजा गुस्सा इसी राख के ढेर से सुलगा है।

बिहार में भ्रष्टाचार, विकास शून्यता, बेरोजगारी, हिंसा, अपहरण और रंगदारी जैसी समस्याओं से यहाँ की जनता त्रस्त हैं, व्यवस्था के प्रति चौतरफा आक्रोश एवं असंतोष पराकाष्ठा पर है। किंतु चिंता का विषय यह है कि एक ओर जहाँ संपूर्ण विपक्षी दलों में एकता का अभाव दिखता है दूसरी ओर प्राय: प्रत्येक विपक्ष दल के भीतर भी दरारें स्पष्ट दीख रही हैं। ऐसी स्थिति में यह कैसे उम्मीद की जाए कि यह आंदोलन जे०पी० आंदोलन का रूप ले सकेगा।

पटना में बिहार बंद के दौरान जलाये जा रहे पुलिस वाहन

- दीपक कुमार, पटना से

DENSA

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

Fact. Add. :Plot No. 10, Dewan&Sons Udyog Nagar,
Taluka Palghar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Phone No.: (952525) 55285/54471, Fax: 55286

&

DANBAXY

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

(SOFT GELATIN)

Fact. Add: Plot No. K-38, MIDCTarapur,

Boisar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Office Address:

1, Anurag Mansion, Ashokvan,
Shiv Vallabh Raod, Dahisar (E),
Mumbai-400068
Phone No.: 8974777, Fax: 8972458

MR. DEVENDRA KUMAR SINGH, C.M.D

'नई धारा' द्वारा साहित्यकारों का सम्मान

सूर्यपुरा हाउस! शैली सम्राट राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह के इस निवास में कभी देशभर के साहित्यकारों का समागम हुआ करता था। एक बार फिर से यह प्रांगण गुलजार हो उठा, जब प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका 'नई धारा' के सतत प्रकाशन के 53 वर्ष पूरे होने पर पिछले दिनों पटना स्थित 'सूर्यपुरा हाउस' में एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें देश भर से आए उसके पुराने-नये लेखकों का सारस्वत सम्मान किया गया। 'साहित्यकार सम्मान समारोह' की अध्यक्षता दिल्ली से आए प्रख्यात उपन्यासकार डॉ० भगवतीशरण मिश्र ने की, जबकि संचालन 'नई धारा' के सौजन्य संपादक डॉ० शिवनारायण कर रहे थे। समारोह का आरंभ चर्चित गीतकार विशुद्धानन्द द्वारा वेद की ऋचाओं के मनभावन गायन से हुआ।

समारोह का उद्घाटन दैनिक 'हिन्दुस्तान' के स्थानीय संपादक नवीन जोशी ने किया। प्रख्यात समालोचक डॉ० कुमार विमल तथा बिहार के पूर्व मंत्री भोला प्रसाद सिंह इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि थे । 'नई धारा' के प्रधान संपादक उदयराज सिंह ने दीप प्रज्ज्वलित कर समारोह का समारंभ किया।

समारोह को संबोधित करते हुए उदयराज सिंह ने कहा कि "प्रख्यात साहित्यकार स्व० रामवृक्ष बेनीपुरी के संपादन में 'नई धारा' के प्रवेशांक का लोकार्पण । मई 1950 ई० को हुआ था। तब से लेकर आज तक यह पत्रिका अपने समय की चेतना एवं नई-पुरानी साहित्यिक प्रवृतियों को आत्मसात करती हुई निरन्तर प्रकाशित की जा रही है। पिछले दस वर्षों से इसका संपादन डॉ० शिवनारायण कर रहे हैं। 'नई धारा' आगे भी निकलती रहे, इसके लिए आप सभी का सहयोग आवश्यक है।

आरंभ में डॉ० सतीशराज पुष्करणा ने अतिथियों का स्वागत किया। समारोह में जिन रचनाकारों का सारस्वत सम्मान किया गया, उनमें शामिल थे के०के० विद्यार्थी 'नूर', गोवर्द्धन प्रसाद 'सदय' , डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव, रघुनाथ प्रसाद 'विकल', डॉ० आनन्द नारायण शर्मा , डॉ० कुमार विमल , डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी', सियाराम शरण प्रसाद , डॉ० रामनिरंजन 'परिमलेन्दु' , डॉ० स्वर्णकिरण , डॉ० रामप्यारे तिवारी , डॉ० बालेन्दु शेखर तिवारी , डॉ० भगवतीशरण मिश्र, जीवकांत , बलभद्र कल्याण , डॉ० कैलाश तिवारी , डॉ० विष्णु किशोर झा 'बेचन', प्रो कैलाश प्रसाद सिंह 'स्वच्छन्द', डॉ० बैद्यनाथ शर्मा, डॉ० भूपेन्द्र कलसी , सिद्धेश्वर, श्री निविड़ शिवपुत्र , राधेश्याम तिवारी, डॉ० तारकेश्वर नाथ सिन्हा, श्री अमरनाथ 'अमर' , डॉ० कलानाथ मिश्र, सुभाष शर्मा , उमेश प्रसाद वर्मा , डॉ० शिवनारायण, डॉ० तेजनारायण कुशवाहा डॉ० राधाकृष्ण सिंह, परेश सिन्हा, श्रीमती वासुदेवनंदन प्रसाद । इसके अलावे राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह स्मारक न्यास द्वारा देय 'राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह स्मृति पुरस्कार' सन् 2002 से 'कबीर' उपन्यास के लिए उसकी लेखिका डॉ० मिथिलेश कुमारी मिश्र तथा कबीर भजन के लिए श्रीमती रामरती दासिन को क्रमशः दो हजार एक रुपए तथा पाँच सौ एक रुपए सहित सम्मान पत्र से विभूषित किया गया।

सम्मान समर्पण के बाद समारोह को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि श्री नवीन जोशी ने कहा कि "किसी भी पत्रिका के लिए लगातार 53 वर्षों तक बिना किसी विशेष फंड के प्रकाशित होते रहना गर्व की बात होती है। यह इस पत्रिका के लिए बहुत बड़ी साधना है। 'नई धारा' ने आधी से अधिक सदी की जो यात्रा की है, वह आगे भी अनवरत जारी रहे, ऐसी मेरी शुभकामना है।" मगध विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति डॉ० रामदेव प्रसाद ने भी समारोह को संबोधित किया।

प्रस्तुति: डॉ० शिवनारायण,
1/सी, अशोक नगर,
पटना 800020
दूरभाष 2360437

अ०भा०बाल, युवा एवं वरिष्ठ प्रतिभा सम्मान-2002 का आयोजन

विगत 19 अक्टूबर, 2002 को नई दिल्ली में शब्दकर्मियों/कलाकारों के परिवार व मासिक बुलेटिन 'हम सब साथ साथ' एवं महिलाओं के कल्याण में संलग्न संस्था 'सहेली महिला कल्याण समिति' के संयुक्त तत्वावधान में एक अखिल भारतीय बाल, युवा व वरिष्ठ प्रतिभा सम्मान-2002 का आयोजन किया गया। समारोह में जहाँ वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० बुधमल शामसुखा एवं श्री कृष्ण स्वरूप पाण्डेय को 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' सम्मान प्रदान किया गया वहीं पुणे की बाल प्रतिभा कु० फाल्गुनी अडबे को बाल प्रतिभा पुरस्कार प्रदान किया गया।

इस अवसर पर देश भर से चयनित युवा रचनाकारों की लघुकथा/ कविता पाठ प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया, जिसमें लघुकथा की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुति के लिये उज्जैन की कु० प्रज्ञा पाठक एवं श्रेष्ठ प्रस्तुति के लिये गुड़गांव की कु० कनु भारतीय को पुरस्कृत किया गया। इसी प्रकार कविता की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुति के लिये फरीदाबाद के चरनजीत, श्रेष्ठ प्रस्तुति के लिये होशंगाबाद की कु० चंद्रिका कसौतिया, अच्छी प्रस्तुति के लिये शाहजहाँपुर के शशांक मिश्र भारती एवं नई दिल्ली के इरफान अहमद राही और सराहनीय प्रस्तुति के लिये भरतपुर के सत्येन्द्र भट्ट, अजमेर की प्रेरणा साखान सहित दिल्ली के राकेश कुमार, रसीद सैदपुरी, कु० परम ज्योति एवं श्रीमती ममतेश राणा को पुरस्कृत कर सम्मानित किया गया।

पुरस्कारों का वितरण प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं साहित्यकार कुलानंद भारतीय ने किया एवं अध्यक्षता गांधी प्रतिष्ठान के बी० एल० शर्मा ने की।

प्रस्तुति: किशोर श्रीवास्तव
नई दिल्ली

कथाकार कमलेश्वर को 'शलाका' सम्मान

वर्ष 2002-2003 के हिंदी अकादमी का प्रतिष्ठित 'शलाका' सम्मान सुप्रसिद्ध कथाकार कमलेश्वर को उनकी समग्र कृतियों के लिए पिछले वर्ष के शलाका सम्मान विजेता डॉ० रामदरश मिश्र द्वारा प्रदान किया गया। सम्मान के तहत उन्हें एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपये की राशि, प्रशस्ति पत्र तथा एक शॉल से सम्मानित किया गया। प्रख्यात पत्रकार राजेन्द्र माथुर को मरणोपरांत उनकी रचना 'भारत एक अंतहीन यात्रा' के लिए 'साहित्यिक कृति सम्मान' प्रदान किया गया।

फिक्की सभागार में हिंदी अकादमी के उपाध्यक्ष जनार्दन द्विवेदी की अध्यक्षता में आयोजित सम्मान समारोह के अवसर पर वर्ष 2002-2003 के साहित्यकार सम्मान से देवेन्द्र इस्सर, डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश', डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ० नरेन्द्र मोहन, डॉ० विजय मोहन सिंह, बालस्वरूप राही, डॉ० राजबुद्धि राजा, डॉ० महीप सिंह, प्रो० नित्यानंद तिवारी, डॉ० शंभूनाथ सिंह तथा दीपक चौरसिया को नवाजा गया।

इस अवसर पर अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कमलेश्वर ने कहा कि अब हिंदी अंग्रेजी पर हाबी है और अंग्रेजी वाले इससे परेशान हैं। समारोह की मुख्य अतिथि दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने घोषणा की कि शीघ्र ही राष्ट्रीय राजधानी में एक ऐसा भवन तैयार किया जाएगा जिसमें सभी अकादमियों के कार्यालयों के साथ-साथ पुस्तकालय एवं रंगमंचीय गतिविधियों के लिए सभागार की भी व्यवस्था होगी।

प्रस्तुति : सुनीता रंजन, दिल्ली

न्यायमूर्ति स्व० बी० एल० यादव 'विचाररत्न' से सम्मानित श्री पटनायक को 'विचारभूषण तथा डॉ० नायर को 'विचारश्री'

'विचार दृष्टि' एवं उसके वैचारिक मंच द्वारा विगत 16 एवं 17 नवंबर 2002 को नई दिल्ली के दीनदयाल उपाध्याय मार्ग स्थित राजेन्द्र भवन में आयोजित राष्ट्रीय अधिवेशन

के पटल पर पहली बार देश के तीन विचारवान एवं राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत हस्ताक्षरों को 'विचाररत्न', 'विचारभूषण' तथा 'विचारश्री' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। राष्ट्रीय विचार मंच के अध्यक्ष तथा भारत सरकार के पूर्व मुख्य सतर्कता आयुक्त यू०सी०अग्रवाल की अध्यक्षता एवं मंच की बिहार इकाई के अध्यक्ष जियालाल आर्य, भा०प्र०से० के संयोजकत्व में गठित निर्णायक मंडल द्वारा उपर्युक्त पुरस्कार के लिए चयन किए गए निम्नलिखित तीन हस्ताक्षरों की घोषणा सर्वप्रथम मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर ने की --

(1) न्यायमूर्ति स्व० बनवारी लाल यादव - 'विचाररत्न' (मरणोपरांत)

(2) श्री किशन पटनायक - 'विचारभूषण'

(3) डॉ० एन० चंद्रशेखरन नायर - 'विचारश्री'

पटना उच्चन्यायालय के पूर्व कार्यकारी न्यायाधीश, राष्ट्रीय पिछड़ावर्ग आयोग के अध्यक्ष तथा राष्ट्रीय विचार मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति स्व० बी० एल० यादव को मरणोपरांत 'विचाररत्न' पुरस्कार का यह सम्मान यू०सी० अग्रवाल ने अपने कर-कमलों द्वारा स्व० यादव के हर कदम के राही डॉ० ओम प्रकाश यादव को एक प्रतीक चिन्ह, शॉल तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट कर प्रदान किया गया। ठीक इसी प्रकार उत्तर एवं दक्षिण भारत के साहित्य सेतु डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर को भी एक प्रतीक चिन्ह, शॉल तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट कर 'विचारभूषण' से सम्मानित किया गया। प्रखर समाजवादी नेता पूर्व सांसद तथा सामयिक वार्ता के प्रधान संपादक श्री किशन पटनायक को

समय पर सूचना नहीं मिल पाने के कारण विचार दृष्टि को उन्हें 'विचारश्री' से सम्मानित करने का गौरव नहीं प्राप्त हो सका। आनेवाले दिनों में नई दिल्ली में एक सम्मान समारोह आयोजित कर श्री पटनायक को 'विचारश्री पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा।

प्रस्तुति : संजय सौम्य, दिल्ली

और गरीब हुए बिहार के किसान

❑ नीलम

बिहार की अर्थव्यवस्था में यदि किसी क्षेत्र का सबसे बड़ा योगदान है तो वह है कृषि। राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में जीवनयापन का सबसे प्रमुख जरिया कृषि ही है। आज भी राज्य की 65 प्रतिशत जनता कृषि पर ही आश्रित है तथा बिहार को प्राप्त होने वाली कुल आय का 37 प्रतिशत कृषि से ही प्राप्त होता है। हालांकि भारतीय कृषि तथा उससे जुड़े किसानों के बीच एक अजीब विरोधाभास की स्थिति दिखती है।

एक ओर जहां राज्य को सबसे ज्यादा आय कृषि से ही प्राप्त होती है, वहीं दूसरी ओर इससे जुड़े किसान ही सबसे ज्यादा गरीब हैं। किसानों की यह गरीबी दिन ब दिन बढ़ती ही जा रही है। पिछले कुछ वर्षों में काश्तकारों का एक बड़ा भाग कृषक मजदूर में बदल गया है। यह राज्य में कृषि की गिरती स्थिति का ही परिचायक है। वर्ष 1961 में जहां 36.62 प्रतिशत काश्तकार थे, वर्ष 1971 में इसमें बढ़ोतरी हुई तथा यह 39.07 प्रतिशत हो गया। 1991 में यह आकड़ा 37.89 था जबकि वर्ष 2001 में घटकर 23.20 पहुंच गया है अर्थात् पिछले तीस वर्ष में बिहार के लगभग 15 प्रतिशत किसान भूमिहीन हो गये। कृषक मजदूर जो वर्ष 1961 में 17.22 प्रतिशत थे, वर्ष 2001 में बढ़कर 31.34 प्रतिशत पहुंच गया है अर्थात राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे अधिक छोटे, सीमांत और उपसीमांत किसान ही हैं।

वर्तमान में राज्य में बड़े किसान सिर्फ 1.01 प्रतिशत हैं जिनके पास कुल कृषि योग्य भूमि 11.59 प्रतिशत है। राज्य में मंझोले किसान 8.54 प्रतिशत हैं। सीमांत एवं उपसीमांत किसान क्रमश: 24.73 और 52.03 प्रतिशत हैं। सीमांत किसानों के पास कुल कृषि योग्य भूमि का 20.74 प्रतिशत है जबकि उपसीमांत किसान 8.28 प्रतिशत भू-भाग पर खेती कर रहे हैं। स्थिति स्पष्ट है कि पिछले तीन-चार वर्षों में राज्य के लगभग 10 प्रतिशत से ज्यादा किसान भूमिहीन या सीमांत किसान में परिवर्तित हो चुके हैं।

कृषि क्षेत्र से लोगों की घटती संख्या का एकमात्र कारण कृषि के अलाभकर स्थिति का होना तथा राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर का अभाव होना है। रोजगार के मामले में बिहार के ग्रामीण क्षेत्र पूरी तरह कंगाल हो चुके हैं। स्थिति यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में हजार में तैंतीस लोगों को ही नियमित रूप से रोजगार प्राप्त है। कुल स्थिति यह है कि हजार में 465 ग्रामीण अनियमित रूप से ही नियोजित हैं जो या तो सब्जी बेचने आदि का कार्य कर रहे हैं अथवा डेयरी, बेकरी फार्म आदि में कार्य कर रहे हैं। उत्पादक कार्यों में सिर्फ बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों के दो प्रतिशत लोग ही कार्यरत हैं।

कृषि में भी अलाभकर स्थिति के कारण छोटे काश्तकार जमीन के टुकड़ों को बेचकर ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन करते जा रहे हैं अथवा अपने घर की औरतों पर खेती की जिम्मेदारी छोड़, दूसरे काम की तलाश में शहरी क्षेत्रों में पलायन कर जा रहे हैं।

आई.एच.डी. की रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 1980-82 में लंबे समय के लिए पलायन करनेवाले लोग खेतिहर जहां 10 प्रतिशत थे, वहीं वर्ष 2002 में बढ़कर 24 प्रतिशत हो गया है। उसी प्रकार वर्ष 1981-82 में मौसमी पलायन अर्थात कुछ समय के लिए पलायन करने वाले खेतिहर जहां 80 प्रतिशत थे। वर्ष 2002 के बाद मौसमी पलायन करने वाले आधे से अधिक खेती से जुड़े लोग हमेशा के लिए अथवा लंबे समय के लिए पलायन कर गये थे। इनमें से सिर्फ दो प्रतिशत लोग ही किसी प्रकार के उत्पादक निर्माण कार्य में लगे हुए हैं। बाकी लोग छोटे-बड़े शहरों में रिक्शा चलाने, गार्ड आदि का कार्य कर रहे हैं।

स्थिति कितनी भयावह हो चुकी है, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि कृषि के मामले में सबसे विकसित रोहतास जिले से पलायन करने वाले लोगों की संख्या राज्य के सबसे गरीब इलाके पूर्णिया और मधुबनी जिले से भी अधिक हैं। इस पलायन में ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि किसी खास जाति या वर्ग के लोग पलायन कर रहे हैं।

हिंदू, मुस्लिम, उच्च एवं निम्न जाति सभी वर्ग के लोग ही पलायन कर रहे हैं, लेकिन इस मामले में जिस वर्ग में सबसे ज्यादा बढ़ोतरी हुई है, वह है भूपतियों एवं भूमिहीन खेतिहर मजदूरों की। पिछले तीन वर्षों में सबसे ज्यादा खेतिहर मजदूर एवं भूपति राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों से पलायित हुए हैं। इसमें भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के पलायन का कारण अधिक कमाने की प्रवृति होती है तो भूपतियों के सामने फसल बोने और काटने के संकट के कारण कृषि की अलाभकर स्थिति होती है।

हिन्दुस्तान से साभार

With best compliments from :-

LONDON CLINIC

KANKAR BAG
PATNA-800020

DR. R. N. SINHA

MBBS(Pat), DFP, DGP (ENG), F.I.P.S

Psychiatrist & Sexologist
For mental & Sexual problems

जीवन और यौवन के शाश्वत कवि थे 'सुमन'

जीवन और यौवन के शाश्वत कवि पद्मभूषण डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' का

विगत 27 नवंबर को दिल का दौरा पड़ने से निधन हो गया। 5 अगस्त 1915 को उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में जनमें डॉ० 'सुमन' ने मध्य प्रदेश को अपना कर्मभूमि बनाया था। इनके व्यक्तित्व में जो सहजता, सरलता, तरलता और मृदुता थी उसकी छाप उनकी गद्य एवं पद्य रचनाओं पर गहरे रूप से पड़ी। मार्क्स से प्रभावित होकर भी सुमन जी ने स्वयं को भारतीय परंपरा, गीत, रीति से जोड़े रखा। डॉ० 'सुमन' के गीतों से गीत परिभाषित हुआ है। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी जिनमें में 'प्रलय सृजन' 'विंध्य हिमालय', महादेवी की काव्य साधना आदि प्रमुख हैं। वे 1968 से 1978 तक उज्जैन में विक्रम विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। भारत सरकार ने 1974 में उन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया। इसी साल उन्हें 'सोवियत भूमि पुरस्कार' भी दिया गया। इसके अलावा उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार और 'भारत भारती सम्मान' से भी सम्मानित किया गया।

सुमन जी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे शिक्षक, कवि, शिक्षविद्, मंचजयी, प्रशासक, वक्तृत्व कला में निपुण, दीवानगी की हद तक मस्त और रंक से राजा तक के परिचित और अपने थे। उनकी स्मरण-शक्ति के सब कायल थे। कबीर, तुलसी, मीरा, कालिदास, भतृहरि, सूर, प्रसाद, निराला, पंत बच्चन, तथा गालिब सभी की पंक्तियां उनकी जिह्वा पर मौजूद रहती थी । अटलजी का उन्होंने पढ़ाया था। वैसे उनके अनेकों शिष्य भारत एवं राज्य सरकार के उच्च पदों पर पदस्थापित हुए हैं।

सुमनजी मात्र 'पद्मश्री' और 'पद्मभूषण' ही नहीं बल्कि जनभूषण, कृति और संस्कृति के भी भूषण थे। विचारधारा में प्रगतिशील और मानवीयता उनकी कृतिभूमि री है। उनमें प्रगतिवादियों की गहरी सामाजिक प्रतिबद्धता, अन्याय के प्रति मुखर प्रतिरोध और ओजस्विता भी थी सुमन जी के निधन से हिंदी साहित्य में रिक्तता का भाव सदैव बना रहेगा। इस कालजयी रचनाकार को विचार परिवार की हार्दिक श्रद्धांजलि।

-संपादक

छोड़ता हूँ आज उपवन

❑ डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन'

सींच सौरभमय किया उर
कर सका सेवा न जी भर
तोड़कर कोई चला ले
सूजियों से बेध मृदु तन
छोड़ता हूँ आज उपवन
छूटती है आज डाली
दो यही वरदान माली
पूर्ण सौरभमय सकूँकर
विश्व का प्रत्येक कण-कण
छोड़ता हूँ आज उपवन
देख मुझको अनमना सा
धूल में लिपट्ा सना सा
हाय, कह देना यही था
एक दिन मेरा सुमन-धन
छोड़ता हूँ आज उपवन।

('जीवन के गान' से)

चित्रकला के शिखर पुरुष
प्रो० सान्याल अब नहीं रहे

भारतीय चित्रकला के शिखर पुरुष प्रो० भवेश चन्द्र सान्याल का पिछले दिनों देहावसान हो गया। 102 वर्षीय पद्मभषण से संमानित प्रो० सान्याल अपने जीवन के अंतिम वर्षों तक कला की दुनियां में सक्रिया थे। वे ल ल ि त

कला अकादमी के उपाध्याक्ष एवं सचिव भी रह चूके थे। समकालीन कला क्षेत्र के सशक्त हस्ताक्षर और भारतीय कला के पितामह प्रो० सान्याल का जन्म 22 अप्रैल 1902 में असम के डिब्रूगढ़ में हुआ था। उनकी कुछ चर्चित कला कृतियों में 'द फ्लाइंग स्केयर क्रो', 'डेस्पेयर' और 'वे टू पीस' उल्लेखनीय हैं। कला के प्रति समर्पण और योगदान के लिए उन्हें अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार मिले। प्रो० सान्याल को विचार परिवार की हार्दिक श्रद्धांजलि।

साभार- स्वीकार

पुस्तकें:

1. **'डालर बहू' एवं 'महाश्वेता'**
उपन्यासकार : सुधा मूर्ति, कन्नड़ से हिंदी अनुवाद: डॉ० प्रधान गुरूदत्त,जय प्रकाश बेंगेरी
प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2
संपादन : आचार्य निशांतकेतु
सौजन्य : सुलभ साहित्य अकादमी, सुलभ इंटरनेशनल, महावीर इन्क्लेव, नई दिल्ली

2. **आत्योदय से सर्वोदय**
लेखक: कृष्ण राज मेहता,प्रकाशक: मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स प्रा०लि०, बंगली रोड, जवाहरनगर, दिल्ली-7,संपादक:आर्चाय निशांतकेतु,सौजन्य:सुलभ साहित्य अकादमी, सुलभ ग्राम, नई दिल्ली

3. **नवाय जलीस**
लेखक: पं०ब्रह्मानंद जलीस, प्रकाशक: एन० के०सूद दिलफरोस, 18बी०,सूर्या अपार्टमेंट, सेक्टर-13,रोहिणी, दिल्ली-85,सौजन्य: सीमाव सुल्तानपुरी,नई दिल्ली

4. **अग्नि की उड़ान, तेजस्वी मन**
लेखक : ए०पी०जे० अब्दुल कलाम,प्रकाशक: प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-2,सौजन्य:डॉ० विश्वेन्द्र कुमार सिन्हा,पी०एम०सी०एच०,पटना

5. **अभिनव हिंदी गीता**
लेखक:वेदानन्द ठाकुर,प्रकाशक: वेद प्रकाशन, द्वारा विद्या ठाकुर,5,कार्डिफ रोड,मारखम, ओन्टारियो,कनाडा,एल-3,आर-7,जी-2,सौजन्य:जे० पी० मिश्र, मीनालय, केसरीनगर, पटना-24

6. **बाँसुरी बजते रहल**
रचनाकार:अरुण कुमार सिन्हा, प्रकाशक: प्रेमलता साहित्य सेवी केंद्र, मदनपुर,कजरा, लखीसराय-84309 (बिहार)

7. **सत्य की तलाश**
रचनाकार:रजनी कांत सिन्हा,प्रकाशक: ज्ञान-विकास-केंद्र,हिमाचल परिसर,पार्क रोड, कदमकुआँ, पटना-3

8. **बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ**
संपादक :डॉ० गनौरी महतो,डॉ० योगेन्द्र पाठक
प्रकाशक:बाबू गुप्तनाथ सिंह, स्मृति ग्रंथ समिति, भभूआ-11 (कैमूर) बिहार-821101

1. **अणुव्रत** (अक्टूबर 2002)
प्रकाशक : अणुव्रत महासमिति, अणुव्रत भवन, 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-2
संपादक : विनोद कुमार मिश्र सौजन्य : प्रो० धर्मेन्द्र नाथ 'अमन', अणुव्रत महासमिति

2. **शब्द** (अक्टूबर 2002)
प्रकाशक : शब्दपीठ, सत्या यादव, सी-1104, इंदिरानगर, लखनऊ-16,संपादक:आरसी यादव

3. **सभ्यता संस्कृति**(सितंबर 2002)
संपादक व प्रकाशक: डॉ० ऋचा सिंह, बी-4/245,सफदरजंग इन्क्लेव, नई दिल्ली-29

4. **विवरण पत्रिका** (नवंबर, दिसंबर-2002)
संपादक : धोण्डीराव जाधव, प्रकाशक:हिंदी प्रचार सभा हैदराबाद,नामपल्ली, हैदराबाद

5. **भोजपुरी विश्व** (अंक:4-2002)
संपादक : डॉ० लाल बाबू तिवारी
प्रकाशक : विश्व भोजपुरी सम्मेलन (बिहार) मलयानिल, बुद्धा कॉलोनी, पटना

6. **आधी जमीन** (अक्टूबर-दिसंबर-2002)
संपादक : सरोज चौबे प्रकाशक : समकालीन प्रकाशन प्रा० लि०,एस०पी० वर्मा रोड, पटना-1

7 .**रेल राजभाषा**(जूलाई-सितंबर 2002)
संपादक : प्रमोद कुमार यादव
प्रकाशक : राजभाषा निदेशालय, रेल मंत्रालय (रेलवे बोर्ड), भारत सरकार, कमरा नं०-544, रेल भवन, नई दिल्ली-1

8. **भारतीय रेल** (अक्टूबर 2002)
संपादक : प्रमोद कुमार यादव
प्रकाशक : रेल मंत्रालय, भारत सरकार, कमरा नं०-307, रेल भवन, नई दिल्ली-1

9. **साहित्य सेतु सागर**(सितंबर 2002)
संपादक : प्रभाकर शेजवाडकर
प्रकाशन : कला वैभव, परवरी गोवा,एस० टी-6, सपना पैरेडाइज, मेसिंगवाडी, पो०-सांताकुंज, गोवा-403005

10. **सदीनाम** (अंक-6 नवंबर 2002)
संपादक : जितेन्द्र ज़ितांशु
प्रकाशक : सनत कुमार शर्मा, पोपुलर आर्ट्स प्रिंटर्स, 1, मक्ताराम बाबू सेकेन्ड लेन, कोलकाता-7

पत्रिकाएँ:

11. **कविताश्री** (दिसंबर 2002)
संपादक : नलिनीकान्त, अण्डाल, पश्चिम बंगाल, पिन-713321

12. **गुर्जर राष्ट्रवाणी** (दिसंबर 2002)
संपादक : अरविंद जोषी, प्रकाशक: गुजरात प्रांतीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, राष्ट्रभाषा हिंदी भवन, एलिस बिज, अहमदाबाद-6

13. **हम सब साथ-साथ** (दिसंबर 2002)
संपादक: श्रीमति शशि श्रीवास्तव, प्रकाशक: 175 ए, आनंदपुर धाम, करावला दिल्ली-81

14. **क्राईम फ्री इंडिया** (नवंबर 2002)
संपादक: जसबीर आर्य, प्रकाशन: 94, शहीद भगत सिंह प्लेस, गोल मार्केट, नई दिल्ली-65

15. **गोलकोण्डा दर्पण** (नवंबर 2002)
संपादक:गोविंद अक्षय,प्रकाशन: 13-6-411/2, रामसिंह पुरा, कारवान, हैदराबाद-06.

16. **संकल्प रथ** (नवंबर-दिसंबर 2002)
संपादक: राम अधीर, प्रकाशन: 108/1, शिवाजीनगर, भोपाल, मध्यप्रदेश

17. **देव दीप** (2001-2002)
संपादक: दयाशंकर आर्य, प्रकाशन: 2519/39, अध्युदयनगर, पटेल टैंक रोड, मुंबई-400033.

'वंदेमातरम' दूसरा सबसे अधिक लोकप्रिय गीत

15 अगस्त 1947 की मध्य रात्रि संसद के विशेष अधिवेशन में जहाँ आजाद भारत की घोषणा हुई थी बंकिमचंद चट्टोपाध्याय रचित 'वंदेमातरम' जिस गीत को विधिवत राष्ट्रगीत के तौर पर पहली बार सरोजनी नायडू ने गाया था, वह दुनिया का दूसरा सबसे अधिक लोकप्रिय गीत माना गया है। वास्तव में देश के लिए यह बड़े सम्मान और गौरव की बात है कि भारत का राष्ट्रगीत विदेशों में धूम मचा कर लोकप्रियता की ऊँचाइयाँ छू रहा है। प्रत्येक भारतवासी इस सम्मान से गौरवान्वित महसूस करते हुए इसके रचयिता एवं वाणी देनेवाली महान विभूतियों को नमन करता है! कितना अच्छा होता यदि ऐसे ही सम्मान से भारत की जनभाषा और राष्ट्रभाषा हिंदी को भी सम्मानित किया जाता!

त्रिमूर्ति ज्वेलर्स

बाईपास रोड, चास (बोकारो)
दूरभाष 65769, फैक्स 65123

****

त्रिमूर्ति अलंकार

त्रिमूर्ति पैलेस, (रूपक सिनेमा के पूरब)
बाकरगंज पटना 800004
दूरभाष 662837

आधुनिक आभूषण के निर्माता नए डिजाइन, शुद्ध सोने चाँदी के तथा हीरे के गेहनो का प्रमुख प्रतिष्ठान

परीक्षा प्रार्थनीय
सुरेश, राजीव एंव सुनील

विचार दृष्टि

समाचार पत्र रजिस्ट्रेशन (केन्द्रीय कानून 1956 नियम 8) के अनुसार **विचार दृष्टि** से संबंधित विवरण:

प्रपत्र -4

1	प्रकाशक का नाम	:	सिद्धेश्वर
2	प्रकाशन का स्थान	:	दिल्ली
3	प्रकाशन- अवधि	:	त्रौमासिक
4	मुद्रक का नाम	:	सिद्धेश्वर
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	'दृष्टि', 6 विचार विहार, यु -207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली.92
5	प्रकाशक का नाम	:	सिद्धेश्वर
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	'दृष्टि', 6 विचार विहार, यु -207,शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली.92
6	संपादक का नाम	:	सिद्धेश्वर
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1
7	मालिक का नाम व पता	:	सिद्धेश्वर, 'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1

मै **सिद्धेश्वर** यह प्रमाणित करता हूँ कि मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार उपयुक्त विवरण सही है।

ह.

तिथि : 1 जनवरी, 2003

(सिद्धेश्वर)
प्राकाशक

राष्ट्रीय अधिवेशन : बोलते चित्र

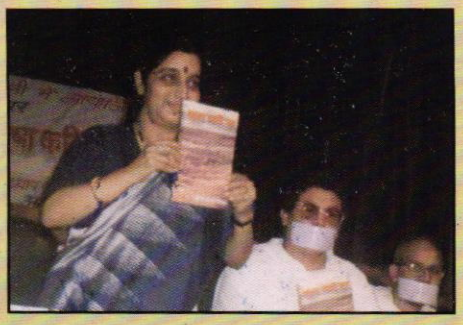
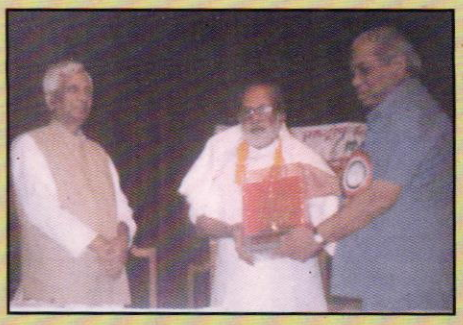

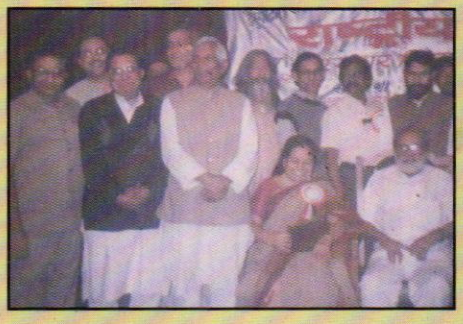

16 एवं 17 नवंबर 2002

राजेंद्र भवन, नई दिल्ली

वर्ष : 5 अंक : 14 जनवरी-मार्च 2003 R.N.I.Regd. NO. DEL HIN/1999/791

विचार दृष्टि

राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी

मुद्रक : **नैनदीप प्रिन्टर्स**, दिल्ली–6